CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

॥ ॐ नमः कृष्णद्वैपायनाय ॥

भगवान् वेदव्यास

(व्यक्तित्व-कृतित्व एवं जीवनदर्शन)

संकलन एवं सम्पादन

डॉ॰ नारायण दत्त शर्मा

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय कला केन्द्र, नई दिल्ली

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

9-5

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

॥ ॐ नमः कृष्णद्वैपायनाय ॥

भगवान् वेदव्यास

(व्यक्तित्व-कृतित्व एवं जीवनदर्शन)

संकलन एवं सम्पादन

डॉ॰ नारायण दत्त शर्मा

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय कला केन्द्र, नई दिल्ली

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्रकाशक

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय कला केन्द्र
11 मानसिंह रोड, नई दिल्ली 110001

प्रथम संस्करण, 2018 : 1000 प्रतियाँ

ISBN : 978-93-80935-80-5

© इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय कला केन्द्र

भगवान् वेदव्यास

(व्यक्तित्व-कृतित्व एवं जीवनदर्शन)

संकलन एवं सम्पादन

डॉ॰ नारायण दत्त शर्मा

टाईपसेटिंग : राम कृष्ण

आवरण सज्जा एवं मुद्रक : श्रीवाल एडवरटाईजिंग एण्ड डिजाइनिंग

मूल्य : 225/- रुपये

इस पुस्तक के सर्वाधिकार सुरक्षित हैं। प्रकाशक की लिखित अनुमति के बिना इसके किसी भी अंश की, फोटोकॉपी एवं रिकार्डिंग सहित इलेक्ट्रॉनिक अथवा मशीनी, किसी भी माध्यम से अथवा ज्ञान के संग्रहण एवं पुनर्प्रयोग की प्रणाली द्वारा, किसी भी रूप में, पुनरुत्पादित एवं संचारित-प्रसारित नहीं किया जा सकता।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पुरोकथन

केंद्र के कलाकोश का वार्षिक उत्सव व्यासपूर्णिमा को मनाया जाना उस परंपरा का स्मरण है जो लोकोत्तर वेदव्यास से शुरु होती है। डॉ॰ नारायण दत्त शर्मा ने एक अध्यवसाय किया है। जिसके परिणाम स्वरूप यह पुस्तक 'भगवान् वेदव्यास' उपलब्ध हो सकी है। इसमें वेदव्यास की वह कथा है जो महाभारत में हर पन्ने पर अंकित है। उससे ही चुन-चुन कर नारायण दत्त शर्मा ने एक शब्दचित्र खींचा है। जिससे वेदव्यास से पाठक परिचित हो सकते हैं। यह प्रारंभ है। लेकिन प्रारंभ अत्यंत प्रभावी और प्रेरणास्पद है। पुस्तक के हर पन्ने पर संदर्भ दिया गया है। इससे पुस्तक की प्रामाणिकता स्वयं सिद्ध है।

वेदव्यास को जानना भारत की ज्ञान गंगा में गोते लगाने जैसा है। ज्ञान गंगा है। इसलिए इसका कोई भगीरथ भी होगा। वे ही वेदव्यास हैं। पुराविदों ने अथक प्रयास किए, पर वे विफल रहे और नहीं नाप सके कि व्यास इतिहास की तारीखों में कहाँ खड़े हो सकते हैं। कोई कहता है कि विक्रम संवत् से तीस शताब्दी पूर्व से लेकर पंद्रह शताब्दी पूर्व तक के किसी युग में व्यास थे। पुराण हमारे इतिहास की महागाथा है। उनमें अठारह व्यासों की परंपरा मिलती है। ब्रह्मा से कृष्ण द्वैपायन तक। विद्वान् पुराविद् वासुदेव शरण अग्रवाल ने लिखा है कि 'ये मुख्यत: पुराणों के प्रवचनकर्ता रहे होंगे।' जिस वेदव्यास से यह पुस्तक परिचित कराना चाहती है उनको हमें वासुदेव शरण अग्रवाल के इस कथन से जानना चाहिए। 'हां, जय नामक उत्तम इतिहास के रचने वाले अमितौजा महामुनि व्यास, जिनका नाम अठारह व्यासों के अंत में आता है, अवश्य ही हमारे चिरपरिचित वे पुराण मुनि हैं जो कुरु पांडव युग

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

में इस पृथ्वी पर बदरिकाश्रम और हस्तिनापुर के बीच आते-जाते थे। हिमालय के रम्य शिखर पर जहां नर-नारायण नामक दो पर्वत हैं, वहां भागीरथी के समीप विशाला बदरी नामक स्थान में व्यास ने अपना आश्रम बनाया था। आज भी बदरी नारायण के इस प्रदेश के दर्शन के लिए प्रति वर्ष सहस्रों यात्री जाते हैं। विशाला बदरी के समीप ही आकाश गंगा है जहां व्यास का चंक्रमण (घूमने का) स्थान था। यह स्थान हरिद्वार से लगभग एक मास की पैदल यात्रा के बाद आता था (आज कुछ घंटों में ही वहां पहुंच सकते हैं)। उसी हिमवत् पृष्ठ पर व्यास का आश्रम था, जिसके कण-कण में दिव्य तप की भावना ओत-प्रोत थी। वहां व्यास ने चार प्रमुख शिष्यों को वैदिक संहिताओं का अध्ययन कराया। पैल ने ऋग्वेद, वैशम्पायन ने यजुर्वेद, जैमिनि ने सामवेद और सुमन्तु ने अथर्ववेद की संहिताओं का पारायण किया। कहा जाता है कि स्वयं व्यास ने अत्यधिक परिश्रम से समस्त वैदिक मंत्रों का वर्गीकरण करके चार संहिताओं का विभाग किया, और इस साहित्यिक साधना के कारण ही उनका नाम वेदव्यास प्रसिद्ध हुआ। इसी आश्रम में कुरु-पांडवों के युद्ध की समाप्ति पर व्यास जी ने तीन वर्षों के सतत अध्यवसाय के बाद महाभारत नाम श्रेष्ठ काव्यात्मक इतिहास की रचना की।'

हम जानते हैं कि महाभारत को पांचवा वेद माना जाता है। कथा यह है कि व्यास का जन्म नाम कृष्ण था। महाभारत युग में दो कृष्ण हुए। एक वासुदेव कृष्ण और दूसरे द्वैपायन कृष्ण। यमुना नदी के एक द्वीप में जन्म होने के कारण वे द्वैपायन के नाम से भी जाने गए। उनकी माता सत्यवती थी और पिता मुनि पराशर। अपनी माता सत्यवती के आदेश से द्वैपायन कृष्ण या मुनि व्यास ने ही कौरव और पांडव वंश का बीज

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

बोया। वे धृतराष्ट्र, पांडु और विदुर के जनक थे। इसलिए भी मुनि व्यास का जीवनभर हस्तिनापुर के उत्थान पतन से गहरा नाता बना रहा। पराशर पुत्र होने के कारण व्यास का ही एक नाम पाराशर्य था। बदरी आश्रम में रहने के कारण व्यास का दूसरा नाम बादरायण मुनि भी था। इसीलिए वेदांत सूत्रों को बादरायण सूत्र की संज्ञा मिली। वेदांत सूत्र में उपनिषदों का अध्यात्म समाया हुआ है।

लोकमानस में तो व्यास वे हैं जो महाभारत के रचयिता हैं। भारतीय जीवन दर्शन में धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की जो आधार शिला है वह महाभारत की देन है। महाभारत में एक इतिहास दृष्टि है। वह भारत की है। भारतीयता की है। उसकी एक पद्धति व्यास ने बनाई। अफसोस यह है कि इतिहास लेखन में उस पद्धति को हमने भुला दिया है। विस्मरण बहुत गहरा है। महाभारत की पद्धति को स्मरण करने में वेदव्यास का स्मरण सहायक हो सकता है। तब भारत पश्चिम की इतिहास दृष्टि से उबरेगा और अपने मूल की तरफ लौटना शुरु करेगा। मूल की तरफ लौटना ही जीवन को पवित्रता से भरता है। तारीखें और घटनाएं पश्चिम की इतिहास दृष्टि का आधार होती हैं। वेदव्यास ने जो महाभारत लिखा वह प्राचीन भारत का विश्वकोष बन गया है। विद्वानों ने महाभारत की तुलना में यूनान के इलियड और ओडेसी, स्कैंडिनेविया के प्राचीन एड्डा और सागा को अत्यंत प्राथमिक और पिछड़ा हुआ माना है। इतिहास में नीति और धर्म न हो तो वह निरर्थक है। इस दृष्टि से महाभारत अनुपम है। इसमें नीति और धर्म का अक्षय भंडार है। गाथा शास्त्र की अनंत सामग्री है। इसी बल पर महाभारत ग्रंथ अजेय है। महाकाल है। अनंत है। व्यास ने जो रचा वह ऐसी परंपरा का प्रारंभ था जिससे व्यास गद्दी स्थापित हुई। इतिहास के झंझावात से अप्रभावित और

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

क्षोभरहित अवस्था का ही दूसरा नाम व्यास गद्दी है। उसी प्रतीक की ज्ञान परंपरा को केंद्र का कलाकोश बढ़ाने में तत्पर है। ज्ञान अपनी भाषा में हो तो भाषा का भाव व्याप्त होता है। 'भगवान् वेदव्यास' से केंद्र इस दिशा में सराहनीय कदम उठा रहा है। इसे आप भी मानेंगे।

रामबहादुर राय

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्रस्तावना

भारतीय जीवन पद्धति में गुरु का बहुत महत्व रहा है। गुरु का सान्निध्य और मार्गदर्शन सिर्फ शिक्षण या अध्ययन काल तक ही सीमित नहीं माना जाता। गुरु का सान्निध्य और मार्गदर्शन तो व्यक्ति को जीवन पर्यन्त वांछित है। जिसे अपने जीवन में जितने ज्यादा समय तक गुरु का सान्निध्य मिलता है वह उतना ही भाग्यशाली माना जाता है। यह भी माना गया है कि अच्छे शिष्य को अपना गुरु खोजना नहीं पड़ता। श्रेष्ठ गुरु अपने अच्छे शिष्य को स्वयं खोज लेते हैं। किसी भी व्यक्ति के विकास में, उसके जीवन संचालन में गुरु का अस्तित्व सहज परिलक्षित होता है। यह भी कहा जाता है कि गुरु का मार्गदर्शन प्राप्त किये बिना जीवन पूर्ण नहीं होता। गुरु ही वह सेतु है जो एक साधारण मनुष्य का तादात्म्य उस परम तत्व के साथ करवाता है। इसलिये कहा गया "बलिहारी गुरु आपनो गोविन्द दीन्हो बताय।"

गुरु की महिमा पर आज तक न जाने कितने ग्रंथ और पुस्तकों की रचना हुई है। न जाने कितने लोग अपने गुरु की महत्ता पर ग्रंथ लिखकर अपने जीवन को धन्यता की ओर ले जाते हैं। अनुभव, शिक्षा, दृष्टांत और चमत्कार इन चारों प्रकार के संदर्भ हमें गुरु की वंदना में मिलते हैं। यह व्यक्ति विशेष पर निर्भर करता है कि वह गुरु के कौन से तत्व को आत्मसात करे। गुरु की महत्ता के अलग अलग आयामों का अनुभव प्रत्येक व्यक्ति का अपना अलग है, निराला है। लेकिन सभी अपने गुरु की आराधना के लिये गुरु पूर्णिमा का उत्सव बड़े धूमधाम से मनाते हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

।। प्रस्तावना ।।

गुरु पूर्णिमा यानि व्यास पूर्णिमा का हमारे जीवन में क्या महत्व है और इसका प्रारंभ कब और कैसे हुआ, यह जानने की जिज्ञासा प्रायः हर भारतीय में होगी। वस्तुतः हम सब भी ऐसा कोई उत्सव, व्रत त्यौहार मनायें जिसका संदर्भ हमारी सनातन परंपरा से है तो उसकी पृष्ठभूमि, औचित्य और आविर्भाव के बारे में जानना रोचक तथा ज्ञानवर्धक होता है।

गुरु पूर्णिमा या व्यास पूर्णिमा के इसी महत्व को रेखांकित करने का प्रयास प्रस्तुत पुस्तक कर रही है। साथ ही इसमें महर्षि व्यास के बारे में संक्षिप्त जानकारी भी दी गई है जिसका उल्लेख शास्त्रों में मिलता है। महर्षि वेदव्यास को महाभारत का जनक माना जाता है। संदर्भ ये भी है कि उन्होंने महाभारत में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका भी निभाई है। उनके महाभारत पर प्रभाव का संक्षिप्त लेखा जोखा इस पुस्तक में है जिससे हमें उनके व्यक्तित्व की विराटता के दर्शन होते हैं। "भगवान् वेदव्यास" के रूप में प्रतिष्ठित, व्यास जी के व्यक्तित्व, कृतित्व और जीवन दर्शन पर केन्द्रित यह पुस्तक उनके अनावश्यक और अतिरंजनापूर्ण महिमामंडन से बचते हुये उनके संदर्भ में शास्त्रीय प्रमाणों पर आधारित जानकारी प्रस्तुत करती है।

महर्षि वेदव्यास की महाभारत में क्या भूमिका रही तथा उनका संदर्भ कहां और कैसे आया इसका विवरण इस पुस्तक में है, जो विभिन्न ग्रंथों से प्राप्त जानकारी के अनुसार संकलित है। आदि पर्व से लेकर स्वर्गारोहण पर्व तक महाभारत में महर्षि वेदव्यास जिस भी रूप में प्रकट हुये हैं, उसका सारा विवरण एक स्थान पर रखने का प्रयास इस पुस्तक में किया गया है। इसी प्रकार महाभारत क्यों और कैसे

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

लिखा गया, इसका भी विवरण इस पुस्तक में है। महाभारत के लेखक के रूप में महर्षि वेदव्यास का नाम आता है और यह सर्वविदित तथ्य है। लेकिन उसके लेखन की पृष्ठभूमि क्या थी उसका शास्त्रोक्त संदर्भ सहित इस पुस्तक में दिया गया है।

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय कला केन्द्र के कलाकोश विभाग के विद्वान् डॉ॰ नारायण दत्त शर्मा जी ने इसे अत्यन्त परिश्रम से संकलित किया है। साथ ही सभी संदर्भों को यथास्थान उद्धृत भी किया है। हमारा विश्वास है कि इस पुस्तक के माध्यम से जिज्ञासु पाठकों को तथा शोधार्थियों को महर्षि वेदव्यास तथा गुरु पूर्णिमा के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी संदर्भ सहित उपलब्ध हो सकेगी।

डॉ॰ सच्चिदानंद जोशी
सदस्य सचिव
इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय कला केन्द्र

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भारतभूमि, भारतवासी
एवं
भारतीय संस्कृतिको समर्पित

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

दो शब्द

मूर्त एवं अमूर्त प्राचीन भारतीय कलाओंसे सम्बन्धित ग्रन्थोंके शोध एवं प्रकाशनके लिए समर्पित इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय कला केन्द्रके कलाकोश विभागका वार्षिक महोत्सव प्रतिवर्ष आषाढ़ मासके शुक्लपक्ष की पूर्णिमाको मनाया जाता है। यह तिथि भारतीय सनातन संस्कृतिके आधारस्तम्भ परम योगैश्वर्यसम्पन्न विष्ण्वंशावतार महर्षि कृष्णद्वैपायन वेदव्यासके प्राकट्यसे सम्बन्धित है। भगवान् वेदव्यास अपने दिव्य व्यक्तित्व-कृतित्वके कारण भारतीय जनमानसमें गुरु रूपमें सर्वमान्य एवं पूजनीय हैं। अतः आषाढ़ पूर्णिमा व्यासपूर्णिमा तथा गुरुपूर्णिमाके रूपमें मनाई जाती है।

भगवदीय प्रेरणासे जिन लोकोत्तर विभूतिसम्पन्न ऋषियोंने शास्त्रोंका प्रणयन किया, वे शास्त्र वस्तुतः कलाके सम्पूर्ण पक्षको उजागर करने वाले आधारभूत ग्रन्थ हैं तथा जिन मनीषी जनोंने जीवनभर गहन अध्ययन करके ऐसे ग्रन्थोंके सम्पादनका कार्य अपने जिम्मे लिया है, उन सबको कलाकोशके वार्षिकोत्सवके दिन हम सब हृदयसे स्मरण करते हैं और स्मरण करते हुए मनमें यह भावना होती है कि भगवान् वेदव्यास, आर्ष ग्रन्थोंके प्रणेता ऋषिजन तथा कलामूलशास्त्र ग्रन्थमालाके अन्तर्गत सम्पादन करने वाले विद्वान् - ये तीनों गुरु रूपमें समादरणीय हैं, अतः इस दृष्टिसे कलाकोश विभागके लिए व्यासपूर्णिमाका दिन अत्यन्त महत्त्वपूर्ण सिद्ध होता है।

पिछले वर्ष आयोजित कलाकोशके वार्षिक महोत्सवके अवसरपर इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय कला केन्द्रके न्यासके अध्यक्ष सम्माननीय श्री रामबहादुर राय जी के हृदयके भाव उनकी जिह्वापर इस रूपमें प्रकट

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हुए कि अगले वर्ष इस दिन कोई छोटी पुस्तक छपकर आनी चाहिए। कुछ समयके अनन्तर कलाकोशकी विभागाध्यक्ष डॉ॰ (श्रीमती) अद्वैतवादिनी कौलने पुस्तकके लेखनके लिए मुझसे चर्चा की तो मैंने सहर्ष यह कार्य स्वीकार कर लिया।

मनमें भाव उठा तो एक दिन सीधे परम श्रद्धेय श्री रामबहादुर राय जी के पास पहुँचा और उनका निर्देशन मिलनेपर उत्साहके साथ संकलन, लेखन आदिका कार्य प्रारम्भ हुआ।

"भगवान् वेदव्यास (व्यक्तित्व-कृतित्व एवं जीवनदर्शन)" यह नाम निश्चित हुआ। इस पुस्तकमें भगवान् वेदव्याससे सम्बन्धित विषयको चार लेखोंमें विभक्त किया है, जिनमें पहला लेख "महाभारतमें भगवान् वेदव्यासकी भूमिका", दूसरा लेख "महाभारत : भगवान् व्यासकी अनुपम कृति", तीसरा लेख "विष्णुके अंशावतार वेदव्यासकी गुरु रूपमें प्रतिष्ठा" तथा चौथा लेख "व्यासपूर्णिमा और गुरुपरम्परा" है।

महाभारत एवं पुराणोंमें भगवान् वेदव्यासके बारेमें बार-बार मुख्य रूपसे इतना ही उल्लेख मिलता है कि प्रत्येक द्वापरमें वेदोंके विभाजनके लिए, महाभारतके लेखनके लिए तथा अट्ठारह पुराणोंके प्रणयनके लिए विष्णुके अंशावतारके रूपमें वेदव्यासका जन्म होता है, लेकिन केवल ऐसा नहीं है। उनका अपना दिव्य चरित्र भी है, जिसकी झाँकी महाभारतमें मिलती है। यद्यपि वेदव्यास अपने आश्रममें वेद-वेदांगोंका अध्ययन-अध्यापन करते हुए तापसी जीवन बिताते हैं, लेकिन एक दृष्टि उनकी अपने पुत्रों-पौत्रोंपर तथा अन्य जनोंपर रहती है और जब उनको लगता है कि मेरी आवश्यकता है तो वे अपनी समुचित भूमिका निभाते हैं। वे अपनी विद्याका दान देते हैं, उपदेश देते हैं, परिवारमें किसी सदस्यके विपत्तिमें पड़नेपर उन्हें समझाने-बुझानेका कार्य करते हैं तथा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आवश्यकता पड़नेपर अपनी दिव्य शक्तिका भी प्रयोग करते हैं। भगवान् वेदव्यासकी इन्हीं भूमिकाओंका दिग्दर्शन करानेका प्रयास मैंने अपने पहले लेखमें किया है तथा इसके लिए महाभारतको आधारभूत ग्रन्थ चुना। महाभारतकी महत्तासे तो सभी परिचित हैं लेकिन तत्सम्बन्धी तथ्योंका संकलन करके उन्हें पिरोनेका काम दूसरे लेखमें किया गया है। यही पद्धति तीसरे और चौथे लेखमें भी अपनाई है। अब जैसा रूप इस पुस्तकका बन पाया है, वह सुधीजनोंके सम्मुख है।

इस पुस्तकके साकार रूप ग्रहण करनेके मूलमें परमादरणीय श्री रामबहादुर राय का सत्संकल्प है, सर्वप्रथम हृदयसे आपके प्रति कृतज्ञता व्यक्त करता हूँ। आपकी अहैतुकी कृपासे जो विद्वत्तापूर्ण पुरोकथन प्राप्त हुआ उससे इस पुस्तिकाकी गरिमा एवं शोभा द्विगुणित हो गयी है। पुनः आपके प्रति मैं हार्दिक कृतज्ञताञ्जलि समर्पित करता हूँ।

परमादरणीय श्रीसदस्य सचिव डॉ॰ सच्चिदानन्द जी जोशीके प्रति हार्दिक कृतज्ञता व्यक्त करता हूँ, जिनकी प्रेरणा और उत्साहसे यह कार्य सम्पन्न हो पाया। इससे अधिक मुझे और क्या सहायता मिल सकती है कि श्रीसदस्य सचिव जी की अनुकम्पासे अल्प समयके लिए एक प्रोजेक्ट एसिस्टेण्ट् की नियुक्ति हुई। यथासमय इस पुस्तिकाके लिए आपसे प्रस्तावना प्राप्त हुई। व्यास विषयको निमित्त बनाकर अर्थगाम्भीर्य लिए हुए अपना अनुभव छोटे-छोटे वाक्योंमें व्यक्त किया है जो सचमुच रोमाञ्च कर देने वाला है। आपकी इस महती कृपाके लिए पुनः पुनः हार्दिक कृतज्ञता।

डॉ॰ अद्वैतवादिनी कौल (विभागाध्यक्ष, कलाकोश) ने मुझे इस योग्य समझा और परम पुण्यदायक इस कार्यमें मुझे नियुक्त किया।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

॥ दो शब्द ॥

डॉ॰ कौलके प्रति हार्दिक कृतज्ञता व्यक्त करता हूँ। प्रतिभा आर्या (प्रोजेक्ट एसिस्टेण्ट्, कलाकोश) ने पुस्तकसे सम्बन्धित शोधकार्यमें मेरी सहायता की। एतदर्थ वे धन्यवादकी पात्र हैं।

कलानिधि विभाग पुस्तकालयको विस्मृत नहीं कर सकता, जहाँ मुझे अपेक्षित ग्रन्थोंका अध्ययन सुलभ हुआ। इस कार्यमें सहयोग देनेके लिए श्रीमती रञ्जना चक्रवर्ती (सहायक पुस्तकालय तथा सूचना ऑफिसर) के प्रति हार्दिक कृतज्ञता अभिव्यक्त करता हूँ।

अपने कार्यमें दक्ष तथा परिश्रमी श्री राम कृष्ण (डेटा एण्ट्री ऑपरेटर) ने अशुद्धि रहित टाईप सैटिंगका कार्य कुशलतापूर्वक किया, इस सहयोगके लिए वे धन्यवादके पात्र हैं।

इस पुस्तकके निर्माणमें गीताप्रेस गोरखपुरसे प्रकाशित महाभारत (छह खण्ड) का उपयोग सबसे अधिक हुआ है। अतः इस ग्रन्थके प्रकाशकके प्रति हार्दिक धन्यवाद समर्पित करता हूँ।

अन्तमें मेरा विनम्र निवेदन है, इस पुस्तकके माध्यमसे भगवान् वेदव्यासकी जो भी दिव्य भूमिका अपने उज्ज्वल रूपमें प्रकट हुई है, सभी पाठक वृन्द उससे लाभ उठायेंगे तथा जो भी कमियाँ रह गई होंगी, अपने सुझाव देकर उनसे परिचित करायेंगे।

योग दिवसपर परम योगैश्वर्यसम्पन्न पराशरनन्दन भगवान् वेदव्यासका स्मरण करते हुए –

नारायण दत्त शर्मा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ग्रन्थसंक्षेप सूची

अग्निपु॰	अग्निपुराण
अष्टा॰	अष्टाध्यायी
आश्वगृह्यसू॰	आश्वलायनगृह्यसूत्रम्
गणेशपु॰	गणेशपुराण
गरुडपु॰	गरुडपुराण
भविष्यपु॰	भविष्यपुराण
श्रीमद्भागवत॰	श्रीमद्भावगतमहापुराण
मत्स्यपु॰	मत्स्यपुराण
महाअनुशासन॰	महाभारतअनुशासनपर्व
महाआदि॰	महाभारतआदिपर्व
महाआश्रमवासिक॰	महाभारतआश्रमवासिकपर्व
महाआश्वमेधिक॰	महाभारतआश्वमेधिकपर्व
महाउद्योग॰	महाभारतउद्योगपर्व
महाकर्ण॰	महाभारतकर्णपर्व
महाद्रोण॰	महाभारतद्रोणपर्व
महाभीष्म॰	महाभारतभीष्मपर्व
महामहाप्रस्थानिक॰	महाभारतमहाप्रस्थानिकपर्व

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

।। ग्रन्थसंक्षेप सूची ।।

महामौसल॰	महाभारतमौसलपर्व
महावन॰	महाभारतवनपर्व
महाशल्य॰	महाभारतशल्यपर्व
महाशान्ति॰	महाभारतशान्तिपर्व
महासभा॰	महाभारतसभापर्व
महासौप्तिक॰	महाभारतसौप्तिकपर्व
महास्त्री॰	महाभारतस्त्रीपर्व
मार्कण्डेयपु॰	मार्कण्डेयपुराण
विष्णुपु॰	विष्णुपुराण
शिवपुउमा॰	शिवपुराणउमासंहिता
शिवपुवायवीय॰	शिवपुराणवायवीयसंहिता

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

विषय सूची

पुरोकथन i-iv

प्रस्तावना v-vii

दो शब्द viii-xi

ग्रन्थसंक्षेप सूची xii-xiii

महाभारतमें भगवान् वेदव्यासकी भूमिका 1–106

वेदव्यासके वरदानसे गान्धारीको सौ पुत्रोंकी प्राप्ति - 2, वनमें पाण्डवोंको व्यासका दर्शन एवं मार्गनिर्देशन - 4, पाण्डवोंके समक्ष व्यासके द्वारा द्रौपदीके पूर्व जन्मका कथन - 5, दक्षिण पाञ्चालकी ओर जाते हुए पाण्डवोंसे व्यासकी पुनः भेंट - 6, भगवान् व्यासकी सम्मतिसे पाँचों पाण्डवोंके साथ द्रौपदीका विवाह–7, युधिष्ठिरके राज्याभिषेकके समय तथा इन्द्रप्रस्थके निर्माणके समय व्यासकी उपस्थिति - 10, क्षत्रियोंके विनाशसे सम्बन्धित व्यासकी भविष्य-वाणी - 11, पाण्डवोंका वध करनेके लिए दुर्योधनादिका वनमें जानेको उद्यत होना तथा व्यासके द्वारा उन्हें रोकना - 12, व्यासके द्वारा धृतराष्ट्रको समझाना - 13, व्यास द्वारा प्रतिस्मृतिविद्या प्रदान करना - 15, काम्यक वनमें आकर पुनः व्यासका मिलना - 16, वनमें पाण्डवोंके पास व्यासका आगमन - 17, व्यासकी उपस्थितिमें सञ्जय द्वारा धृतराष्ट्रके प्रश्नोंका उत्तर देना - 20, व्यास द्वारा धृतराष्ट्रको चेतावनी देना–22, व्यास द्वारा सञ्जयको वर प्रदान–23, व्यास द्वारा अपशकुनोंका वर्णन - 24, व्यासका धृतराष्ट्रको समयोचित उपदेश - 27, व्यास द्वारा विजयसूचक शुभ शकुनोंका

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वर्णन - 28, सञ्जय द्वारा व्यासका स्मरण - 30, व्यासकी कृपासे गीताका श्रवण - 31, व्यासकी कृपासे सञ्जयको आकाशवाणीका सुनाई देना - 31, भीष्मको व्यासके माध्यमसे कर्णके जन्मका वृत्तान्त प्राप्त होना - 32, अभिमन्युकी मृत्युपर विलाप करते हुए युधिष्ठिरको सान्त्वना देनेके लिए व्यासका आगमन - 33, व्यासकी भविष्यवाणी - 35, व्यासकी कृपासे द्रोणाचार्यके ब्रह्मलोक गमनको सञ्जयके द्वारा प्रत्यक्ष रूपसे देखा जाना - 36, कृष्ण और अर्जुनपर आग्नेयास्त्रका प्रभाव न पड़ना तथा अश्वत्थामाके चिन्तित होनेपर व्यास द्वारा उसका कारण समझाना - 38, व्यास द्वारा अर्जुनके प्रश्नका समाधान - 40, महामुनि व्यासकी वाणीका प्रभाव - 41, व्यासके कहनेसे सञ्जयका कैदसे छूटना - 42, सञ्जयको व्यास द्वारा दी गई दिव्य दृष्टिका नष्ट होना - 43, अश्वत्थामा और अर्जुन द्वारा छोड़े गए ब्रह्मास्त्रोंको शान्त करानेके उद्देश्यसे नारद एवं व्यासका आगमन - 44, कृष्ण द्वारा अश्वत्थामाको दिए गए शापका व्यासके द्वारा समर्थन - 47, धृतराष्ट्रका विलाप तथा व्यासका समझाना - 48, पाण्डवोंको शाप देनेके लिए उद्यत हुई गान्धारीको व्यासके द्वारा समझाना - 51, व्याससे गान्धारीको दिव्य दृष्टिकी प्राप्ति - 53, युधिष्ठिरका शोकमग्न होना - 54, व्यास द्वारा युधिष्ठिरको समझाना तथा राजधर्ममें ही दृढ़ रहनेकी आज्ञा देना - 55, युधिष्ठिरके सम्मुख भीष्मका व्यास एवं शुकके संवादका कथन - 64, सृष्टिके प्रारम्भमें ब्रह्मकी सत्ता - 65, कालज्ञान-निर्णय - 65, युगानुरूप विशेषता - 66, सृष्टिकी उत्पत्तिका क्रम - 67, ब्राह्मणोंका कर्त्तव्य - 70, सांख्य एवं योगका प्रतिपादन - 72, सृष्टिके समस्त कार्योंमें बुद्धिकी प्रधानता - 75, प्राणियोंकी श्रेष्ठताके तारतम्यका निरूपण - 76, ज्ञानका साधन - 79, कर्म

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

और ज्ञानमें अन्तर - 81, शुकदेवको सावधान करनेके लिए व्यासका उन्हें उपदेश - 83, वेदाध्ययन विधि - 86, व्यास द्वारा शुकदेवको गौओंकी श्रेष्ठताका प्रतिपादन - 88, व्यास और मैत्रेय संवाद - 88, व्यास द्वारा धर्मके गूढ़ रहस्योंका प्रतिपादन - 90, व्यासके कहनेपर भीष्मके द्वारा युधिष्ठिरको हस्तिनापुर जानेके लिए आदेश - 90, भीष्मकी अन्त्येष्टिके समय व्यासकी उपस्थिति - 91, व्यास द्वारा युधिष्ठिरको समझाना - 93, उत्तराको व्यासके द्वारा पुत्रके तेजस्वी होनेका वरदान - 95, व्यासके द्वारा अश्वमेध यज्ञ करनेकी आज्ञा - 96, व्यास द्वारा अश्वमेधसे सम्बन्धित आवश्यक निर्देश - 96, यज्ञ आरम्भ करनेके लिए व्यासका आदेश - 98, अश्वमेधके अन्तमें व्यासका युधिष्ठिरको आशीर्वाद - 98, व्यासकी अनुमतिसे धृतराष्ट्रका वनगमन - 99, धृतराष्ट्रके द्वारा व्यास आश्रममें पहुँचकर वनवासकी दीक्षा - 100, कुरुक्षेत्रमें धृतराष्ट्रके आश्रममें व्यासका पधारना - 101, व्यास द्वारा तपके दिव्य बलसे कौरव-पाण्डव सेना इत्यादि को दिखलाना - 102, व्यासकी कृपासे जनमेजयको भी अपने पिताका दर्शन - 103, व्यासका धृतराष्ट्रसे युधिष्ठिर आदिको विदा करनेके लिए कहना - 104, द्वारकासे लौटनेपर अर्जुनका व्यासके आश्रममें पहुँचना - 104

महाभारत : भगवान् व्यासकी अनुपम कृति 107-128

घटित हुए कृत्योंके आधारपर व्यास द्वारा महाभारतकी रचना - 107, महाभारतके अनेक संस्करण, तदनुसार उसके अनेक नाम - 110, महाभारत एक इतिहास - 113, वेद एवं पुराणोंके बाद व्यास द्वारा महाभारतका प्रणयन - 115, महाभारतकी अध्ययनपरम्परा - 116, महाभारतमें विषय निरूपण - 117, महाभारतके लेखनमें गणेशका

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अमूल्य योगदान - 120, महाभारतका नामकरण - 121, महाभारतका प्रयोजन - 122, महाभारतकी विशेषताएँ - 123, महाभारतकी महिमा - 126, महाभारतका सारतत्त्व - 126

विष्णुके अंशावतार वेदव्यासकी गुरुरूपमें प्रतिष्ठा 129–136

व्यासपूर्णिमा और गुरुपरम्परा 137–140

सन्दर्भग्रन्थ सूची i-iii

व्यासमन्त्रः i

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

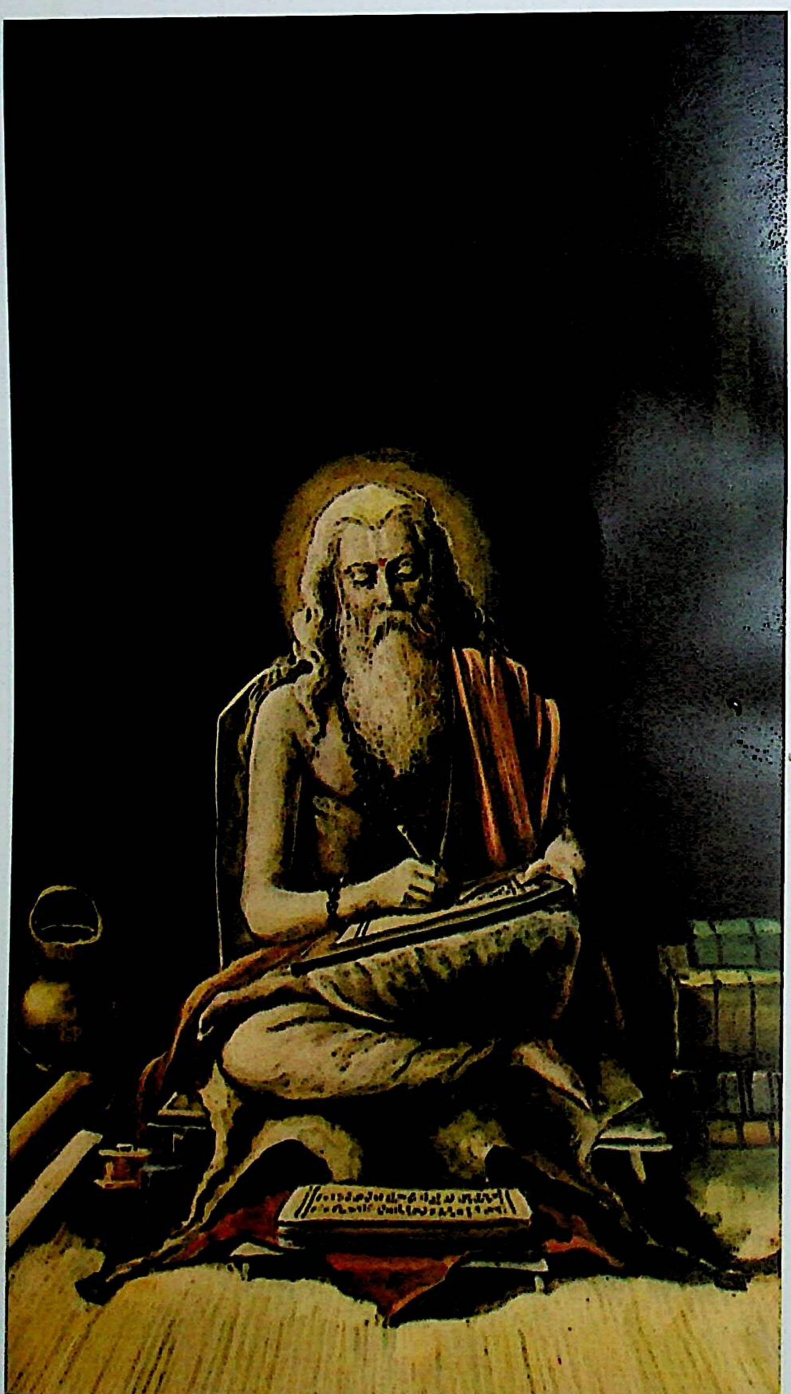

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

महाभारतमें भगवान् वेदव्यासकी भूमिका

शक्तिनन्दन पराशरके पुत्र, पाण्डवोंके पितामह, जन्म लेते ही जिन्होंने अपनी इच्छासे शरीरको बढ़ा लिया और माताकी आज्ञा लेकर तप करने चले गए, वेद-वेदाङ्ग तथा इतिहास सहित जिन्हें स्वतः ही परमात्म तत्त्वका ज्ञान प्राप्त हो गया, ऐसे महायशस्वी वेदव्यासकी क्या भूमिका रही अर्थात् जुएके कारण कौरवों और पाण्डवोंमें जो आपसमें फूट पड़ी और न्यायपूर्वक राज्य मांगनेपर जब पाण्डवोंको राज्य नहीं मिला, तब दोनों दलोंमें युद्ध छिड़ जानेपर जो क्षत्रियकुलका महाविनाश हुआ तथा जिसमें दुर्योधनकी मृत्युके पश्चात् पाण्डवोंको राज्य मिला, उस महाभारतके युद्धके समय वेदव्यासने स्वयं किस पक्षको महत्त्व दिया, किन्हें उपदेश दिया, अपनी विलक्षण बुद्धि एवं प्रतिभासे तथा तपसे उत्पन्न दिव्य शक्तिके सामर्थ्यसे वरदान देनेके कारण किसे उपकृत किया, विषम परिस्थितियोंमें किस प्रकार अपनी सूझ-बूझका परिचय दिया तथा प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूपसे कहाँ-कहाँ किस प्रसंगमें भगवान् वेदव्यासने अपनी सम्मति, सलाह, उपदेश तथा दिशा-निर्देश देकर अपनी विशिष्ट भूमिकाका परिचय दिया, उन सबका दिग्दर्शन कराना इस लेखका प्रयोजन है।

आदिपर्वसे लेकर स्वर्गारोहणपर्व तक महाभारतमें स्वयं वेदव्यास जिस रूपमें जो कुछ करते दृष्टिगोचर हो रहे हैं, क्रमशः यत्किंचित् उन्हें प्रस्तुत किया गया है, यही इस लेखकी संक्षिप्त प्रस्तावना है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

[वेदव्यासके वरदानसे गान्धारीको सौ पुत्रोंकी प्राप्ति]

यद्यपि पाण्डुकी सन्तानोंके जन्मके सन्दर्भमें वेदव्यासका कोई उल्लेख नहीं मिलता क्योंकि स्वयं कुन्तीने ही महर्षि दुर्वासाको प्रसन्न करके उनसे मन्त्र प्राप्त किया तथा उसी मन्त्रके प्रभावसे देवताओंके अंशके रूपमें युधिष्ठिर आदि पाँच पुत्रोंको जन्म दिया, किन्तु दुर्योधनादि सौ पुत्रोंके जन्मके पीछे भगवान् व्यासकी ही कृपा है, जिसका उल्लेख महाभारतके आदिपर्वमें इस प्रकार किया गया है –

एक बार किसी समय भूख एवं थकानसे त्रस्त होकर महर्षि व्यास धृतराष्ट्रके यहाँ आए। वहाँ गान्धारीने उनके भोजन एवं विश्रामकी ऐसी सुन्दर व्यवस्था की, जिससे परम सन्तुष्ट होकर उन्होंने गान्धारीको वर देनेकी इच्छा प्रकट की। व्यासके ऐसा कहनेपर गान्धारीने अपने पतिके समान उनसे सौ पुत्र माँगे।[1]

बादमें यथासमय गान्धारीने धृतराष्ट्रसे गर्भ धारण किया। गर्भ धारण किए हुए दो वर्ष बीत गए लेकिन प्रसव नहीं हुआ। इस बीच गान्धारीको यह समाचार भी मिला कि कुन्तीके गर्भसे प्रातःकालीन सूर्यके समान तेजस्वी पुत्रका जन्म हुआ है। उससे गान्धारीको बड़ा दुःख हुआ। धृतराष्ट्रको बिना बताए उसने अपने उदरपर चोट करके उस गर्भको गिरा दिया, जो लोहेके पिण्डके समान कड़ा था।[2] कड़ा होनेके कारण गान्धारीके मनमें उस पिण्डको फेंक देनेका विचार आया।

---

1. क्षुच्छ्रमाभिपरिग्लानं द्वैपायनमुपस्थितम्। तोषयामास गान्धारी व्यासस्तस्यै वरं ददौ। सा वव्रे सदृशं भर्तुः पुत्राणां शतमात्मनः (महाआदि॰ 114.7-8)।
2. ततो जज्ञे मांसपेशी लोहाष्ठीलेव संहता (महाआदि॰ 114.12)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

व्यासको इस बातका पता लगा तो उतावलीके साथ वे वहाँ आए और मांसपिण्डको देखकर गान्धारीसे पूछने लगे – तुम इस मांसपिण्डका क्या करना चाहती थी।[3]

व्यासके द्वारा ऐसा पूछनेपर गान्धारीने जो सच था, वह कह सुनाया कि कुन्तीको तेजस्वी पुत्रकी प्राप्ति हो गई और मैं दो वर्षसे गर्भ धारण किए हुए हूँ, लेकिन प्रसव नहीं हुआ। दुःखके कारण मैंने उदरपर आघात करके गर्भ गिरा दिया। आपने तो मुझे सौ पुत्र होनेका वरदान दिया था, परन्तु इतने दिनों बाद भी मेरे गर्भसे सौ पुत्रोंकी जगह यह मांसपिण्ड पैदा हुआ है।

इसपर व्यासने कहा कि यह सब मेरे वरदानके अनुसार ही हो रहा है। वरदानके विपरीत कभी अन्यथा नहीं हो सकता। मैंने मजाकमें भी अपने मुखसे झूठी बात नहीं निकाली, फिर वरदान देने आदि अवसरोंपर कही हुई मेरी बात झूठी कैसे हो सकती है।[4]

व्यासने गान्धारीको आदेश दिया कि तुम शीघ्र ही सौ कुण्डों (मटकों) की व्यवस्था करो तथा उन्हें घीसे भरवा दो। गुप्त स्थानमें उन्हें रखवाकर उनकी रक्षा करो। इस मांसपिण्डको ठण्डे जलसे सींचो। गान्धारीने जैसे ही ठण्डे जलसे उसको सींचा, उसी समय उसके सौ टुकड़े हो गए। वे अंगूठेके पोरुवेके बराबर सौ गर्भके रूपमें परिणत हो गए। गान्धारीने व्यासके निर्देशानुसार एक-एक गर्भको एक-एक कुण्डमें रखा और उन्हें गुप्त स्थानपर रखवाकर उनकी रक्षाकी पूरी व्यवस्था की। अब भगवान् व्यासने गान्धारीसे कहा – इतने ही दिन अर्थात् पूरे दो वर्षों

---

3. ततोऽब्रवीत् सौबलेयीं किमिदं ते चिकीर्षितम् (महाआदि॰ 114.14)।
4. वितथं नोक्तपूर्वं मे स्वैरेष्वपि कुतोऽन्यथा (महाआदि॰ 114.18)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तक प्रतीक्षा करनेके बाद इन कुण्डोंके ढक्कन खोल देना। ऐसा कहकर व्यास हिमालय पर्वतपर तपस्याके लिए चले गए।[5]

[वनमें पाण्डवोंको व्यासका दर्शन एवं मार्गनिर्देशन]

गान्धारीको सौ पुत्रोंका वरदान देनेके पश्चात् भगवान् व्यास पाण्डवोंको उस समय दर्शन देते हैं, जब धृतराष्ट्रके द्वारा युधिष्ठिर युवराजपद अभिषिक्त किये जाते हैं, उनके प्रति पुरवासियोंका अनुराग देखकर ईर्ष्याके कारण दुर्योधन चिन्तित होते हैं और वारणावतमें लाक्षागृह बनवाकर उन्हें जलानेकी युक्ति तैयार करते हैं। विदुरके कारण दुर्योधनकी युक्ति काम नहीं करती और वे सुरंगके रास्ते सकुशल बाहर निकल आते हैं। बादमें पाण्डव गंगाजीके पार उतरते हैं। फिर मत्स्य, त्रिगर्त, पंचाल तथा कीचक–इन जनपदोंके भीतर होकर रमणीय वनस्थलियों और सरोवरोंको देखते हुए यात्रा करने लगते हैं।

महाभारतमें कहा गया है कि ऐसी स्थितिमें भी पाण्डव प्रतिदिन उपनिषद्, वेदवेदाङ्ग तथा नीतिशास्त्रका स्वाध्याय करते थे। एक दिन स्वाध्याय करते हुए उन पाण्डवोंको पितामह व्यास जी का दर्शन हुआ।[6] जैसे ही उन्होंने व्यासको देखा, प्रणाम करके माता कुन्तीके साथ उनके आगे हाथ जोड़कर खड़े हो गए। पाण्डवोंका परम हित करनेकी भावनासे ही व्यास यहाँ आकर उन्हें दर्शन देते हैं और कहते हैं कि

---

5. इत्युक्त्वा भगवान् व्यासस्तथा प्रतिनिधाय च। जगाम तपसे धीमान् हिमवन्तं शिलोच्चयम् (महाआदि॰ 114.24)।

6. ब्राह्मं वेदमधीयाना वेदाङ्गानि च सर्वशः। नीतिशास्त्रं च सर्वज्ञा ददृशुस्ते पितामहम् (महाआदि॰ 155.5)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तुम्हें विषाद नहीं करना चाहिए। यह सब तुम्हारे भावी सुखके लिए हो रहा है।[7] एकचक्रा नगरीके निकट ले जाकर कुन्तीको भी सान्त्वना देते हुए कहते हैं कि युधिष्ठिर धर्मपूर्वक सारी पृथिवीको जीतकर भूमण्डलके सम्पूर्ण राजाओंपर शासन करेंगे।[8] बलवान् पाण्डव इस पृथिवीको जीतकर राजसूय और अश्वमेध आदि यज्ञों द्वारा भगवान् का यजन करेंगे।[9] इसके पश्चात् व्यासने उन्हें ब्राह्मणके घरमें ठहराया और फिर युधिष्ठिरसे कहा – तुम लोग मेरे आनेकी एक मास तक प्रतीक्षा करो। देश और कालका विचार करके ही कोई कार्य करना चाहिए, इससे तुम्हें बड़ा सुख मिलेगा।[10] ऐसा कहकर व्यास चले गए।

[पाण्डवोंके समक्ष व्यासके द्वारा द्रौपदीके पूर्व जन्मका कथन]

एक बार जब महात्मा पाण्डव गुप्तरूपसे वनमें निवास कर रहे थे, उस समय व्यासने तपोवनमें रह रही किसी ऋषि कन्याके बारेमें बताया कि समस्त सद्गुणोंसे सम्पन्न होनेपर भी वह कन्या अपने किए गए कर्मोंके कारण दुर्भाग्यके वश हो गई और रूपवती तथा सदाचारिणी होनेपर भी कोई पति नहीं पा सकी। उग्र तपस्या करके उसने वरदान देनेके लिए इच्छुक भगवान् शिवसे "मैं सर्वगुणसम्पन्न पति चाहती हूँ",

7. न विषादोऽत्र कर्त्तव्यः सर्वमेतत् सुखाय वः (महाआदि॰ 155.8)।
8. धर्मेण पृथिवीं जित्वा महात्मा पुरुषर्षभः। पृथिव्यां पार्थिवान् सर्वान् प्रशासिष्यति धर्मराट् (महाआदि॰ 155.12)।
9. यक्ष्यन्ति च नरव्याघ्रा निर्जित्य पृथिवीमिमाम्। राजसूयाश्वमेधाद्यैः क्रतुभिर्भूरिदक्षिणैः (महाआदि॰ 155.15)।
10. देशकालौ विदित्वैव लप्स्यध्वं परमां मुदम् (महाआदि॰ 155.18)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इस वाक्यको बार-बार दुहराया।[11] शिवने उसे "तुम्हारे पाँच भरतवंशी पति होंगे" ऐसा वरदान दिया।[12] कन्याने शिवसे कहा – मैं आपकी कृपासे एक ही पति चाहती हूँ।[13] भगवान् शिवने कहा, भद्रे! तुमने मुझसे पाँच बार कहा कि मुझे पति दीजिए, पति दीजिए। इसलिए दूसरा शरीर धारण करनेपर जैसा मैंने कहा है, वैसा वरदान तुम्हें प्राप्त होगा।

यह वृत्तान्त सुनाकर व्यासने पाण्डवोंसे कहा – वही कन्या राजा द्रुपदके यहाँ जन्मी है। पृषतकी पौत्री सती साध्वी कृष्णा तुम लोगोंकी पत्नी नियत की गई है। अतः तुम अब पाञ्चाल नगरमें जाकर रहो। द्रौपदीको पाकर तुम सब लोग सुखी रहोगे। ऐसा कहकर उन्होंने कुन्तीसे विदा ली और वहाँसे चल दिए।[14]

[दक्षिण पाञ्चालकी ओर जाते हुए पाण्डवोंसे व्यासकी पुनः भेंट]

व्यास पहले ही कह चुके हैं कि पाञ्चाल नगरमें जाकर रहो और तदनुसार जब पाण्डव प्रस्थान करते हैं तो मार्गमें एक बार व्यास पुनः पाण्डवोंसे मिलते हैं। इस प्रसंगमें केवल इतना ही उल्लेख है कि परस्पर एक दूसरेका स्वागत-सत्कार होनेपर उनके बीच आवश्यक बातचीत हुई और उसके बाद व्यासकी आज्ञा लेकर पाण्डव द्रुपदकी राजधानीकी ओर

11. अथेश्वरमुवाचेदमात्मनः सा वचो हितम्। पतिं सर्वगुणोपेतमिच्छामीति पुनः पुनः (महाआदि॰ 168.10)।

12. पञ्च ते पतयो भद्रे भविष्यन्तीति भारताः (महाआदि॰ 168.11)।

13. एकमिच्छाम्यहं देव त्वत्प्रसादात् पतिं प्रभो (महाआदि॰ 168.12)।

14. निर्दिष्टां भवतां पत्नी कृष्णा पार्षत्यनिन्दिता। पाञ्चालनगरे तस्मान्निवसध्वं महाबलाः। सुखिनस्तामनुप्राप्य भविष्यथ न संशयः (महाआदि॰ 168.15)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चल दिए।[15] व्यासने पाण्डवोंके साथ कौन सी आवश्यक बातचीत की इसका खुलासा महाभारतमें नहीं किया गया।

[भगवान् व्यासकी सम्मतिसे पाँचों पाण्डवोंके साथ द्रौपदीका विवाह]

यह एक अद्भुत ऐतिहासिक घटना है कि यद्यपि अर्जुन स्वयंवरमें द्रौपदीको जीतकर लाए थे किन्तु विवाह सभी पाँचों पाण्डवोंके साथ हुआ। एक विलक्षण घटना तो यह घटी कि घर पहुँचकर भीमसेन और अर्जुन कुन्तीसे कहते हैं कि माँ! हम लोग भिक्षा लाए हैं।[16] कुन्ती भी भिक्षाको बिना देखे कह देती है कि तुम सभी भाई मिलकर उसे पाओ।[17] बादमें भिक्षाके रूपमें द्रौपदीको देखकर कुन्तीको अधर्मका भय सताने लगता है। युधिष्ठिरके पास जाकर कुन्ती अपना यह मत प्रकट करती है कि न तो मेरी बात झूठी हो तथा न ही द्रौपदीको पाप लगे और न ही उसे नीच योनियोंमें भटकना पड़े।[18] कुन्तीके ऐसा कहनेपर युधिष्ठिर दो घड़ी तक मन ही मनमें विचार करके अर्जुनको द्रौपदीके साथ पाणिग्रहण करनेके लिए कहते हैं।[19] अर्जुनको लगता है कि मुझे अधर्मका भागी बनाया जा रहा है। बड़े भाईके रहते क्या छोटे भाईका विवाह होना सम्भव है। अर्जुनका कहना है कि पहले युधिष्ठिरका

---

15. तस्मै यथावत् सत्कारं कृत्वा तेन च सत्कृताः। कथान्ते चाभ्यनुज्ञाताः प्रपयुर्द्रुपदक्षयम् (महाआदि० 184.3)।
16. भिक्षेत्यथावेदयतां नराग्र्यौ (महाआदि० 190.1)।
17. प्रोवाच भुङ्क्तेति समेत्य सर्वे (महाआदि० 190.2)।
18. मया कथं नानृतमुक्तमद्य भवेत् कुरूणामृषभ ब्रवीहि। पाञ्चालराजस्य सुतामधर्मो न चोपवर्तेत न विभ्रमेच्च (महाआदि० 190.5)।
19. प्रज्वाल्यतामग्निरमित्रसाह गृहाण पाणिं विधिवत् त्वमस्याः (महाआदि० 190.7)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

विवाह होना चाहिए, फिर भीमसेनका, उसके बाद मेरा तथा उसके बाद नकुल और सहदेव विवाह करें।

यह सब वृत्तान्त सुनाते हुए वैशम्पायन इस अवसरपर अपनी टिप्पणी करते हैं कि द्रौपदीका रूप-सौन्दर्य ही ऐसा था कि उसको देखकर पाँचों पाण्डवोंने द्रौपदीको अपने हृदयमें बसा लिया। जैसे ही उन्होंने द्रौपदीको देखा, मन्मथ उन सबकी इन्द्रियोंको मथकर प्रकट हो गया।[20] इस अवसरपर वैशम्पायन पुनः टिप्पणी करते हैं कि युधिष्ठिरको कृष्णद्वैपायन व्यासके वचनोंका स्मरण हो आया और यह सोचकर कि द्रौपदीको लेकर हम सब भाइयोंमें फूट न पड़ जाए, इस भयसे उन्होंने अपने सभी भाइयोंसे कहा कि कल्याणमयी द्रौपदी हम सबकी पत्नी होगी।[21]

स्वयंवरके पश्चात् द्रुपद सभीको अपने यहाँ बुलाते हैं तथा अर्जुनको द्रौपदीके साथ पाणिग्रहण करनेके लिए कहते हैं। इसपर युधिष्ठिर भी द्रौपदीके साथ पाणिग्रहण करनेके लिए कहते हैं। द्रुपदको युधिष्ठिरका यह व्यवहार उचित प्रतीत नहीं होता। इस अवसरपर उन्होंने अपना मत प्रकट किया और युधिष्ठिरको सम्बोधन करते हुए इस प्रकार कहा - एक राजाकी बहुत सी रानियाँ हों, ऐसा विधान तो वेदोंमें देखा गया है, किन्तु एक स्त्रीके अनेक पुरुष पति हों, ऐसा कहीं सुननेमें नहीं आया है। तुम तो धर्मके ज्ञाता और पवित्र हो, अतः तुम्हें लोक एवं वेदके विरुद्ध ऐसा अधर्म नहीं करना चाहिए। तुम तो कुन्तीके पुत्र हो,

---

20. सम्प्रमथ्येन्द्रियग्रामं प्रादुरासीन्मनोभवः (महाआदि० 190.13)।
21. सर्वेषां द्रौपदी भार्या भविष्यति हि नः शुभा (महाआदि० 190.16)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तुम्हारी बुद्धि ऐसी क्यों हो रही है।[22] इसपर युधिष्ठिर केवल इतना ही कहते हैं कि मेरी वाणी कभी भी झूठ नहीं बोलती तथा मेरी बुद्धि भी कभी अधर्ममें नहीं लगती। माताने भी ऐसा ही आदेश दिया है और मेरे मनमें भी यही ठीक जँचता है।[23] अन्तमें निष्कर्षके रूपमें द्रुपद कहते हैं – कुन्ती, युधिष्ठिर और मेरा पुत्र धृष्टद्युम्न – ये सब मिलकर सलाह कर लें और जो निश्चय हो, वही कल ठीक समयपर किया जायेगा।

इसी बीच भगवान् व्यास पधारते हैं तथा व्याससे भी द्रुपद निवेदन करते हैं कि एक ही स्त्री बहुतसे पुरुषोंकी धर्मपत्नी कैसे हो सकती है? जिससे संकरताका दोष न लगे, यह सब आप ठीक-ठीक बताएँ।[24] व्यास कुछ स्पष्ट करनेके पहले, जिसका जो मत है, उसे सुनना चाहते हैं। इसपर धृष्टद्युम्नका कहना है कि बड़ा भाई सदाचारी रहते हुए भी छोटे भाईकी स्त्रीसे कैसे समागम कर सकता है ? युधिष्ठिर अपना मत रखते हैं कि इस विवाहमें मेरे मनकी प्रवृत्ति हो रही है, इसलिए यह किसी भी प्रकार अधर्म नहीं है। श्रेष्ठ जटिला नाम वाली गौतम गोत्रकी कन्याने सात ऋषियोंके साथ विवाह किया था। कण्डु मुनिकी पुत्री वार्क्षीने दस प्रचेताओंके साथ विवाह-सम्बन्ध स्थापित किया था, जो आपसमें भाई-भाई थे। युधिष्ठिरकी बातका समर्थन करते हुए कुन्ती कहती है कि युधिष्ठिरने जैसा कहा है, वह ठीक है। मुझे झूठसे भय लगता है।

22. एकस्य बह्व्यो विहिता महिष्यः कुरुनन्दन। नैकस्या बहवः पुंसः श्रूयन्ते पतयः क्वचित्।। लोकवेदविरुद्धं त्वं नाधर्मं धर्मविच्छुचिः। कर्तुमर्हसि कौन्तेय कस्मात् ते बुद्धिरीदृशी (महाआदि॰ 194.27-28)।

23. न मे वागनृतं प्राह नाधर्मे धीयते मतिः। एवं चैव वदत्यम्बा मम चैतन्मनोगतम् (महाआदि॰ 194.30)।

24. कथमेका बहूनां स्याद् धर्मपत्नी न संकरः। एतन्मे भगवान् सर्वं प्रब्रवीतु यथातथम् (महाआदि॰ 195.5)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

बताइए, मैं झूठके पापसे कैसे बच सकूँगी। सबका मत सुननेके उपरान्त भगवान् व्यास द्रुपदको एकान्तमें ले जाते हैं तथा पाँचों पाण्डवोंका तथा द्रौपदीके पूर्वजन्मका वृत्तान्त बताकर तथा उसे दिखाकर अन्तमें कहते हैं कि यह द्रौपदी स्वर्गलोककी लक्ष्मी है, जो पाण्डवोंके लिए तुम्हारे महायज्ञमें प्रकट हुई है, वही पाँच पुरुषोंकी पत्नी नियत की गई है। व्यासके समझानेपर द्रुपद पूर्णतः सन्तुष्ट हो जाते हैं और अपनी सम्मति देते हैं कि यदि साक्षात् शंकरने ही ऐसा विधान किया है तो यह धर्म हो या अधर्म, इसमें मेरा कोई अपराध नहीं। ये पाण्डव लोग विधिपूर्वक प्रसन्नतासे इसका पाणिग्रहण करें। विधाताने द्रौपदीको इन पाण्डवोंकी पत्नी बनाया है।[25] इसके बाद व्यासके निर्देशानुसार उसी दिन चन्द्रमाके पुष्य नक्षत्रपर आते ही सर्वप्रथम युधिष्ठिरके साथ द्रौपदीका पाणिग्रहण हुआ और क्रमशः एक-एक अन्य पाण्डवोंके साथ द्रौपदीका पाणिग्रहण हुआ।

[युधिष्ठिरके राज्याभिषेकके समय तथा इन्द्रप्रस्थके निर्माणके समय व्यासकी उपस्थिति]

द्रौपदी तथा पाँचों पाण्डव माता कुन्तीके साथ कुछ दिन द्रुपदके यहाँ रहकर धृतराष्ट्रके बुलावेपर हस्तिनापुर पहुँचे, जहाँ धृतराष्ट्रने युधिष्ठिरके राज्याभिषेककी उद्घोषणा की। इस अवसरपर भगवान् वेदव्यास अचानक पधारते हैं[26] तथा कृष्णकी सम्मतिसे व्यास ही विधिपूर्वक युधिष्ठिरका अभिषेककर्म सम्पन्न करते हैं। इसके पश्चात्

---

25. यदि चैवं विहितः शंकरेण धर्मोऽधर्मो वा नात्र ममापराधः। गृह्णन्त्विमे विधिवत् पाणिमस्या यथोपजोषं विहितैषां हि कृष्णा (महाआदि॰ 197.4)।

26. तस्मिन् क्षणे महाराज कृष्णद्वैपायनस्तदा। आगत्य कुरुभिः सर्वैः पूजितः स सुहृद्गणैः (महाआदि॰ 206.26)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

धृतराष्ट्रने पाण्डवोंको आधा राज्य देकर खाण्डवप्रस्थमें जानेका आदेश दिया। वहाँ जमीनकी नाप करवानेके कार्यमें पाण्डवोंने कृष्णद्वैपायन व्यासको ही अपना अगुआ बनाया।[27] यही खाण्डवप्रस्थ इन्द्रकी इच्छाके अनुसार इन्द्रप्रस्थ कहलाया। नगर बननेके पश्चात् युधिष्ठिरने कृष्णद्वैपायनको आगे करके भाइयों तथा कृष्णके साथ बत्तीस दरवाजों वाले तोरणद्वारके सामने आकर वर्धमान नामक नगरद्वारमें प्रवेश किया।[28] इसी इन्द्रप्रस्थमें रहते हुए युधिष्ठिरने राजसूय यज्ञ करनेका संकल्प लिया। जिस समय यह विषय उपस्थित हुआ कि कौन किस दिशामें दिग्विजयके लिए जायेगा, उस समय व्यासने अर्जुनको उत्तर दिशाकी यात्रा करनेके लिए कहा क्योंकि वे ही देवताओंको जीतकर वहाँसे बलपूर्वक रत्न ले आनेमें समर्थ हैं।[29] इसी प्रकार भगवान् व्यासने पूर्व दिशाकी यात्राके लिए भीमसेनको, दक्षिण दिशाकी यात्राके लिए सहदेवको और पश्चिम दिशाकी यात्राके लिए नकुलको आदेश दिया।[30]

[क्षत्रियोंके विनाशसे सम्बन्धित व्यासकी भविष्यवाणी]

राजसूययज्ञकी समाप्तिके पश्चात् जब व्यास युधिष्ठिरसे जानेकी अनुमति लेने लगे तब युधिष्ठिरने अपने एक संशयको प्रकट करते हुए

---

27. नगरं मापयामासुर्द्वैपायनपुरोगमाः (महाआदि॰ 206.29)।
28. द्वैपायनं पुरस्कृत्य धौम्यस्यानुमते स्थितः। भ्रातृभिः सहितो राजन् केशवेन सहाभिभूः। तोरणद्वारसुमुखं द्वात्रिंशद्द्वारसंयुतम्। वर्धमानपुरद्वारं प्रविवेश महाद्युतिः (महाआदि॰ 206.49)।
29. तस्माद् दिशं देवगुप्तामुदीचीं गच्छ फाल्गुन। शक्तो भवान् सुराञ्जित्वा रत्नान्याहर्तुमोजसा (महासभा॰ 25.4)।
30. प्राचीं भीमो बलश्लाघी प्रयातु भरतर्षभः। याम्यां तत्र दिशं यातु सहदेवो महारथः। प्रतीचीं नकुलो गन्ता वरुणेनाभिपालिताम् (महासभा॰ 25.5)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कहा कि नारदने स्वर्ग, अन्तरिक्ष और पृथिवी विषयक तीन प्रकारके उत्पात बताए हैं। क्या शिशुपालके मारे जानेसे वे महान् उत्पात शान्त हो गए हैं ? इस प्रश्नके उत्तरमें व्यासने कहा कि उत्पातोंका महान् फल तेरह वर्षों तक हुआ करता है। इस समय जो उत्पात प्रकट हुआ था, वह समस्त क्षत्रियोंका विनाश करने वाला होगा। तुम्हींको निमित्त बनाकर भूमिपालोंका समुदाय आपसमें लड़कर नष्ट होगा। दुर्योधनके अपराधसे तथा भीमसेन और अर्जुनके पराक्रम द्वारा क्षत्रियोंका यह विनाश सम्पन्न होगा।[31] ऐसा कहकर भगवान् व्यास कैलासपर्वतपर चले गए।

[पाण्डवोंका वध करनेके लिए दुर्योधनादिका वनमें जानेको उद्यत होना तथा व्यासके द्वारा उन्हें रोकना]

इस बीच बहुत सी घटनाएँ घट गईं। राजसूययज्ञके पश्चात् द्यूतक्रीड़ाके बहाने युधिष्ठिरको बुलाकर उन्हें हराना, द्रौपदीका चीरहरण तथा युधिष्ठिर आदि पाँचों भाइयोंका इन्द्रप्रस्थ पुरी छोड़ वनमें प्रवेश करना आदि घटनाएँ घट गईं। पाँचों पाण्डवोंको वनमें गए अधिक दिन भी नहीं बीते, लेकिन दुर्योधन आदि इस बातसे चिन्तित होने लगे कि कहीं धृतराष्ट्र उन्हें वापिस न बुला लें। अतः उनका वध करनेके लिए शकुनि इत्यादि ने दुर्योधनके साथ आपसमें सलाह की और सलाहके पश्चात् जैसे ही दुर्योधन, दु:शासन, शकुनि तथा कर्ण पाण्डवोंका वध

31. त्रयोदश समा राजन्नुत्पातानां फलं महत्। सर्वक्षत्रविनाशाय भविष्यति विशाम्पते। त्वामेकं कारणं कृत्वा कालेन भरतर्षभ। समेतं पार्थिवं क्षत्रं क्षयं यास्यति भारत। दुर्योधनापराधेन भीमार्जुनबलेन च (महासभा॰ 46.10-12)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

करनेकी इच्छासे वनमें जानेके लिए उद्यत होते हैं, व्यास आकर उन्हें रोकते हैं तथा शीघ्र ही धृतराष्ट्रके पास आते हैं।[32]

[व्यासके द्वारा धृतराष्ट्रको समझाना]

इस अवसरपर व्यासने अपने मनकी बात धृतराष्ट्रके सम्मुख रक्खी और कहा कि जिस तरहसे पाण्डव लोग वनमें भेजे गए हैं, यह मुझे अच्छा नहीं लगा। छलपूर्वक दुर्योधनादिने उन्हें जूएमें हराया है। याद रखो! तेरहवाँ वर्ष पूर्ण होनेपर जब वे आयेंगे और अपने क्लेशको याद करके कुपित होंगे तो निश्चित ही कौरवोंपर विषके समान घातक अस्त्र-शस्त्रोंका प्रहार करेंगे। क्यों यह पापात्मा एवं तुम्हारा मूर्ख पुत्र राज्यके लिए पाण्डवोंका वध करना चाहता है। तुम इस मूढको रोको। धृतराष्ट्र! स्वजनोंके साथ कलह अत्यन्त निन्दित माना गया है।[33] अथवा दुर्योधन अकेला ही वनमें जाए। उनके संसर्गमें रहनेसे शायद पाण्डवोंके मनमें दुर्योधनके प्रति स्नेह उत्पन्न हो जाए। यदि ऐसा होगा तो तुम आज ही कृतार्थ हो जाओगे।[34] लेकिन मुझे लगता है, जन्मके समय किसी वस्तुका जैसा स्वभाव बन जाता है, वह दूर नहीं होता, भले ही वह अमृत ही क्यों न हो।[35] ऐसा सुनकर धृतराष्ट्रने कहा – यह जुएका खेल मुझे पसन्द नहीं था, ऐसा लगता है कि विधाताने मुझे बलपूर्वक

32. प्रतिषिध्याथ तान् सर्वान् भगवाँल्लोकपूजितः। प्रज्ञाचक्षुषमासीनमुवाचाभ्येत्य सत्वरम् (महावन॰ 7.24)।
33. विग्रहो हि महाप्राज्ञ स्वजनेन विगर्हितः (महावन॰ 8.7)।
34. यदि स्यात् कृतकार्योऽद्य भवेस्त्वं मनुजेश्वर (महावन॰ 8.10)।
35. अथवा जायमानस्य यच्छीलमनुजायते। श्रूयते तन्महाराज नामृतस्यापसर्पति (महावन॰ 8.11)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

खींचकर इस कार्यमें लगा दिया।[36] भीष्म, द्रोण और विदुरको भी द्यूतका आयोजन अच्छा नहीं लगा था। गान्धारी भी नहीं चाहती थी कि जूआ खेला जाए। परन्तु मोहवश मैंने सबको जूएमें लगा दिया।[37] मुझे पता है, दुर्योधन अविवेकी है, तो भी पुत्रस्नेहके कारण मैं उसका त्याग नहीं कर सकता।[38] ऐसा सुनकर भगवान् व्यासने धृतराष्ट्रकी बातका समर्थन करते हुए कहा – तुम ठीक कहते हो और हम भी अच्छी तरह जानते हैं कि पुत्र परम प्रिय वस्तु है। पुत्रसे बढ़कर संसारमें और कुछ नहीं है।[39] कौरव-पाण्डव सभी मिलकर तुम्हारे ही पुत्र हैं। परन्तु सब पुत्रोंमें जो पुत्र कमजोर हालतमें हो, दयनीय दशामें पड़ा हो, उसपर अधिक कृपा होनी चाहिए।[40]

व्याससे इतना सुननेपर धृतराष्ट्र दुर्योधनको समझानेमें अपनी असमर्थता व्यक्त करते हुए कहते हैं कि आप ही मेरे दुरात्मा पुत्र दुर्योधनको शिक्षा दे दीजिए।[41]

भगवान् व्यासको यह बात अच्छी नहीं लगी, वे यह कहकर चले गए, अब भगवान् मैत्रेय ही दुर्योधनको समझायेंगे, क्योंकि वे पाण्डवोंसे

---

36. भगवन् नाहमप्येतद् रोचये द्यूतसम्भवम्। मन्ये तद्विधिनाकृष्य कारितोऽस्मीति वै मुने (महावन॰ 9.1)।
37. नैतद् रोचयते भीष्मो न द्रोणो विदुरो न च। गान्धारी नेच्छति द्यूतं तत्र मोहात् प्रवर्तितम् (महावन॰ 9.2)।
38. परित्यक्तुं न शक्नोमि दुर्योधनमचेतनम्। पुत्रस्नेहेन भगवञ्जानन्नपि प्रियव्रत (महावन॰ 9.3)।
39. वैचित्रवीर्य नृपते सत्यमाह यथा भवान्। दृढं विद्मः परं पुत्रं परं पुत्रान्न विद्यते (महावन॰ 9.4)।
40. सुतेषु राजन् सर्वेषु हीनेष्वभ्यधिका कृपा (महावन॰ 9.19)।
41. अन्वशाधि दुरात्मानं पुत्र दुर्योधनं मम (महावन॰ 10.3)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मिलकर आ रहे हैं। और धृतराष्ट्र याद रखो, यदि उनके बताए हुए कार्यकी अवहेलना की गई तो वे कुपित होकर तुम्हारे पुत्रको शाप दे देंगे।[42]

[व्यास द्वारा प्रतिस्मृतिविद्या प्रदान करना]

पाण्डव द्वैतवनमें रह रहे थे। भीमसेन और द्रौपदी – ये दोनों युधिष्ठिरको युद्ध करनेके लिए उकसा रहे थे किन्तु युधिष्ठिर इस बातसे सहमत नहीं थे। इसी विषयपर जब युधिष्ठिर चिन्तन मनन कर रहे थे, तभी व्यास युधिष्ठिरसे मिलने आए और उन्होंने कहा – युधिष्ठिर! मैं ध्यानके द्वारा तुम्हारे मनका भाव जान चुका हूँ, इसीलिए शीघ्रतापूर्वक यहाँ आया हूँ।[43] व्यासने एकान्तमें ले जाकर युधिष्ठिरसे कहा – मेरी दी हुई इस प्रतिस्मृति नामक विद्याको ग्रहण करो, जो मूर्त्तिमती सिद्धिके समान है। तुम मेरे शरणागत हो, इसलिए मैं तुम्हें इस विद्याका उपदेश करता हूँ।[44] अर्जुनको दिव्यास्त्रोंकी प्राप्तिके लिए इन्द्र, रुद्र, वरुण, कुबेर तथा धर्मराजके पास जाना चाहिए। ये अपनी तपस्यासे और पराक्रमसे देवताओंको प्रत्यक्ष देखनेमें समर्थ होंगे।[45] दूसरी बात यह है कि जो तुम्हारे लिए उपयोगी हो, ऐसे किसी दूसरे वनमें अपने निवासके लिए

---

42. अक्रियायां तु कार्यस्य पुत्रं ते शप्स्यते रुषा (महावन॰ 10.5)।
43. युधिष्ठिर महाबाहो वेद्मि ते हृदयस्थितम्। मनीषया ततः क्षिप्रयागतोऽस्मि नरर्षभ (महावन॰ 36.24)।
44. गृहाणेमां मया प्रोक्तां सिद्धिं मूर्त्तिमतीमिव। विद्यां प्रतिस्मृतिं नाम प्रपन्नाय ब्रवीमि ते (महावन॰ 36.30)।
45. अस्त्रहेतोर्महेन्द्रं च रुद्रं चैवाभिगच्छतु। वरुणं च कुबेरं च धर्मराजं च पाण्डव। शक्तो ह्येष सुरान् द्रष्टुं तपसा विक्रमेण च (महावन॰ 36.31–32)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जानेकी सोचनी चाहिए।[46] एक ही स्थानपर अधिक दिनों तक रहना अच्छा नहीं होता। अधिक दिन रहनेसे महात्माओंके तपमें विघ्न पड़ता है, जिससे उन्हें उद्वेग होता है।[47] वेदवेदाङ्गमें पारङ्गत बहुतसे पारगामी विद्वान् ब्राह्मणोंका भरण-पोषण करनेसे लता-गुल्म-औषधियोंका भी क्षय हो गया है।[48] ऐसा कहकर वेदव्यास वहीं अन्तर्धान हो गए।[49]

[काम्यक वनमें आकर पुनः व्यासका मिलना]

व्यासके अभिप्रायको समझकर युधिष्ठिर आदि पाण्डवोंने द्वैतवनसे काम्यकवन की ओर प्रस्थान किया और वहीं रहनेका मन बनाया। इस बीच तपस्या करके अर्जुनने देवताओंसे अनेक दिव्यास्त्रोंको प्राप्त किया। इस समाचारको जानकर युधिष्ठिर प्रसन्न हो उठे और तीर्थ-भ्रमण करनेका मन बनाया। ब्राह्मणोंको साथमें लेकर जैसे ही युधिष्ठिर यात्रा करनेके लिए उद्यत हुए, भगवान् व्यास, पर्वत, नारद और अन्य मनीषीजन काम्यकवनमें युधिष्ठिरसे मिलने आए। इस अवसरपर तीर्थसे सम्बन्धित कुछ महत्त्वपूर्ण विषयोंका उद्घाटन करते हुए उन्होंने कहा - युधिष्ठिर! भीमसेन! नकुल! और सहदेव! तुम लोगोंको तीर्थोंके प्रति मनमें श्रद्धापूर्वक सरलभाव रखना चाहिए। मनसे शुद्धिका सम्पादन करके

46. वनादस्माच्च कौन्तेय वनमन्यद् विचिन्त्यताम्। निवासार्थाय यद् युक्तं भवेद् वः पृथिवीपते (महावन॰ 36.35)।
47. एकत्र चिरवासो हि न प्रीतिजननो भवेत्। तापसानां च सर्वेषां भवेदुद्वेगकारकः (महावन॰ 36.36)।
48. मृगाणामुपयोगश्च वीरुदोषधिसंक्षयः। बिभर्षि च बहून् विप्रान् वेदवेदाङ्गपारगान् (महावन॰ 36.37)।
49. अनुज्ञाय च कौन्तेयं तत्रैवान्तरधीयत (महावन॰ 36.39)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

शुद्धचित्त होकर तीर्थोंमें जाना चाहिए।[50] ब्राह्मण लोग शरीरशुद्धिके नियमको मानुषव्रत कहते हैं और मनके द्वारा शुद्धकी हुई बुद्धिको दैवव्रत कहते हैं।[51] यदि मन राग-द्वेषसे दूषित न हो तो वह शुद्धिके लिए पर्याप्त माना जाता है। अतः तुम सबको समस्त प्राणियोंके प्रति मैत्री बुद्धिका आश्रय लेकर शुद्धभावसे तीर्थोंका दर्शन करना चाहिए।[52] आप लोग मानसिक तथा शारीरिक नियमव्रतोंसे शुद्ध हैं। अतः यदि दैवव्रतका आश्रय लेकर यात्रा करेंगे तो तीर्थोंका यथावत् फल आपको प्राप्त होगा।[53] ऋषियोंके ऐसा कहनेपर पाण्डवोंने उनके उपदेशको शिरोधार्य किया। इसके अनन्तर लोमश, व्यास, देवर्षि नारद और पर्वतके चरणोंका स्पर्श करके पाण्डव वनवासी ब्राह्मणोंके साथ, पुरोहित धौम्य तथा लोमश आदिके साथ मार्गशीर्षकी पूर्णिमा व्यतीत होनेपर पुष्यनक्षत्रमें तीर्थयात्राके लिए निकल पड़े।

[वनमें पाण्डवोंके पास व्यासका आगमन]

भाइयोंके साथ महात्मा युधिष्ठिरको वनमें कष्टके साथ रहते-रहते ग्यारह वर्ष बीत गए। एक दिन पाण्डवोंको देखनेके लिए व्यास वहाँ आए। अपने पौत्रोंको वनवासके कष्टसे दुर्बल तथा जङ्गली फल-फूल

---

50. युधिष्ठिर यमौ भीम मनसा कुरुतार्जवम्। मनसा कृतशौचा वै शुद्धास्तीर्थानि यास्यथ (महावन॰ 93.20)।
51. शरीरनियमं प्राहुर्ब्राह्मणा मानुषं व्रतम्। मनोविशुद्धां बुद्धिं च दैवमाहुर्व्रतं द्विजाः (महावन॰ 93.21)।
52. मनो ह्यदुष्टं शौचाय पर्याप्तं वै नराधिप। मैत्रीं बुद्धिं समास्थाय शुद्धास्तीर्थानि द्रक्ष्यथ (महावन॰ 93.22)।
53. ते यूयं मानसैः शुद्धाः शरीरनियमव्रतैः। दैवं व्रतं समास्थाय यथोक्तं फलमाप्स्यथ (महावन॰ 93.23)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

खाकर जीवन निर्वाह करते देख महर्षि व्यासको बड़ी दया आई। उनपर कृपा करनेके लिए नेत्रोंमें आँसू बहाते हुए गद्‌गद् कण्ठसे बोले - युधिष्ठिर! मेरी बात सुनो। संसारमें जिन्होंने तपस्या नहीं की है, वे महान् सुखकी उपलब्धि नहीं कर पाते हैं।[54] तपसे बढ़कर दूसरा कोई साधन नहीं है। तपसे मनुष्य महत्पदको प्राप्त कर लेता है।[55] इस लोकमें जो कर्म किया जाता है, उसका फल परलोकमें भोगना पड़ता है, इसलिए अपने शरीरको तप और नियमोंके पालनमें लगाना चाहिए।[56] जिसने अपने मनको वशमें कर लिया, वह दूसरोंकी सम्पत्तिको देखकर सन्तप्त नहीं होता।[57] इस प्रकार उपदेश देकर व्यास ने उन्हें सान्त्वना देनेका प्रयास किया।

इतना सुननेके पश्चात् युधिष्ठिर व्याससे प्रश्न करते हैं कि दानधर्म एवं तपस्या इनमेंसे किसका फल परलोकमें अधिक माना जाता है ? और इन दोनोंमें कौन दुष्कर बताया जाता है ?

युधिष्ठिरके प्रश्नके उत्तरमें भगवान् व्यास तपस्याकी अपेक्षा दानको अधिक महत्त्व देते हुए कहते हैं - दानसे बढ़कर दुष्कर कार्य इस

54. नातप्ततपसो लोके प्राप्नुवन्ति महासुखम् (महावन० 259.13)।
55. तपसो हि परं नास्ति तपसा विन्दते महत्। नासाध्यं तपसः किञ्चिदिति बुद्ध्यस्व भारत (महावन० 259.16)।
56. इह यत् क्रियते कर्म तत् परत्रोपयुज्यते। तस्माच्छरीरं युञ्जीत तपसा नियमेन च (महावन० 259.20)।
57. न च तप्यति दान्तात्मा दृष्ट्वा परगतां श्रियम् (महावन० 259.23)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पृथिवीपर दूसरा कोई नहीं है।[58] दुःख सहकर कमाए हुए धनका परित्याग करना अत्यन्त कठिन होता है। इसलिए मेरे मतमें दान ही सर्वश्रेष्ठ है।[59]

इस प्रसंगमें व्यासने यह बात विशेष रूपसे कही कि मनुष्य न्यायसे कमाए हुए धनको उत्तम देश, काल और पात्रका विचार करते हुए श्रेष्ठ पुरुषोंको दे।[60] अन्यायसे प्राप्त किए हुए धनके द्वारा जो दानधर्म किया जाता है, वह महान् भयसे कर्त्ताकी रक्षा नहीं कर पाता।[61] यदि विशुद्ध मनसे उत्तम समयपर सत्पात्रको थोड़ा सा भी दान दिया गया हो, तो वह परलोकमें अनन्त फल देनेवाला माना गया है।[62]

युधिष्ठिरके प्रश्नका उत्तर देनेके बाद व्यास पुनः अपने विषयपर आते हुए कहते हैं कि समृद्धिशाली राज्यसे भ्रष्ट होनेके कारण तुम शोक न करो। तपस्या द्वारा तुम उसे प्राप्त कर लोगे। मनुष्यपर सुखके बाद दुःख और दुःखके बाद सुख बारी-बारीसे आते रहते हैं। जैसे नेमिसे जुड़े हुए अरे ऊँचे-नीचे आते रहते हैं, वैसे ही मनुष्यका दुःख-सुखसे सम्बन्ध होता रहता है।[63] युधिष्ठिर! तेरहवें वर्षके बाद अपने

---

58. दानान्न दुष्करं तात पृथिव्यामस्ति किंचन (महावन॰ 259.28)।
59. तस्माद् दुःखार्जितस्यैव परित्यागः सुदुष्करः। न दुष्करतरं दानात् तस्माद् दानं मतं मम (महावन॰ 259.31)।
60. विशेषस्त्वत्र विज्ञेयो न्यायेनोपार्जितं धनम्। पात्रे काले च देशे च साधुभ्यः प्रतिपादयेत् (महावन॰ 259.32)।
61. अन्यायात् समुपात्तेन दानधर्मो धनेन यः। क्रियते न स कर्त्तारं त्रायते महतो भयात् (महावन॰ 259.33)।
62. पात्रे दानं स्वल्पमपि काले दत्तं युधिष्ठिर। मनसा हि विशुद्धेन प्रेत्यानन्तफलं स्मृतम् (महावन॰ 259.34)।
63. सुखस्यानन्तरं दुःखं दुःखस्यानन्तरं सुखम्। पर्यायेणोपसर्पन्ते नरं नेमिमरा इव (महावन॰ 261.49)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

बाप-दादोंका राज्य तुम प्राप्त कर लोगे, अतः अब तुम्हारी मानसिक चिन्ता दूर हो जानी चाहिए।[64] ऐसा कहकर व्यास तपस्याके लिए अपने आश्रमकी ओर चले गए।[65]

[व्यासकी उपस्थितिमें सञ्जय द्वारा धृतराष्ट्रके प्रश्नोंका उत्तर देना]

बारह वर्षका वनवास तथा विराटके यहाँ एक वर्षका अज्ञातवास पूरा होनेपर एक समय एकान्तमें धृतराष्ट्र सञ्जयसे दोनों पक्षोंकी खूबियाँ तथा कमियोंके बारेमें जानना चाहते हैं किन्तु सञ्जय इस प्रश्नका उत्तर एकान्तमें देना उचित नहीं समझकर धृतराष्ट्रको पिता वेदव्यास तथा गान्धारीको बुला लानेका सुझाव देते हैं और उन्हींकी उपस्थितिमें प्रश्नका उत्तर देना चाहते हैं।

सञ्जयके ऐसा कहनेपर धृतराष्ट्रका बुलावा पाकर गान्धारी और वेदव्यास वहाँ आते हैं। इसके पश्चात् वेदव्यास सभाभवनमें पहुँचकर सञ्जय और धृतराष्ट्रके विचारोंको जानकर इस प्रकार बोलते हैं – सञ्जय! धृतराष्ट्र तुमसे जो कुछ जानना चाहते हैं, वह सब उन्हें बताओ। वे भगवान् कृष्ण तथा अर्जुनके विषयमें जो कुछ पूछते हैं, वह सब, जितना तुम जानते हो, उसके अनुसार यथार्थरूपसे कहो।[66]

इस अवसरपर सञ्जय कृष्णकी महिमाका वर्णन करते हैं तथा कृष्णप्राप्ति एवं तत्त्वज्ञानका साधन निरूपित करते हैं। इस अवसर पर

---

64. पितृपैतामहं राज्यं प्राप्स्यस्यमितविक्रम। वर्षात् त्रयोदशादूर्ध्वं व्येतु ते मानसो ज्वरः (महावन॰ 261.50)।
65. जगाम तपसे धीमान् पुनरेवाश्रमं प्रति (महावन॰ 261.51)।
66. सम्पृच्छते धृतराष्ट्राय संजय आचक्ष्व सर्वं यावदेषोऽनुयुङ्क्ते। सर्वं यावद् वेत्थ तस्मिन् यथावद् याथातथ्यं वासुदेवेऽर्जुने च (महाउद्योग॰ 67.10)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

फिर व्यास धृतराष्ट्रको सम्बोधित करते हुए कहते हैं – धृतराष्ट्र! मेरी बातपर ध्यान दो। वास्तवमें तुम कृष्णके प्रिय हो, तभी तो तम्हें सञ्जय जैसा दूत मिला है, जो तुम्हें कल्याणसाधनमें लगायेगा।[67] सञ्जय पुराणपुरुष कृष्णको जानता है। यदि तुम इसकी बातें एकाग्रचित्त होकर सुनोंगे तो यह तुम्हें महान् भयसे मुक्त कर देगा।[68] जो मनुष्य अपने धनसे सन्तुष्ट नहीं हैं, वे कामादि विविध प्रकारके बन्धनोंमें बँधकर हर्ष और क्रोधके वशीभूत होते हैं और अपने कर्मों द्वारा प्रेरित होकर बारम्बार यमराजके वशमें आते हैं।[69] यह ज्ञानमार्ग एकमात्र परमात्माकी प्राप्ति कराने वाला है, जिसपर ज्ञानी पुरुष चलते हैं। उस मार्गको देख या जान लेनेपर मनुष्य जन्म-मृत्युरूप संसारको लांघ जाता है और वह पुरुष कभी इस संसारमें आसक्त नहीं होता।[70] व्यासके इस वक्तव्यको सुनकर ही धृतराष्ट्रके मनमें कृष्णके नाम उनके कर्म तथा उनके स्वरूपको जाननेकी ललक पैदा होती है और सञ्जयसे वह सब विषय श्रवण करते हैं।

---

67. प्रियोऽसि राजन् कृष्णस्य धृतराष्ट्र निबोध मे। यस्य ते संजयो दूतो यस्त्वां श्रेयसि योक्ष्यते (महाउद्योग॰ 69.11)।
68. जानात्येष हृषीकेशं पुराणं यच्च वै परम्। शुश्रूषमाणमेकाग्रं मोक्ष्यते महतो भयात् (महाउद्योग॰ 69.12)।
69. वैचित्रवीर्य पुरुषाः क्रोधहर्षसमावृताः। सिता बहुविधैः पाशैर्ये न तुष्टाः स्वकैर्धनैः॥ यमस्य वशमायान्ति काममूढाः पुनः पुनः। अन्धनेत्रा यथैवान्धा नीयमानाः स्वकर्मभिः (महाउद्योग॰ 69.13-14)।
70. एष एकायनः पन्था येन यान्ति मनीषिणः। तं दृष्ट्वा मृत्युमत्येति महांस्तत्र न सज्जति (महाउद्योग॰ 69.15)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

[व्यास द्वारा धृतराष्ट्रको चेतावनी देना]

सञ्जयके समझानेके समय यद्यपि धृतराष्ट्र सही दिशामें सोचने लगते हैं किन्तु यह सोचना क्षणिक ही होता है। फिरसे वे दुर्योधनके पक्षमें हो जाते हैं और जैसा वह कहता है, वैसा ही सोचने लगते हैं। परिणाम यह होता है कि कौरवोंके द्वारा पाण्डवोंको उनका राज्य वापिस न करनेके कारण अन्ततः दोनों पक्षोंकी ओरसे युद्धकी तैयारियाँ प्रारम्भ हो जाती हैं। ऐसी स्थितिमें भगवान् व्यास भयंकर संग्रामके भावी दुष्परिणामको प्रत्यक्ष देख रहे होते हैं। धृतराष्ट्रके पुत्रोंके अन्यायका चिन्तन करते हुए वे अत्यन्त शोकमय और आर्त हो जाते हैं।

वे धृतराष्ट्रके पास आते हैं और एकान्तमें उनसे बोलते हैं – तुम्हारे पुत्रों तथा अन्य राजाओंका मृत्युकाल आ पहुँचा है।[71] कालके अधीन होकर जब वे मरने लगें तो मनमें शोक न करना।[72] यदि संग्रामभूमिमें इन सबकी अवस्था तुम देखना चाहते हो तो मैं तुम्हें दिव्य नेत्र प्रदान कर सकता हूँ। फिर तुम यहाँ बैठे-बैठे ही वहाँ होने वाले युद्धका सारा दृश्य अपनी आँखोंसे देख सकते हो।[73] ऐसा सुनकर धृतराष्ट्रने कहा – मुझे अपने कुटुम्बीजनोंका वध देखना अच्छा नहीं

---

71. राजन् परीतकालास्ते पुत्राश्चान्ये च पार्थिवाः (महाभीष्म॰ 2.4)।
72. तेषु कालपरीतेषु विनश्यत्स्वेव भारत। कालपर्यायमाज्ञाय मा स्म शोके मनः कृथाः (महाभीष्म॰ 2.5)।
73. यदि चेच्छसि संग्रामे द्रष्टुमेतान् विशाम्पते। चक्षुर्ददानि ते पुत्र युद्धं तत्र निशामय (महाभीष्म॰ 2.6)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

लगेगा, परन्तु आपके प्रभावसे इस युद्धका सारा वृत्तान्त सुन सकूँ, ऐसी कृपा आप अवश्य कर सकते हैं।[74]

[व्यास द्वारा सञ्जयको वर प्रदान]

व्यास समझ गए कि धृतराष्ट्र युद्ध तो नहीं देखना चाहते, किन्तु उसका पूरा समाचार सुनना चाहते हैं। तब महर्षि व्यासने सञ्जयको वर देते हुए कहा – हे राजन्! यह सञ्जय आपको इस युद्धका सब समाचार बतायेंगे। सम्पूर्ण संग्राम भूमिमें ऐसी काई बात नहीं होगी, जो सञ्जयको प्रत्यक्ष न हो।[75] सञ्जय दिव्य दृष्टिसे सम्पन्न होकर सर्वज्ञ हो जायेंगे और तुम्हें युद्धकी बातें बतायेंगे।[76] कोई भी बात प्रकट हो या अप्रकट, दिनमें हो या रातमें अथवा वह मनमें ही क्यों न सोची गई हो, सञ्जय सब कुछ जान लेंगे।[77] सञ्जयको कोई अस्त्र काट नहीं सकेगा। इनको परिश्रम या थकावटकी बाधा भी नहीं होगी। गवल्गणके पुत्र सञ्जय इस युद्धमें अवश्य जीवित बच जायेंगे।[78]

---

74. न रोचये ज्ञातिवधं द्रष्टुं ब्रह्मर्षिसत्तम। युद्धमेतत् त्वशेषेण शृणुयां तव तेजसा (महाभीष्म० 2.7)।
75. एष ते सञ्जयो राजन् युद्धमेतद् भविष्यति। एतस्य सर्वसंग्रामेन परोक्षं भविष्यति (महाभीष्म० 2.9)।
76. चक्षुषा सञ्जयो राजन् दिव्येनैव समन्वितः। कथयिष्यति ते युद्धं सर्वज्ञश्च भविष्यति (महाभीष्म० 2.10)।
77. प्रकाशं वाऽप्रकाशं वा दिवा वा यदि वा निशि। मनसा चिन्तितमपि सर्वं वेत्स्यति सञ्जयः (महाभीष्म० 2.11)।
78. नैनं शस्त्राणि छेत्स्यन्ति नैनं बाधिष्यते श्रमः। गावल्गणिरयं जीवन् युद्धादस्माद् विमोक्ष्यते (महाभीष्म० 2.12)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इसके अतिरिक्त इस अवसरपर व्यासने ये दो बातें कही - 1. मैं समस्त कौरवों और पाण्डवोंकी कीर्त्तिका तीनों लोकोंमें विस्तार करूँगा। तुम शोक न करो।[79] 2. यह दैवका विधान है। इसे कोई मिटा नहीं सकता। अतः इसके लिए तुम्हें कोई शोक नहीं करना चाहिए। जहाँ धर्म है, उसी पक्षकी जीत होगी।[80]

इतना सब कुछ कहनेके पश्चात् धृतराष्ट्रको फिरसे कहने लगे - महाराज! इस युद्धमें महान् नर-संहार होगा क्योंकि मुझे इस समय ऐसे ही भयदायक अपशकुन दिखाई देने लगे हैं।[81]

[व्यास द्वारा अपशकुनोंका वर्णन]

जो अपशकुन व्यासको दिखाई दिए, उनका विवरण महाभारतमें इस प्रकार किया गया है, व्यासके शब्दोंमें - हे धृतराष्ट्र! प्रातः और सायं दोनों सन्ध्याओंके समय उदय और अस्तकी बेलामें मैं सूर्यको प्रतिदिन कबन्धोंसे घिरा हुआ देखता हूँ।[82] सन्ध्याके समय सूर्यदेवको तिरङ्गे घेरोंने सब ओरसे घेर रखा था। उनमें श्वेत और लाल रङ्गके घेरे दोनों किनारोंपर थे और बीचमें काले रङ्गका घेरा दिखाई देता था। इन

79. अहं तु कीर्त्तिमेतेषां कुरूणां भरतर्षभ। पाण्डवानां च सर्वेषां प्रथयिष्यामि मा शुचः (महाभीष्म॰ 2.13)।

80. दिष्टमेतन्नरव्याघ्र नाभिशोचितुमर्हसि। न चैव शक्यं संयन्तु यतो धर्मस्ततो जयः (महाभीष्म॰ 2.14)।

81. इह युद्धे महाराज भविष्यति महान् क्षयः। तथेह च निमित्तानि भयदान्युपलक्षये (महाभीष्म॰ 2.16)।

82. उभे पूर्वापरे सन्ध्ये नित्यं पश्यामि भारत। उदयास्तमने सूर्यं कबन्धैः परिवारितम् (महाभीष्म॰ 2.20)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

घेरोंके साथ बिजलियाँ भी चमक रही थी।[83] मुझे कार्त्तिककी पूर्णिमाको चन्द्रमा प्रभाहीन होनेसे दिखाई नहीं पड़ता था। उसकी कान्ति भी अग्निके समान प्रतीत होती थी।[84] देवताओंकी मूर्त्तियाँ काँपती, हँसती, मुँहसे खून उगलती, खिन्न होती और गिर पड़ती हैं।[85] सवेरे-सवेरे टिड्ढियोंके सैकड़ों दल सब ओर फैले हुए दिखाई देते हैं।[86] बादल धूल और मांसकी वर्षा करते हैं।[87] इस प्रकार व्यासने अपशकुनोंका विस्तृत विवरण प्रस्तुत किया।

अपशकुनोंके इस प्रसंगमें व्यासने कुछ अपशकुन ज्योतिषसे सम्बन्धित कहे हैं, उदाहरणके लिए राहुका सूर्यके निकट जाना, केतुका स्वाति नक्षत्रपर स्थित होना, वक्री मंगलका मघा नक्षत्रपर होना, बृहस्पतिका श्रवण नक्षत्रपर होना तथा शनिका पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्रपर होना।

व्यासने कुछ ऐसे अपशकुनोंका वर्णन किया, जो समाजकी विकृतिको प्रकट करते हैं, उदाहरणके लिए – गायोंके गर्भसे गदहोंका पैदा होना, पुत्रोंका माताओंके साथ सम्भोग करना, तीन सींग, चार नेत्र, पाँच पैर, दो मूत्रेन्द्रिय, दो मस्तक, दो पूँछ और अनेक दाढोंवाले

---

83. श्वेतलोहितपर्यन्ताः कृष्णग्रीवाः सविद्युतः। विवर्णाः परिघाः सन्धौ भानुमन्तमवारयन् (महाभीष्म॰ 2.21)।
84. अलक्ष्यः प्रभया हीनः पौर्णमासीं च कार्त्तिकीम्। चन्द्रोऽभूदग्निवर्णश्च पद्मवर्णनभस्तले (महाभीष्म॰ 2.23)।
85. देवताप्रतिमाश्चैव कम्पन्ति च हसन्ति च। वमन्ति रुधिरं चास्यैः खिद्यन्ति प्रपतन्ति च (महाभीष्म॰ 2.26)।
86. अरुणोदये प्रदृश्यन्ते शतशः शलभव्रजाः (महाभीष्म॰ 2.29)।
87. पर्जन्यः पांसुवर्षी च मांसवर्षी च भारत (महाभीष्म॰ 2.30)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अमङ्गमय पशुओंका जन्म लेना, शिखा और सींगवाले गरुड़ पक्षीका दिखाई देना। इस अवसरपर वेदव्यासने वेदवादी ब्राह्मणोंकी स्त्रियोंसे नगरमें गरुड़ और मोर पैदा करनेका उल्लेख किया।[88]

व्यासने कुछ एक भयंकर अपशकुनोंका उल्लेख करनेके साथ ही उसके फलका भी निरूपण किया, उदाहरणके लिए तेरह दिनोंमें अमावास्याका आ जाना और चन्द्रग्रहण तथा सूर्यग्रहणका एक साथ होना। इस अवसरपर व्यासने इस अपशकुनका फल प्रजाका विनाश बताया।[89] शस्त्र, जल, कवच और ध्वजाओंकी कान्तियोंको अग्निके समान लाल देखकर व्यासने महान् जनसंहारकी भविष्यवाणी की।[90] बहुतसे पक्षियोंको "पक्वा-पक्वा" इस शब्दका बारम्बार जोरसे उच्चारण करते देखकर और उनको ध्वजाओंके अग्रभागमें छिपकर देखनेपर व्यासने इस अपशकुनको राजाओंके विनाशका सूचक बताया।[91] व्यासके अतिरिक्त अन्य महर्षियोंने भी जब सम्पूर्ण दिशाओंको अन्धकारसे व्याप्त होते हुए देखा तो वे मशालें जलाकर घरसे बाहर निकले और एक-दूसरेके पास उपस्थित होकर अपना यह मत प्रकट किया - जान पड़ता है, यह भूमि सहस्त्रों भूमिपालोंका रक्तपान करेगी।[92]

---

88. स्त्रियो वै ब्रह्मवादिनाम् वैनतेयान् मयूरांश्च जनयन्ति पुरे तव (महाभीष्म॰ 3.5)।
89. अपर्वणि ग्रहेणैतौ प्रजाः संक्षिपयिष्यतः (महाभीष्म॰ 3.33)।
90. अग्निवर्णा यथा भासः शस्त्राणामुदकस्य च। कवचानां ध्वजानां च भविष्यति महाक्षयः (महाभीष्म॰ 3.22)।
91. पक्वापक्वेति सुभृशं वावाश्यन्ते वयांसि च। निलीयन्ते ध्वजाग्रेषु क्षयाय पृथिवीक्षिताम् (महाभीष्म॰ 3.44)।
92. भूमिपालसहस्राणां भूमिः पास्यति शोणितम् (महाभीष्म॰ 3.37)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अन्तमें भगवान् व्यासने बिजलीकी कड़कड़ाहटके साथ उल्काओंको गिरते देखकर यह कहा – आजकी रात बीतनेपर सवेरे ही तुम लोगोंको अपने अन्यायका फल मिलने लगेगा।[93] इस समय धृतराष्ट्रको सम्बोधन करते हुए व्यासने कहा कि तुम ऐसा उपाय करो, जिससे संसार विनाशसे बच जाए।[94] व्यासका यह निर्देश सुनकर धृतराष्ट्रने अपनी असमर्थता व्यक्त की और कहा कि भगवन्! मैं तो इसे पूर्वनिश्चित दैवका विधान मानता हूँ।[95] यदि राजा लोग क्षत्रियधर्मके अनुसार युद्धमें मारे जायेंगे तो वीरलोकको प्राप्त होकर सुखके भागी होंगे।[96]

[व्यासका धृतराष्ट्रको समयोचित उपदेश]

धृतराष्ट्रके ऐसा कहनेपर कुछ देर तक चिन्तन करनेके उपरान्त व्यास बोले– निःसन्देह काल ही इस जगत् का संहार करता है और वही पुनः इन सम्पूर्ण लोकोंकी सृष्टि करता है। यहाँ कोई भी वस्तु सदा नहीं रहने वाली है।[97] तुम अपने जाति-भाइयों, कौरवों, सगे-सम्बन्धियों, हितैषी-सुहृदोंको धर्मानुकूल मार्गका उपदेश करो, क्योंकि तुम उन सबको रोकनेमें समर्थ हो। जातिवधको अत्यन्त नीच कर्म बताया गया है। वह

93. अद्य चैव निशां व्युष्टामनयं समवाप्स्यथ (महाभीष्म॰ 3.35)।
94. भवानत्र प्राप्तकालं व्यवस्यताम्। यथा लोकः समुच्छेदं नायं गच्छेत भारत (महाभीष्म॰ 3.46)।
95. दिष्टमेतत् पुरा मन्ये भविष्यति नरक्षयः (महाभीष्म॰ 3.47)।
96. राजानः क्षत्रधर्मेण यदि वध्यन्ति संयुगे। वीरलोकं समासाद्य सुखं प्राप्स्यन्ति केवलम् (महाभीष्म॰ 3.48)।
97. असंशयं पार्थिवेन्द्र कालः संक्षिपते जगत्। सृजते च पुनर्लोकान् नेह विद्यति शाश्वतम् (महाभीष्म॰ 3.51)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मुझे अत्यन्त अप्रिय है। तुम यह अप्रिय कार्य न करो।[98] यह काल ही तुम्हारा पुत्र बनकर उत्पन्न हुआ है। वेद भी हिंसाकी प्रशंसा नहीं करता। हिंसासे किसी प्रकारका हित नहीं होता।[99] धृतराष्ट्र! तुम्हारा धर्म अत्यन्त लुप्त हो चुका है। अपने पुत्रोंको धर्मका मार्ग दिखाओ। क्या करोगे राज्य लेकर, जिसके लिए अपने ऊपर पापका बोझ लाद रहे हो।[100]

अन्तमें व्यासने कहा - यदि तुम मेरी बात मानोंगे तो यश, धर्म और कीर्त्तिका पालन करते हुए स्वर्ग प्राप्त करोगे। पाण्डव अपना राज्य प्राप्त करें तथा समस्त कौरव आपसमें सन्धि करके शान्त हों।[101]

[व्यास द्वारा विजयसूचक शुभ शकुनोंका वर्णन]

जब व्यास इस प्रकार धृतराष्ट्रको उपदेश दे रहे थे, बीचमें ही उनकी बात काटकर उन्होंने कहा - महर्षे! मेरी बुद्धि भी अधर्म करना नहीं चाहती, परन्तु क्या करूँ, मेरे पुत्र मेरे वशमें नहीं है।[102] मैं तो इस समय युद्धमें विजय पाने वाले लोगोंको जो शुभ लक्षण दीख पड़ते हैं,

---

98. धर्म्यं देशय पन्थानं समर्थो ह्यसि वारणे। क्षुद्रं जातिवधं प्राहुर्मा कुरुष्व ममाप्रियम् (महाभीष्म० 3.53)।
99. कालोऽयं पुत्ररूपेण तव जातो विशाम्पते। न वधः पूज्यते वेदे हितं नैव कथंचन (महाभीष्म० 3.54)।
100. लुप्तधर्मा परेणासि धर्मं दर्शय वै सुतान्। किं ते राज्येन दुर्धर्ष येन प्राप्तोऽसि किल्बिषम् (महाभीष्म० 3.57)।
101. यशो धर्मं च कीर्त्तिं च पालयन् स्वर्गमाप्स्यसि। लभन्तां पाण्डवा राज्यं शमं गच्छन्तु कौरवाः (महाभीष्म० 3.58)।
102. न चापि ते मद्वशगा महर्षे न चाधर्मं कर्तुमर्हा हि मे मतिः (महाभीष्म० 3. 61)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उन सबको यथार्थ रूपसे सुनना चाहता हूँ।[103] भगवान् व्यासने इस अवसरपर अग्निकी प्रभा निर्मल होने, अग्निमें डाली गई आहुतियोंके सुगन्धित होने, शङ्ख-मृदङ्गकी आवाज गम्भीर होने, पीछे-पीछे कौओंके चलने तथा उनकी आवाजमें मधुरता होने को भावी विजयका शुभ लक्षण बताया। इस अवसरपर ब्राह्मणोंके मतका प्रतिपादन करते हुए व्यासने कहा - राजहंस, शुक, क्रौञ्च तथा मोर यदि सैनिकोंकी प्रदक्षिणा करते हैं, तब युद्धमें निश्चित ही विजय होती है।[104]

इस अवसरपर व्यासने जिस विषयका विस्तारसे वर्णन किया और जो प्रासंगिक तथा तथ्यपूर्ण भी है, वह यह है कि जिस पक्षमें योद्धा शौर्यपूर्ण बातें करते हैं, जिस पक्षके योद्धाओंके हृदयमें सदा हर्ष और उत्साह बना रहता है, जिस पक्षकी सेनामें भगदड़ नहीं मचती तथा योद्धा पीछेकी ओर नहीं हटते, वहाँ विजय निश्चित ही होती है। व्यासका मानना है कि यदि पीछे पैर न हटाने वाले पाँच, छह और सात ही योद्धा हों तो भी वे निश्चित रूपसे विजयी होते हैं।[105] अन्तमें व्यास दो बातें कहते हैं - एक तो यह कि साम-दानरूप उपायसे जो विजय होती है, वह श्रेष्ठ विजय है। भेदनीतिके द्वारा शत्रुसेनामें फूट डालकर जो विजय प्राप्त की जाती है, वह मध्यम है और युद्धके द्वारा मार-काट मचाकर जो शत्रुको पराजित किया जाता है, वह सबसे निम्न श्रेणीकी

---

103. यानि लिङ्गानि संग्रामे भवन्ति विजयिष्यताम्। तानि सर्वाणि भगवञ्छ्रोतुमिच्छामि तत्त्वतः (महाभीष्म॰ 3.64)।

104. महाभीष्म॰ (3.65-68)।

105. अपि वा पञ्च षट् सप्त विजयन्त्यनिवर्तिनः (महाभीष्म॰ 3.83)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

विजय है।[106] दूसरी बात व्यासने यह कही कि सदा अधिक सेना होनेसे ही विजय नहीं होती है। युद्धमें जीत प्रायः अनिश्चित होती है। उसमें दैव ही सबसे बड़ा सहारा है।

जो संग्राममें विजयी होते हैं, वे ही कृतकार्य होते हैं।[107] इतना कहकर व्यास जी चले गए।[108]

व्यासके मुखसे सञ्जयको वर देने और उसके पश्चात् दिखाई देने वाले अपशकुनोंका विस्तृत विवरण तथा विजयी राजाओंको दीखने वाले शुभ शकुनोंको सुननेके पश्चात् धृतराष्ट्रने सञ्जयसे प्रश्न किया – कौरवों और पाण्डवोंकी सेनाओंका वह युद्ध जिस समय, जिस क्रमसे तथा जिस रूपमें हुआ था, वह सब कहो।[109]

महाराज धृतराष्ट्रके प्रश्नके उत्तरमें सञ्जय भगवान् वेदव्यासका स्मरण करके तथा उनकी दी हुई दिव्य शक्तिका स्मरण करके उस प्रसिद्ध युद्धका वर्णन प्रारम्भ करते हैं।

[सञ्जय द्वारा व्यासका स्मरण]

सञ्जय कहते हैं – राजन् जिनके कृपा प्रसादसे मुझे परम उत्तम दिव्य ज्ञान प्राप्त हुआ है, इन्द्रियातीत विषयको भी प्रत्यक्ष देखने वाली

---

106. उपायविजयं श्रेष्ठमाहुर्भेदेन मध्यमम्। जघन्य एष विजयो यो युद्धेन विशाम्पते (महाभीष्म० 3.81)।

107. न बाहुल्येन सेनाया जयो भवति नित्यशः। अध्रुवो हि जयो नाम दैवं चात्र परायणम्। जयवन्तो हि संग्रामे कृतकृत्या भवन्ति हि (महाभीष्म० 3.85)।

108. एवमुक्त्वा ययौ व्यासो धृतराष्ट्राय धीमते (महाभीष्म० 4.1)।

109. तथा तदभवद् युद्धं कुरुपाण्डवसेनयोः। क्रमेण येन यस्मिंश्च काले यच्च यथाभवत् (महाभीष्म० 14.79)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

दृष्टि मिली है, दूरसे भी सब कुछ सुननेकी शक्ति, दूसरेके मनकी बातोंको समझ लेनेकी सामर्थ्य, भूत और भविष्यका ज्ञान, शास्त्रके विपरीत चलने वाले मनुष्योंकी उत्पत्तिका ज्ञान, आकाशमें चलने-फिरनेकी उत्तम शक्ति तथा युद्धके समय अस्त्रोंसे अपने शरीरके अछूते रहनेका अद्‌भुत चमत्कार आदि बातें जिन महात्माके वरदानसे मेरे लिए सम्भव हुई हैं, उन्हीं आपके पिता पराशरनन्दन बुद्धिमान् व्यासजीको नमस्कार करके भरतवंशियोंके इस अद्‌भुत विचित्र एवं रोमाञ्चकारी युद्धका वर्णन प्रारम्भ करता हूँ।[110]

[व्यासकी कृपासे गीताका श्रवण]

भगवान् व्यासने कृपा करके सञ्जयको जो दिव्य दृष्टि दी अर्थात् दूर देशमें होने वाली समस्त घटनाओंको देखने-सुनने और समझने आदिकी अद्‌भुत शक्ति प्रदान की, उसीके कारण सञ्जयको भगवान् का यह श्रीमद्‌भगवद्‌गीता रूपी उपदेश सुननेको मिला इसीलिए भगवद्‌गीताके अन्तमें पुनः व्यासकी कृपाका स्मरण करते हुए सञ्जय कहते हैं - श्रीव्यासजीकी कृपासे दिव्य दृष्टि पाकर मैंने इस परम गोपनीय योगको अर्जुनके प्रति कहते हुए स्वयं योगेश्वर भगवान् कृष्णसे प्रत्यक्ष सुना है।[111]

[व्यासकी कृपासे सञ्जयको आकाशवाणीका सुनाई देना]

भीष्मने दो कारणोंसे पाण्डवोंके साथ युद्ध न करनेका निश्चय किया - 1. राजा पाण्डुकी सन्तान होनेके कारण भीष्मके लिए

---

110. महाभीष्म० (15.7-10)।

111. व्यासप्रसादाच्छ्रुतवानेतद् गुह्यमहं परम्। योगं योगेश्वरात् कृष्णात् साक्षात् कथयतः स्वयम् (महाभीष्म० 42.75)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पाण्डवोंका अवध्य होना 2. शिखण्डीका सामने आ जाना, जो पहले स्त्री था। इस अवसरपर पिता द्वारा दिए गए दो वर भी भीष्मको स्मरण हो आए, जिसमें एक वर यह था कि भीष्म जब चाहें तब प्राण त्याग सकते हैं दूसरा वर यह था कि भीष्मको कोई मार नहीं सकेगा।

अतः भीष्मने स्वेच्छासे ही मृत्यु स्वीकार करनेका मन बनाया। उसी समय भीष्मके इस निश्चयको जानकर आकाशमें खड़े हुए ऋषियों और वसुओंने भीष्मसे कहा – हे तात! तुमने जो निश्चय किया है, वह हम लोगोंको भी बहुत प्रिय है। अब तुम युद्धकी ओरसे अपनी चित्तवृत्तिको हटा लो।[112]

यह आकाशवाणी व्यासकी कृपासे केवल भीष्मको तथा सञ्जयको सुनाई पड़ी। यही बात स्वयं सञ्जय कहते हैं – हे धृतराष्ट्र! उस समय ऋषियोंके वे शब्द भीष्म और मुझको छोड़कर कोई नहीं सुन सका। मुझे तो महर्षि व्यासके प्रभावसे ही यह बात सुनाई पड़ी।[113]

[भीष्मको व्यासके माध्यमसे कर्णके जन्मका वृत्तान्त प्राप्त होना]

पाण्डवोंसे अत्यधिक वैर रखनेके कारण कर्णको भीष्म कभी-कभी अत्यन्त कटु वचन बोलते थे। शरशय्यापर आरूढ़ होनेका समाचार जाननेपर कर्णसे न रहा गया और वे भीष्मके समीप पहुँचे। भीष्मको देखकर उनकी आँखोंसे आँसू छलक आए और कहने लगे – भीष्म! मैं वही राधापुत्र कर्ण हूँ, जो सदा आपकी आँखोंमें गड़ा रहता

112. यत् ते व्यवसितं तात तदस्माकमपि प्रियम्। तत् कुरुष्व महाराज युद्धे बुद्धिं निवर्तय (महाभीष्म० 119.37)।

113. न च तच्छुश्रुवे कश्चित् तेषां संवदतां नृप। ऋते भीष्मं महाबाहुं मां चापि मुनितेजसा (महाभीष्म० 119.40)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

था और जिसे आप सदा द्वेषदृष्टिसे देखते थे। भीष्मने यह सुना और आँखें खोली। सभी पहरेदारों को हटाकर कर्णका आलिङ्गन किया और कहा – कर्ण! तुम राधाके नहीं, कुन्तीके पुत्र हो। तुम्हारे पिता अधिरथ नहीं, तुम सूर्यके पुत्र हो। मैंने नारदजीसे तुम्हारा परिचय प्राप्त किया था। इस अवसरपर भीष्मने यह भी कहा- कृष्णद्वैपायन व्याससे भी मुझे तुम्हारे जन्मका वृत्तान्त प्राप्त हुआ था।[114]

[अभिमन्युकी मृत्युपर विलाप करते हुए युधिष्ठिरको सान्त्वना देनेके लिए व्यासका आगमन]

सञ्जयको दिव्य दृष्टिका वरदान देनेके पश्चात् व्यास महाभारत युद्धके चलते इस अवसरपर युधिष्ठिरको सान्त्वना देनेके लिए उपस्थित होते हैं। अभिमन्युका अप्रतिम पराक्रम और अन्यायपूर्वक उसका वध होना अवश्य ही पाण्डवोंके लिए हृदयविदारक था। व्यासके पहुँचनेपर युधिष्ठिरने अपना दुःख प्रकट किया कि बहुतसे अधर्मपरायण महाधनुर्धर महारथियोंने चारों ओरसे घेरकर रणक्षेत्रमें युद्ध करते हुए सुभद्राकुमारको असहायावस्थामें मार डाला।[115] युधिष्ठिरको शोकसन्तप्त देखकर व्यास उन्हें इस प्रकार सान्त्वना देने लगे – तुम जैसे पुरुषोंको संकटके समय मोहित नहीं होना चाहिए।[116] अभिमन्यु तो शूरवीर था। उसने रणक्षेत्रमें अबालोचित पराक्रम करके बहुतसे शत्रुओंको मारकर स्वर्गलोकी यात्रा

---

114. कृष्णद्वैपायनाच्चैव तच्च सत्यं न संशयः (महाभीष्म० 122.10)।
115. अधर्मयुक्तैर्बहुभिः परिवार्य महारथैः। युध्यमानो महेष्वासैः सौभद्रो निहतो रणे (महाद्रोण० 52.3)।
116. व्यसनेषु न मुह्यन्ति त्वादृशा भरतर्षभ (महाद्रोण० 52.9)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

की है।[117] युधिष्ठिर! यह विधाताका विधान है। इसका कोई भी उल्लंघन नहीं कर सकता। मृत्यु देवताओं, दानवों तथा गन्धर्वोंके भी प्राण हर लेती है।[118] ब्रह्मचर्यका पालन करनेसे, उत्तम ज्ञान, वेद-शास्त्रोंके स्वाध्यायसे तथा यज्ञोंके अनुष्ठानसे पुण्यात्मा पुरुष जिन किन्हीं लोकोंमें जाते हैं, उन्हीं अक्षय लोकोंमें तुम्हारा पुत्र अभिमन्यु भी गया है।[119] विद्वान् पुरुष पुण्यकर्मोंके द्वारा सदा स्वर्गलोकमें जानेकी इच्छा रखते हैं परन्तु स्वर्गवासी पुरुष स्वर्गसे इस लोकमें आनेकी कामना नहीं करते हैं।[120] अर्जुनका पुत्र युद्धमें मारे जानेके कारण स्वर्गलोकमें गया हुआ है। अतः उसे यहाँ नहीं लाया जा सकता। कोई अप्राप्य वस्तु केवल इच्छा करने मात्रसे सुलभ नहीं हो जाती।[121] वीर अभिमन्यु मृत्युके पश्चात् पुनः पूर्वभावको प्राप्त हो गए हैं। चन्द्रमासे उत्पन्न अभिमन्यु अपने द्विजोचित शरीरमें प्रतिष्ठित हो गए हैं। अतः युधिष्ठिर! अभिमन्युके लिए तुम्हें शोक नहीं करना चाहिए।[122] राजन्! ऐसा समझकर तुम्हें सुस्थिर होना चाहिए। धैर्यका आश्रय लेना चाहिए तथा उत्साहपूर्वक शत्रुओंका वध

117. स्वर्गमेष गतः शूरः शत्रून् हत्वा बहून् रणे। अबालसदृशं कर्म कृत्वा वै पुरुषोत्तमः (महाद्रोण॰ 52.10)।
118. अनतिक्रमणीयो वै विधिरेष युधिष्ठिर। देवदानवगन्धर्वान् मृत्युर्हरति भारत (महाद्रोण॰ 52.11)।
119. ब्रह्मचर्येण यान् कांश्चित् प्रज्ञया च श्रुतेन च। इष्टैश्च क्रतुभिर्यान्ति तांस्ते पुत्रोऽक्षयान् गतः (महाद्रोण॰ 71.13)।
120. विद्वांसः कर्मभिः पुण्यैः स्वर्गमीहन्ति नित्यशः। न तु स्वर्गादयं लोकः काम्यते स्वर्गवासिभिः (महाद्रोण॰ 71.14)।
121. तस्मात् स्वर्गगतं पुत्रमर्जुनस्य हतं रणे। न चेहानयितुं शक्यं किंचिदप्राप्तमीहितम् (महाद्रोण॰ 71.15)।
122. अन्तात् पुनर्भावगतो विराजते राजेव वीरो ह्यमृतात्मरश्मिभिः। तामैन्दवीमात्मतनुं द्विजोचितां गतोभिमन्युर्न स शोकमर्हति (महाद्रोण॰ 71.17)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

करना चाहिए। हमें इस संसारमें जीवित पुरुषोंके लिए ही शोक करना चाहिए। जो स्वर्गमें चला गया है, उसके लिए शोक करना उचित नहीं है।[123]

अन्तमें व्यासने कहा – युधिष्ठिर! शोक करनेसे केवल दुःख ही बढ़ता है। अतः विद्वान् पुरुषको उत्कृष्ट हर्षका चिन्तन करना चाहिए, अतिशय सम्मान तथा सुखप्राप्तिका चिन्तन करना चाहिए एवं शोकका परित्याग करके अपने कल्याणके लिए प्रयत्न करना चाहिए।[124] राजन्! ऐसा जानकर तुम युद्धके लिए उठो। मन और इन्द्रियोंको संयममें रखो तथा शोक न करो।[125] अब मैं अपनी साधनामें लग रहा हूँ। ऐसा कहकर भगवान् व्यास वहीं अन्तर्धान हो गए।[126]

[व्यासकी भविष्यवाणी]

पाण्डव पक्षके योद्धा घटोत्कचके मारे जानेके बाद युधिष्ठिर शोक सन्तप्त हो जाते हैं। कृष्णको यह अच्छा नहीं लगता और कहते हैं कि आपके लिए मूढ़ मनुष्योंकी सी यह व्याकुलता शोभा नहीं देती। उठिए और युद्ध कीजिए। इस अवसरपर घटोत्कचके उपकार एवं उसकी सेवाका स्मरण करके युधिष्ठिर सोचने लगते हैं कि मुझे कर्णका वध करना चाहिए और उतावलीके साथ चल पड़ते हैं। इस समय महर्षि व्यास उनके समक्ष प्रकट होकर इस प्रकार बोलते हैं – युधिष्ठिर! यह

---

123. एवं ज्ञात्वा स्थिरो भूत्वा जह्यरीन् धैर्यमाप्नुहि। जीवन्त एव नः शोच्या न तु स्वर्गगतोऽनघ (महाद्रोण० 71.18)।
124. शोचतो हि महाराज अघमेवाभिवर्धते। तस्माच्छोकं परित्यज्य श्रेयसे प्रयतेद् बुधः। प्रहर्षमभिमानं च सुखप्राप्तिं च चिन्तयन् (महाद्रोण० 71.20)।
125. एवं विद्वान् समुत्तिष्ठ प्रयतो भव मा शुचः (महाद्रोण० 71.21)।
126. एतावदुक्त्वा भगवांस्तत्रैवान्तरधीयत (महाद्रोण० 71.23)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हर्षका विषय है कि युद्धमें सूतपुत्र कर्णने उस राक्षसको ही मारा है। वास्तवमें इन्द्रकी शक्तिको निमित्त बनाकर कालने ही उसका वध किया।[127] युधिष्ठिर! समस्त भाइयों तथा राजाओंके साथ जाकर समरभूमिमें कौरवोंका सामना करो। आजके पाँचवें दिन यह सारी पृथिवी तुम्हारी हो जायेगी।[128] तुम्हें सदा धर्मका ही चिन्तन करना चाहिए। दयाभाव, तपस्या, दान, क्षमा और सत्य आदि सद्गुणोंका अत्यन्त प्रसन्नतापूर्वक सेवन करना चाहिए, क्योंकि जिस पक्षमें धर्म होता है, उसी पक्षकी जीत होती है।[129] पाण्डुपुत्र युधिष्ठिरसे ऐसा कहकर महर्षि व्यास वहीं अन्तर्धान हो गए।[130]

[व्यासकी कृपासे द्रोणाचार्यके ब्रह्मलोक गमनको सञ्जयके द्वारा प्रत्यक्ष रूपसे देखा जाना]

द्रोणाचार्य और धृष्टद्युम्नके बीच भयंकर युद्ध हुआ। दोनोंके द्वारा एक दूसरेके ऊपर अनेक दिव्यास्त्रोंका प्रयोग किया गया, अन्तमें द्रोणाचार्यने धृष्टद्युम्नका धनुष काट डाला और बाण छोड़कर मर्मान्तक पीड़ा पहुँचाई। इस अवसरपर भीमसेनने द्रोणाचार्यके प्रति अत्यन्त कटु वचनोंका प्रयोग करते हुए कहा – हे ब्रह्मन्! प्राणियोंकी हिंसा न करना

---

127. दिष्ट्या रक्षो हतं युद्धे सूत्रपुत्रेण मानद। वासवीं कारणं कृत्वा कालेनोपहतो ह्यसौ (महाद्रोण॰ 183.62)।

128. भ्रातृभिः सहितः सर्वैः पार्थिवैश्च महात्मभिः। कौरवान् समरे राजन् प्रतियुध्यस्व भारत। पञ्चमे दिवसे तात पृथिवी ते भविष्यति (महाद्रोण॰ 183.65)।

129. नित्यं च पुरुषव्याघ्र धर्ममेवानुचिन्तय। आनृशंस्यं तपो दानं क्षमा सत्यं च पाण्डव। सेवेथाः परमप्रीतो यतो धर्मस्ततो जयः (महाद्रोण॰ 183.66)।

130. इत्युक्त्वा पाण्डवं व्यासस्तत्रैवान्तरधीयत (महाद्रोण॰ 183.67)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ही सर्वश्रेष्ठ धर्म माना गया है।[131] प्राणियोंकी हिंसा करना ब्राह्मणका धर्म नहीं है, और फिर आप तो ब्राह्मणोंमें भी सबसे उत्तम ब्रह्मवेत्ता हैं। ब्रह्मवेत्ता होकर भी आपने स्त्री, धन और पुत्रकी लिप्सासे मूर्ख चाण्डालोंके समान कितने ही म्लेच्छों तथा क्षत्रियसमूहोंका संहार कर डाला है।[132] आप अपने एक पुत्रकी जीविकाके लिए विपरीत कर्मका आश्रय लेकर इस पाप-विद्याके द्वारा अपने धर्मका पालन करने वाले क्षत्रियोंका वध करके लज्जित कैसे नहीं हो रहे हैं[133]?

महाभारतके अनुसार भीमसेनके ऐसे वचनोंको सुनकर द्रोणाचार्यने अपने अस्त्र-शस्त्रोंको त्यागनेका विचार किया। कर्ण, कृपाचार्य तथा दुर्योधनके प्रति पुकार-पुकार कहा – तुम ही युद्धमें विजय पानेका प्रयत्न करो। रथके पृष्ठभागमें पहुँचकर समाधि लगाकर विष्णुका ध्यान करने लगे और ॐ इस एकाक्षर ब्रह्मका जप करते हुए साक्षात् उस ब्रह्मलोकमें चले गए, जहाँ पहुँचना सन्तोंके लिए भी दुर्लभ है। सञ्जयको लगा जैसे दो सूर्य उदित हो गए हों। पलक मारते ही वह ज्योति आकाशमें जाकर अदृश्य हो गई।

महाभारतके अनुसार सञ्जय, अर्जुन, कृपाचार्य, कृष्ण और युधिष्ठिर इन पाँचोंने चार सौ वर्षकी अवस्था वाले द्रोणको परम धामकी ओर जाते हुए देखा। इस अवसरपर सञ्जयने यह भी स्पष्ट किया कि

---

131. अहिंसां सर्वभूतेषु धर्मं ज्यायस्तरं विदुः (महाद्रोण॰ 192.38)।
132. श्वपाकवन्म्लेच्छगणान् हत्वा चान्यान् पृथग्विधान्। अज्ञानान्मूढवद् ब्रह्मन् पुत्रदारधनेप्सया (महाद्रोण॰ 192.39)।
133. एकस्यार्थे बहून् हत्वा पुत्रस्याधर्मविद्यया। स्वकर्मस्थान् विकर्मस्थो न व्यपत्रपसे कथम् (महाद्रोण॰ 192.40)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

द्रोणाचार्य आकाशमें पहुँचकर नक्षत्रोंके पथमें प्रविष्ट हो गए। मैंने उनकी यह दिव्य मृत्यु श्रीकृष्णद्वैपायनके प्रसादसे प्रत्यक्ष देखी।[134]

[कृष्ण और अर्जुनपर आग्नेयास्त्रका प्रभाव न पड़ना तथा अश्वत्थामाके चिन्तित होनेपर व्यास द्वारा उसका कारण समझाना]

द्रोणाचार्यके शरीरसे प्राण निकल गए थे, तब भी धृष्टद्युम्नने उनके मस्तकके बाल पकड़कर तलवारसे उनके सिरको धड़से अलग कर दिया था।[135] इससे द्रोणाचार्यके पुत्र अश्वत्थामाने कुपित होकर पाण्डव सेनापर आग्नेयास्त्रका प्रयोग किया। आग्नेयास्त्रके प्रयोगसे पाण्डवोंकी सारी अक्षौहिणी सेना दग्ध और नष्ट हो गई।[136] किन्तु अर्जुनके द्वारा ब्रह्मास्त्रके प्रयोगसे दो ही घड़ीमें सारा अन्धकार दूर हो गया तथा शीतल वायु बहने लगी एवं सभी दिशाएँ स्वच्छ हो गई।[137] आग्नेयास्त्रके प्रभावसे मुक्त हुए कृष्ण और अर्जुन एक साथ दिखाई दिए।[138] उन दोनोंके शरीरपर जरा भी आँच नहीं आई। पताका, ध्वज, घोड़ोंके सहित रथ चमकता हुआ दिखाई पड़ने लगा।

---

134. द्रोणस्तु दिवमास्थाय नक्षत्रपथमाविशत्। अहमेव तदाद्राक्षं द्रोणस्य निधनं नृप। ऋषेः प्रसादात् कृष्णस्य सत्यवत्याः सुतस्य च (महाद्रोण॰ 192.72)।
135. तस्य मूर्धानमालम्ब्य गतसत्त्वस्य देहिनः। किञ्चिदब्रुवतः कायाद् विचकर्तासिना शिरः (महाद्रोण॰ 192.62)।
136. कृत्स्नामक्षौहिणीं हताम् (महाद्रोण॰ 201.38)।
137. ततो मुहूर्तादिव तत् तमो व्युपशशामह। प्रववौ चानिलः शीतो दिशश्च विमला बभुः (महाद्रोण॰ 201.37)।
138. ततो वीरौ महेष्वासौ विमुक्तौ केशवार्जुनौ। सहितौ प्रत्यदृश्येतां नभसीव तमोनुदौ (महाद्रोण॰ 201.39)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कृष्ण और अर्जुनको आग्नेयास्त्रसे मुक्त हुआ देखकर अश्वत्थामाको बड़ा दुःख हुआ।[139] दो घड़ी तक वह इसी चिन्तामें डूबा रहा कि यह क्या हो गया।[140] गरम-गरम लम्बे श्वास लेने लगा और मन ही मन उदास हो गया। फिर धनुषको छोड़ रथसे कूद पड़ा और यह कहकर रणभूमिसे वेगपूर्वक भागने लगा कि धिक्कार है! धिक्कार है! यह सब कुछ मिथ्या है।[141]

इतने ही में महर्षि व्यास वहाँ दिखलाई दिए, जो चिकने मेघके समान साँवले, वेद और सरस्वतीके आवासस्थान, वेदोंका विस्तार करने वाले तथा जो पापसे शून्य थे।[142]

व्यासको देखकर अश्वत्थामाने उन्हें प्रणाम कर अपना दर्द कह सुनाया। उसका कहना था - यह अस्त्र झूठा कैसे हो गया। मुझसे कौन सी गलती हो गई। ये दोनों कृष्ण और अर्जुन बच निकले, इस अस्त्रके प्रभावमें कोई उलटफेर तो नहीं हो गया। निश्चय ही कालका उल्लंघन करना अत्यन्त कठिन है।[143]

अश्वत्थामाकी बात सुनकर व्यासने अर्जुन और कृष्णके द्वारा पूर्वजन्ममें की गई तपस्या, शिवसे वरदानकी प्राप्ति तथा उनकी

---

139. विमुक्तौ च महात्मानौ दृष्ट्वा द्रौणिः सुदुःखितः (महाद्रोण॰ 201.45)।
140. मुहूर्तं चिन्तयामास किं त्वेतदिति मारिष (महाद्रोण॰ 201.45)।
141. ततो द्रौणिर्धनुस्त्यक्त्वा रथात् प्रस्कन्द्य वेगितः। धिग् धिग् सर्वमिदं मिथ्येत्युक्त्वा सम्प्राद्रवद् रणात् (महाद्रोण॰ 201.47)।
142. ततः स्निग्धाम्बुदाभासं वेदावासमकल्मषम्। वेदव्यासं सरस्वत्यावासं व्यासं ददर्श ह (महाद्रोण॰ 201.48)।
143. अस्त्रं त्विदं कथं मिथ्या मम कश्च व्यतिक्रमः। यदिमौ जीवतः कृष्णौ कालो हि दुरतिक्रमः (महाद्रोण॰ 201.50)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

महिमाका विस्तारपूर्वक वर्णन किया।[144] इसीके बाद अश्वत्थामाने शंकरको मन ही मन प्रणाम किया तथा कृष्णकी महत्ता स्वीकार की।

सञ्जयके अनुसार – अश्वत्थामाके शरीरमें रोमाञ्च हो आया और विनीत भावसे महर्षि व्यासको प्रणाम किया। अश्वत्थामाने अपनी सेनाको देखकर उसे छावनीमें लौटनेकी आज्ञा दी।[145]

[व्यास द्वारा अर्जुनके प्रश्नका समाधान]

सञ्जयके प्रति धृतराष्ट्रका प्रश्न था कि द्रोणाचार्यके वधके पश्चात् पाण्डुपुत्रोंने आगे क्या किया। सञ्जयने उत्तर दिया कि अकस्मात् आए हुए भगवान् व्याससे अर्जुनने एक आश्चर्यमयी घटनाको उनके सम्मुख कहा। अर्जुनने कहा – शत्रुओंका संहार करते हुए मुझे दिखाई देता था कि कोई तेजस्वी पुरुष मेरे आगे-आगे चल रहे हैं। वे जलता हुआ शूल हाथमें लेकर जिस ओर जाते, उसी दिशामें मेरे शत्रुओंका संहार हो जाता है। वे पृथिवीका स्पर्श नहीं करते थे। उसी त्रिशूलसे सहस्रों नए-नए शूल प्रकट होकर शत्रुओंपर गिरते थे।[146] भगवन् मुझे बताइए, हाथमें त्रिशूल लिए हुए वे तेजस्वी महापुरुष कौन थे।[147]

इस प्रश्नको सुनकर भगवान् व्यास शिवकी महिमाका अत्यन्त विस्तारके साथ वर्णन करते हैं। यजुर्वेदमें वर्णित शतरुद्रीयकी व्याख्या

---

144. महाद्रोण॰ (201.56-96)।
145. हृष्टरोमा च वश्यात्मा सोऽभिवाद्य महर्षये। वरूथिनीमभिप्रेक्ष्य ह्यवहारमकारयत् (महाद्रोण॰ 201.98)।
146. महाद्रोण॰ (202.4-6)।
147. भगवंस्तन्ममाचक्ष्व को वै स पुरुषोत्तमः। शूलपाणिर्मया दृष्टस्तेजसा सूर्यसंनिभः (महाद्रोण॰ 202.7)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

करते हैं तथा शिवके मुख्य नामोंकी व्युत्पत्ति बताते हैं। इसके बाद कहते हैं - अर्जुन! संग्रामभूमिमें जो तुम्हारे आगे शत्रुओंका संहार करते हुए दिखाई दिए, वे पिनाकधारी शिव ही थे।[148]

इस समय व्यासने एक अन्य महत्त्वपूर्ण घटना स्मरण करते हुए कहा - अर्जुन! जब तुमने सिन्धुराज जयद्रथके वधकी प्रतिज्ञा की थी, उस समय स्वप्नमें कृष्णने तुम्हें गिरिराजके शिखरपर जिनका दर्शन कराया था, ये वे ही शंकर संग्राममें तुम्हारे आगे-आगे चल रहे थे। उन्होंने ही तुम्हें वे दिव्यास्त्र प्रदान किए थे, जिनके द्वारा तुमने दानवोंका संहार किया।[149]

[महामुनि व्यासकी वाणीका प्रभाव]

यद्यपि कर्णपर्वके अन्तर्गत अनेक घटनाएँ घटित होती है, कर्ण जैसे महायोद्धाका अन्त होता है। भयंकर विषादपूर्ण स्थिति प्रकट होती है किन्तु इस पर्वमें व्यासकी कोई भूमिका दिखाई नहीं पड़ती। कर्णपर्वके अन्तमें वैशम्पायन अवश्य यह कहते हैं कि इस पर्वमें सनातन भगवान् विष्णुकी महिमाका वर्णन किया गया, अतः जो मनुष्य इस पर्वका स्वाध्याय करेगा, उसकी मनोवांछित कामनाएँ पूरी होगी। महामुनि वेदव्यासकी इस परम पूजित वाणीका ऐसा ही प्रभाव है।[150]

---

148. एष देवो महादेवो योऽसौ पार्थ तवाग्रतः। संग्रामे शात्रवान् निघ्नंस्त्वया दृष्टः पिनाकधृक् (महाद्रोण॰ 202.145)।
149. सिन्धुराजवधार्थाय प्रतिज्ञाते त्वयानघ। कृष्णेन दर्शितः स्वप्ने यस्तु शैलेन्द्रमूर्धनि। एष वै भगवान् देवः संग्रामे याति तेऽग्रतः। येन दत्तानि तेऽस्त्राणि यैस्त्वया दानवा हताः (महाद्रोण॰ 146-147)।
150. तथैव विष्णुर्भगवान् सनातनः स चात्र देवः परिकीर्त्यते यतः। ततः स कामाल्लँभते सुखी नरो महामुनेस्तस्य वचोऽर्चितं यथा (महाकर्ण॰ 96.44)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

[व्यासके कहनेसे सञ्जयका कैदसे छूटना].

इस युद्धमें जहाँ सञ्जय धृतराष्ट्रको युद्धका वृत्तान्त सुनाते हैं, वहीं वे एक योद्धा भी है और युद्ध करते हैं। अन्तमें जब बची हुई समस्त कौरव सेनाका संहार होता है, उस समय सात्यकिने चार सौ रथियोंके साथ सञ्जयके ऊपर धावा बोला। सात्यकिकी मारसे सञ्जय युद्धभूमिमें मूर्च्छित होकर गिर गए और जीवित ही पकड़ लिए गए। सञ्जयको कैदमें पड़ा हुआ देखकर धृष्टद्युम्नने सात्यकिसे हँसते हुए कहा - इसे कैद करके क्या करना है। इसके जीवित रहनेसे भी कोई लाभ नहीं। ऐसा सुनकर शिनिके पौत्र सात्यकि पैनी तलवार लेकर उसी क्षण सञ्जयको मारनेके लिए उद्यत हो गए।

उस समय कृष्णद्वैपायन व्यास सहसा आकर बोले - सञ्जयको जीवित छोड़ दो। यह किसी भी प्रकार वधके योग्य नहीं है।[151] हाथ जोड़े हुए सात्यकिने व्यासकी वह बात सुनकर सञ्जयको कैदसे मुक्त करते हुए कहा - सञ्जय! तुम्हारा कल्याण हो। जाओ, अपना अभीष्ट साधन करो।[152] इसके बाद रणभूमिसे निकलते हुए सञ्जयको व्यासने कहा था कि दुर्योधनके पक्षमें अब शरद्वान् के पुत्र कृपाचार्य, अश्वत्थामा तथा भोजवंशी कृतवर्मा ये तीन ही महारथी बचे हैं।[153]

---

151. तमागम्य महाप्राज्ञः कृष्णद्वैपायनोऽब्रवीत्। मुच्यतां सञ्जयो जीवन्न हन्तव्यः कथंचन (महाशल्य॰ 29.39)।
152. स्वस्ति सञ्जय साधय (महाशल्य॰ 29.40)।
153. त्रयः किल रथाः शिष्टास्तावकानां नराधिप। इति प्रस्थानकाले मां कृष्णद्वैपायनोऽब्रवीत् (महाशल्य॰ 29.48)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

[सञ्जयको व्यास द्वारा दी गई दिव्य दृष्टिका नष्ट होना]

गदायुद्धमें दुर्योधनकी जाँघे टूट जानेसे वह जब अचेत अवस्थामें था, उस समय अश्वत्थामा उस सरोवरपर पहुँचकर दुर्योधनको द्रौपदीके पाँचों पुत्रोंके वधका समाचार सुनाता है। यह समाचार सुनकर दुर्योधनको होश आ जाता है। दुर्योधन कहता है - अश्वत्थामा! यह जो काम तुमने कर दिखाया, यह तो न भीष्मने किया, न कर्णने किया और न तुम्हारे पिता ही कर सके।[154] "तुम लोगोंका कल्याण हो। तुम्हें सुख प्राप्त हो। अब स्वर्गमें ही हम लोगोंका पुनर्मिलन होगा" ऐसा कहकर दुर्योधन प्राण त्याग कर देता है। धृतराष्ट्रको यह प्रसंग सुनाते हुए सञ्जय स्वयं कहते हैं कि अश्वत्थामासे यह समाचार सुनकर मैं स्वयं शोकसे व्याकुल हो उठा और प्रातःकाल नगरकी ओर दौड़ा चला आया।[155] इसके बाद सञ्जय धृतराष्ट्रसे कहते हैं - धृतराष्ट्र! इस प्रकार आपकी कुमन्त्रणाके अनुसार कौरवों और पाण्डवोंकी सेनाओंका यह घोर एवं भयंकर विनाशकार्य सम्पन्न हुआ है। आपके पुत्रके स्वर्गलोकमें चले जानेसे मैं शोकसे आतुर हो गया हूँ और महर्षि व्यास द्वारा दी हुई मेरी वह दिव्य दृष्टि भी अब नष्ट हो गई है।[156] यह स्वाभाविक ही था, क्योंकि युद्धका वृत्तान्त सुनानेके लिए ही व्यास द्वारा सञ्जयको यह दिव्य दृष्टि दी गई थी।

---

154. न मेऽकरोत् तद् गाङ्गेयो न कर्णो न च ते पिता। यत् त्वया कृपभोजाभ्यां सहितेनाद्य मे कृतम् (महासौप्तिक॰ 9.54)।
155. इत्येवं द्रोणपुत्रस्य निशम्य करुणां गिरम्। प्रत्यूषकाले शोकार्तः प्राद्रवन्नगरं प्रति (महासौप्तिक॰ 9.60)।
156. ऋषिदत्तं प्रणष्टं तद् दिव्यदर्शित्वमद्य वै (महासौप्तिक॰ 9.62)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

[अश्वत्थामा और अर्जुन द्वारा छोड़े गए ब्रह्मास्त्रोंको शान्त करानेके उद्देश्यसे नारद एवं व्यासका आगमन]

पुत्रशोकसे व्याकुल होकर बदला लेनेके लिए भीमसेन अश्वत्थामाका पीछा करते हैं। कृष्ण जानते थे कि अश्वत्थामा क्रोधी, दुष्टात्मा, चपल एवं क्रूर है। अतः अनर्थकी आशंकासे कृष्ण युधिष्ठिरसे भीमसेनकी रक्षा करनेके लिए कहते हैं। ऐसा सुनकर युधिष्ठिर भीमके पीछे-पीछे चलते हैं, साथमें अर्जुन एवं श्रीकृष्ण भी पीछे-पीछे जाते हैं। गंगातटपर पहुँचकर वे अश्वत्थामाको ललकारते हैं। तीनोंको देखकर अश्वत्थामा घबरा जाते हैं और ब्रह्मास्त्रका प्रयोग करते हैं। कृष्णने तुरन्त अर्जुनको ब्रह्मास्त्रका प्रयोग करनेके लिए कहा, जिससे अश्वत्थामा द्वारा छोड़े गए ब्रह्मास्त्रका निवारण हो सके। कृष्णका वचन सुनकर अर्जुनने भी ब्रह्मास्त्रका प्रयोग किया।

इस अवसरपर कहा गया है कि ब्रह्मास्त्रके कारण बारंबार वज्रपातके समान शब्द होने लगे। आकाशसे सहस्त्रों उल्काएँ टूट-टूटकर गिरने लगी। आकाश आगकी प्रचण्ड ज्वालाओंसे व्याप्त हो उठा। पर्वत-वन और वृक्षों सहित सारी पृथिवी हिलने लगी।[157]

इस समय नारद और व्यास इन दोनों वीरोंको शान्त करनेके लिए इनके प्रज्वलित अस्त्रोंके बीचमें खड़े हो गए। उन दोनों ऋषियोंने उन दोनों वीरोंसे कहा - नाना प्रकारके शस्त्रोंके जानकार होते हुए भी किसी महारथीने मनुष्योंपर इस अस्त्रका प्रयोग नहीं किया। तुम दोनोंने यह

---

157. निर्घाता बहवश्चासन् पेतुरुल्काः सहस्रशः। महद्भयं च भूतानां सर्वेषां समजायत। सशब्दमभवद् व्योम ज्वालामालाकुलं भृशम्। चचाल च मही कृत्स्ना सपर्वतवनद्रुमा (महासौप्तिक॰ 14.9-10)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

महान् विनाशकारी दुःसाहस क्यों किया।[158] ऐसा सुनकर अर्जुनने दोनों ऋषियोंसे कहा – मैंने तो इसी उद्देश्यसे यह अस्त्र छोड़ा था कि इसके द्वारा अश्वत्थामाका छोड़ा हुआ ब्रह्मास्त्र शान्त हो जाए।[159] इसके बाद जितेन्द्रिय, सत्यव्रतधारी शूरवीर अर्जुनने अपना ब्रह्मास्त्र लौटा लिया। किन्तु जितेन्द्रिय न होनेके कारण अश्वत्थामा ब्रह्मास्त्रको लौटानेमें समर्थ नहीं हो सके। उसने व्याससे कहा – मैंने भीमसेनके भयसे भारी संकटमें पड़कर अपने प्राणोंको बचानेके लिए ही यह अस्त्र छोड़ा था।[160] मुने! पाण्डवोंका नामो-निशान मिट जाए, इस उद्देश्यसे मैंने ब्रह्मास्त्र छोड़ा था।[161] व्यासने कहा – अर्जुन भी तो ब्रह्मास्त्रके ज्ञाता हैं। उन्होंने तो कुपित होकर तुम्हारे नाशके लिए ब्रह्मास्त्र नहीं छोड़ा।[162] इस अवसरपर व्यास एक महत्त्वपूर्ण जानकारी देते हुए कहते हैं – जिस देशमें एक ब्रह्मास्त्रको दूसरे उत्कृष्ट अस्त्रसे दबा दिया जाता है, उस राष्ट्रमें बारह वर्षों तक वर्षा नहीं होती है।[163]

---

158. नानाशास्त्रविदः पूर्वे येऽप्यतीता महारथाः। नैतदस्त्रं मनुष्येषु तैः प्रयुक्तं कथंचन। किमिदं साहसं वीरौ कृतवन्तौ महात्ययम् (महासौप्तिक० 14.16)।
159. उवाच भरतश्रेष्ठ तावृषी प्राञ्जलिस्तदा। प्रमुक्तमस्त्रमस्त्रेण शाम्यतामिति वै मया (महासौप्तिक० 15.2)।
160. उत्तमव्यसनार्तेन प्राणत्राणमभीप्सुना। मयैतदस्त्रमुत्सृष्टं भीमसेनभयान्मुने (महासौप्तिक० 15.13)।
161. विसृष्टि हि मया दिव्यमेतदस्त्रं दुरासदम्। अपाण्डवायेति मुने वह्नितेजोऽनुमन्त्र्य वै (महासौप्तिक० 15.16)।
162. अस्त्रं ब्रह्मशिरस्तात विद्वान् पार्थो धनञ्जयः। उत्सृष्टवान्न रोषेण न नाशाय तवाहवे (महासौप्तिक० 15.19)।
163. अस्त्रं ब्रह्मशिरो यत्र परमास्त्रेण वध्यते। समा द्वादश पर्जन्यस्तद्राष्ट्रं नाभिवर्षति (महासौप्तिक० 15.23)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इसीलिए प्रजाकी रक्षाके लिए अर्जुन शक्तिशाली होते हुए भी तुम्हारे अस्त्रको नष्ट नहीं कर रहे हैं।[164]

आगे व्यासने कहा – तुम्हारे सिरमें जो मणि है, इसे आज इन्हें दे दो। इस मणिको लेकर पाण्डव बदलेमें तुम्हें प्राणदान देंगे।[165] अश्वत्थामा बोले – पाण्डवोंने अब तक जो-जो रत्न प्राप्त किए हैं तथा कौरवोंने भी यहाँ जो धन पाया है, मेरी यह मणि उन सबसे अधिक मूल्यवान् है।[166] इसे बाँध लेनेपर शस्त्र, व्याधि, क्षुधा, देवता, दानव अथवा नाग किसीसे भी किसी तरहका भय नहीं रहता। न राक्षसोंका भय रहता है न चोरोंका। इस मणिका ऐसा अद्भुत प्रभाव है। इसलिए मुझे इसका त्याग तो किसी भी प्रकार नहीं करना चाहिए। किन्तु आप पूज्यपाद महर्षि मुझे जो आज्ञा देते हैं, उसीका मुझे अब पालन करना है। अतः यह रही मणि और यह रहा मैं। इस छोड़े हुए अस्त्रको पुनः लौटा लेनेमें मैं असमर्थ हूँ। दिव्यास्त्रसे अभिमन्त्रित यह सींक तो पाण्डवोंके गर्भस्थ शिशुओंपर अवश्य ही गिरेगी।[167] जैसे ही व्यासने कहा कि अच्छा, ऐसा ही करो। अश्वत्थामाने उस दिव्यास्त्रको पाण्डवोंके गर्भपर छोड़ दिया।[168]

---

164. एतदर्थं महाबाहुः शक्तिमानपि पाण्डवः। न विहन्त्येतदस्त्रं तु प्रजाहितचिकीर्षया (महासौप्तिक॰ 15.24)।
165. मणिं चैव प्रयच्छाद्य यस्ते शिरसि तिष्ठति। एतदादाय ते प्राणान् प्रतिदास्यन्ति पाण्डवाः (महासौप्तिक॰ 15.27)।
166. पाण्डवैर्यानि रत्नानि यच्चान्यत् कौरवैर्धनम्। अवाप्तमिह तेभ्योऽयं मणिर्मम विशिष्यते (महासौप्तिक॰ 15.28)।
167. महासौप्तिक॰ (15.29-32)।
168. ततः परममस्त्रं तु द्रौणिरुद्यतमाहवे। द्वैपायनवचः श्रुत्वा गर्भेषु प्रमुमोच ह (महासौप्तिक॰ 15.35)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

[कृष्ण द्वारा अश्वत्थामाको दिए गए शापका व्यासके द्वारा समर्थन]

जब अश्वत्थामाका दिव्यास्त्र उत्तराके गर्भपर गिरा तो कृष्णने कहा कि इस दिव्यास्त्रका प्रभाव अमोघ है, अतः उत्तराका गर्भ मरा हुआ पैदा होगा लेकिन फिर उसे लम्बी आयु प्राप्त हो जायेगी। कृष्ण अश्वत्थामापर कुपित हो गए और उसे शाप दिया कि आजसे तीन हजार वर्षों तक तू इस पृथिवीपर भटकता फिरेगा। तुझे कभी कहीं किसीके साथ बातचीत करनेका सुख नहीं मिल सकेगा। तू अकेला ही निर्जन स्थानोंमें घूमता रहेगा। तू जनसमुदायमें नहीं ठहर सकेगा। तेरे शरीरसे पीब तथा रक्तकी दुर्गन्ध निकलती रहेगी अतः तुझे दुर्गम स्थानोंका ही आश्रय लेना पड़ेगा। तू सभी रोगोंसे पीड़ित होकर इधर-उधर भटकेगा।[169]

जिस समय कृष्ण द्रोणकुमार अश्वत्थामाको शाप दे रहे थे, उस समय व्यास वहीं पर थे और शाप सुन रहे थे। कृष्णके शान्त होनेपर व्यासने उनका समर्थन करते हुए कहा – तूने हमलोगोंका अनादर करके यह भयंकर कर्म किया है। ब्राह्मण होनेपर भी तेरा आचार यहाँ तक गिर गया है कि तूने क्षत्रिय धर्मको अपना लिया। इसलिए कृष्णने जो उत्तम बात की है, वह सब तेरे लिए होकर रहेगी, इसमें कोई संशय नहीं।[170]

---

169. त्रीणि वर्षसहस्त्राणि चरिष्यसि महीमिमाम्। अप्राप्नुवन् क्वचित् काञ्चित् संविदं जातु केनचित्। निर्जनानसहायस्त्वं देशान् प्रविचरिष्यसि।। भवित्री न हि ते क्षुद्रजनमध्येषु संस्थितिः। पूयशोणितगन्धी च दुर्गकान्तारसंश्रयः। विचरिष्यसि पापात्मन् सर्वव्याधिसमन्वितः (महासौप्तिक॰ 16.11-13)।

170. यस्मादनादृत्य कृतं त्वयास्मान् कर्मदारुणम्। ब्राह्मणस्य सतश्चैव यस्मात् ते वृत्तमीदृशम्। तस्माद् यद् देवकीपुत्र उक्तवानुत्तमं वचः। असंशयं ते तद् भावि क्षत्रधर्मस्त्वयाऽऽश्रितः (महासौप्तिक॰ 16.17-18)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

[धृतराष्ट्रका विलाप तथा व्यासका समझाना]

अपने सौ पुत्रोंके मारे जानेपर धृतराष्ट्र पुत्रशोकसे अत्यन्त सन्तप्त हो उठे। इस अवसरपर सञ्जयने चाचा, ताऊ, पुत्र, पौत्र, भाई-बन्धु, सुहृद् तथा गुरुजनोंके प्रेतकार्यको सम्पन्न करानेके लिए धृतराष्ट्रसे कहा। सञ्जयकी ऐसी बातें सुनकर धृतराष्ट्र और भी व्याकुल हो गए और विलाप करने लगे। सञ्जय और विदुरने उन्हें भरसक समझानेकी चेष्टा की किन्तु धृतराष्ट्र विलाप करते-करते मूर्च्छित हो गए। व्यास इस समय धृतराष्ट्रके पास थे। अतः होशमें आनेपर अपने पिता व्याससे धृतराष्ट्रने कहा – किसी भी उपाय द्वारा मैं इस दुःखसे पार नहीं पा सकता। आज ही मैं अपने प्राणोंका परित्याग कर दूँगा।[171] धृतराष्ट्रकी बात सुनकर व्यास उन्हें समझाते हुए कहने लगे – धृतराष्ट्र! मैं तुमसे जो कुछ कहता हूँ, उसे ध्यान देकर सुनो। तुम वेद-शास्त्रोंके ज्ञानसे सम्पन्न, मेधावी तथा धर्म-अर्थके साधनमें कुशल हो। जो कुछ भी जानने योग्य है, तुम्हें वह सब ज्ञात है। मुझे यह कहनेमें कोई संशय नहीं है, कि तुम मानव जीवनकी अनित्यताको अच्छी तरह समझते हो। जब जीवलोक अनित्य है और सनातन परम पद नित्य है और इस जीवनका अन्त मृत्युमें ही है, तब तुम इसके लिए शोक क्यों करते हो ? तुम्हारे पुत्रको निमित्त बनाकर कालकी प्रेरणासे इस वैरकी उत्पत्ति तो तुम्हारे सामने ही हुई थी, जब कौरवोंका यह विनाश अवश्यम्भावी था, तब परम गतिको प्राप्त हुए उन योद्धाओंके लिए तुम क्यों शोक कर रहे हो ? विदुरको

---

171. तस्यान्तं नाधिगच्छामि ऋते प्राणविमोक्षणात्। तथैवाहं करिष्यामि अद्यैव द्विजसत्तम (महास्त्री॰ 8.9)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भविष्यमें होने वाले इस परिणामकी जानकारी थी, इसीलिए उन्होंने पूरी शक्ति लगाकर सन्धिके लिए प्रयत्न किया था।[172]

व्यास इसके बाद कहते है - मेरा तो ऐसा विश्वास है कि दीर्घकाल तक प्रयत्न करके भी कोई प्राणी दैवके विधानको नहीं रोक सकता।[173]

इस अवसरपर व्यासने इन्द्रकी सभामें विष्णुके पहुँचने तथा विष्णुके द्वारा भविष्यमें होने वाली घटनाओंका वर्णन पृथिवीके सम्मुख किए जानेका उल्लेख किया।[174]

उस देवसभामें विष्णुने पृथिवीसे जो कहा, उसका सारांश यह था कि दुर्योधन तेरा कार्य सिद्ध करेगा। उसके लिए सारे भूपाल कुरुक्षेत्रमें एकत्र होंगे तथा सुदृढ शस्त्रों द्वारा परस्पर प्रहार करके एक दूसरेका वध करेंगे। उस युद्धमें तेरे भारका नाश होगा।[175]

इसके बाद व्यासने धृतराष्ट्रसे कहा - यह जो तुम्हारा पुत्र था, वह सारे जगत् का संहार करनेके लिए कलिका मूर्त्तिमान अंश ही गान्धारीके पेटसे उत्पन्न हुआ। वह क्रोधी, चञ्चल तथा कूटनीतिसे काम लेनेवाला था। दैवयोगसे उसके भाई भी वैसे ही उत्पन्न हुए। मामा शकुनि तथा कर्ण भी उसीके विचार वाले थे। इसके बाद व्यासने कहा-

---

172. महास्त्री० (8.13-18)।
173. न च दैवकृतो मार्गः शक्यो भूतेन केनचित्। घटतापि चिरं कालं नियन्तुमिति मे मतिः (महास्त्री० 8.19)।
174. महास्त्री० (8.20-28)।
175. महास्त्री० (8.25-28)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जैसा राजा होता है, वैसे ही उसके स्वजन और सेवक भी होते हैं।[176] यदि स्वामी धार्मिक हो तो अधर्मी सेवक भी धार्मिक बन जाते हैं। सेवक स्वामीके ही गुण-दोषसे युक्त होते हैं, इसमें संशय नहीं है।[177]

इसके बाद फिरसे व्यास कहने लगते हैं – आपके पुत्र अपने ही अपराधसे विनाशको प्राप्त हुए हैं। धृतराष्ट्र! उनके लिए शोक न करो क्योंकि शोकके लिए कोई उपयुक्त कारण नहीं है। पाण्डवोंने तुम्हारा थोड़ा सा भी अपराध नहीं किया। तुम्हारे पुत्र ही दुष्ट थे, जिन्होंने इस भूमण्डलका नाश करा दिया। राजसूय यज्ञके समय नारदने युधिष्ठिरको पहले ही बता दिया था कि कौरव और पाण्डव आपसमें लड़कर नष्ट होंगे। इसीलिए युधिष्ठिरने बहुत प्रयत्न किया कि कौरवोंमें परस्पर कलह न हों परन्तु दैवका विधान बड़ा ही प्रबल होता है।[178] धृतराष्ट्र! दैव अथवा कालके विधानको चराचर प्राणियोंमें से कोई भी किसी तरह लाँघ नहीं सकता।[179] धृतराष्ट्र! तुम धर्मपरायण और बुद्धिमें श्रेष्ठ हो। तुम्हें प्राणियोंके आवागमनका रहस्य भी ज्ञात है, तो भी क्यों मोहके वशीभूत हो रहे हो। तुम्हें बारम्बार शोकसे संतप्त और मोहित होते देखकर युधिष्ठिर अपने प्राणोंका त्याग कर सकते हैं।[180] युधिष्ठिर तो

---

176. यादृशो जायते राजा तादृशोऽस्य जनो भवेत् (महास्त्री॰ 8.32)।
177. अधर्मो धर्मतां याति स्वामी चेद् धार्मिको भवेत्। स्वामिनो गुणदोषाभ्यां भृत्याः स्युर्नात्र संशयः (महास्त्री॰ 8.33)।
178. दैवं तु बलवत्तरम् (महास्त्री॰ 8.42)।
179. अनतिक्रमणीयो हि विधी राजन् कथंचन। कृतान्तस्य तु भूतेन स्थावरेण चरेण च (महास्त्री॰ 8.43)।
180. त्वां तु शोकेन सन्तप्तं मुह्यमानं मुहुर्मुहुः। ज्ञात्वा युधिष्ठिरो राजा प्राणानपि परित्यजेत् (महास्त्री॰ 8.45)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पशु–पक्षिओंपर भी सदा दया भाव बनाये रखते हैं, फिर तुम पर वे कैसे दया नहीं करेंगे।

इसके बाद फिरसे व्यास कहने लगते हैं - अतः धृतराष्ट्र! मेरी आज्ञा मानकर तथा विधाताका विधान नहीं टल सकता, ऐसा समझकर तुम अपने प्राणोंको धारण करो तथा पाण्डवोंपर करुणा करो। प्रज्वलित आगके समान जो तुम्हें यह पुत्रशोक प्राप्त हुआ है, इसे विचाररूपी जलके द्वारा सदाके लिए बुझा दो।[181]

व्यासकी ऐसी वाणी सुनकर पहले तो दो घड़ी तक कुछ सोच–विचार करते रहे, फिर धृतराष्ट्र इस प्रकार बोले - यद्यपि मुझे बार–बार मूर्च्छा आ रही है, तथापि अब आपका यह वचन सुनकर कि सब कुछ देवताओंकी प्रेरणासे हुआ है, मैं अपने प्राणोंको धारण करूँगा तथा यथाशक्ति इस बातके लिए भी प्रयत्न करूँगा कि मुझे शोक न हो।[182]

धृतराष्ट्रका यह वचन सुनकर व्यास वहीं अन्तर्धान हो गए।[183]

[पाण्डवोंको शाप देनेके लिए उद्यत हुई गान्धारीको व्यासके द्वारा समझाना]

भगवान् व्यास धृतराष्ट्रको समझा–बुझाकर अन्तर्धान होते हैं।

---

181. पुत्रशोकं समुत्पन्नं हुताशं ज्वलितं यथा। प्रज्ञाम्भसा महाभाग निर्वापय सदा सदा (महास्त्री॰ 8.49)।
182. इदं तु वचनं श्रुत्वा तव देवनियोगजम्। धारयिष्याम्यहं प्राणान् घटिष्ये न तु शोचितुम् (महास्त्री॰ 8.52)।
183. एतच्छ्रुत्वा तु वचनं व्यासः सत्यवतीसुतः। धृतराष्ट्रस्य राजेन्द्र तत्रैवान्तरधीयत (महास्त्री॰ 8.53)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इसके बाद श्रीकृष्ण तथा पाण्डव गान्धारीके पास पहुँचते हैं। गान्धारी सोचती है कि युधिष्ठिरने मेरे सभी पुत्रोंका संहार कराया है, अतः गान्धारीके मनमें उन्हें शाप देनेकी इच्छा हुई।

पाण्डवोंके प्रति गान्धारीके मनमें पापपूर्ण संकल्प है, इस बातको व्यासने पहले ही जान लिया था। गान्धारी शाप देनेको उद्यत है, इस अभिप्रायको जानकर वे गङ्गाजीके पवित्र एवं सुगन्धित जलसे आचमन करके शीघ्र ही उस स्थानपर आ जाते हैं।

इस अवसरपर भगवान् व्यासके बारेमें कहा गया है कि वे दिव्य दृष्टिसे तथा अपने मनको समस्त प्राणियोंके साथ एकाग्र करके उनके आन्तरिक भावोंको समझ लेते थे।[184]

इसीलिए व्यास ठीक समयपर अपनी पुत्रवधूके पास जा पहुँचे और शापके स्थानपर शान्तिका अवसर उपस्थित करनेकी दृष्टिसे इस प्रकार बोले – हे गान्धारराजकुमारी! शान्त हो जाओ। तुम्हें पाण्डुपुत्र युधिष्ठिरपर क्रोध नहीं करना चाहिए। अभी–अभी जो बात मुँहसे निकालना चाहती हो, उसे रोक लो और मेरी बात सुनो।[185] गत अट्ठारह दिनोंमें दुर्योधन तुम्हारे पास आकर कहता था – माँ! मैं शत्रुओंके साथ युद्ध करने जा रहा हूँ। मेरे कल्याणके लिए मुझे आशीर्वाद दो।[186] उस समय तुम यही कहती थी कि जहाँ धर्म है, वहीं विजय है।[187] अतः

184. दिव्येन चक्षुषा पश्यन् मनसा तद्गतेन च। सर्वप्राणभृतां भावं स तत्र समबुध्यत (महास्त्री॰ 14.5)।

185. न कोपः पाण्डवे कार्यो गान्धारि शममाप्नुहि। वचो निगृह्यतामेतच्छृणु चेदं वचो मम (महास्त्री॰ 14.7)।

186. शिवमाशास्व मे मातर्युध्यमानस्य शत्रुभिः (महास्त्री॰ 14.8)।

187. उक्तवत्यसि गान्धारि यतो धर्मस्ततो जयः (महास्त्री॰ 14.9)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पाण्डवोंकी विजयसे यह बात सिद्ध हो गई है कि धर्मका बल सबसे अधिक है।[188] तुम तो पहले बड़ी क्षमाशील थी। अब क्यों नहीं क्षमा करती हो। अधर्म छोड़ो, क्योंकि जहाँ धर्म है, वहीं विजय है।[189]

गान्धारीको भगवान् व्यासकी बात समझमें आई और उनकी इस बातको सुनकर गान्धारीने स्वीकार किया कि कुरुकुलका संहार तो दुर्योधन, मेरे भाई शकुनि, कर्ण तथा दु:शासनके अपराधसे ही हुआ है। इसमें न तो अर्जुनका अपराध है, न कुन्तीपुत्र भीमसेन का। नकुल-सहदेव और युधिष्ठिरको भी कभी इसके लिए दोष नहीं दिया जा सकता।[190] मैं पाण्डवोंके प्रति कोई दुर्भाव नहीं रखती और न ही इनका विनाश चाहती हूँ। कुन्तीके ये बेटे जिस प्रकार कुन्तीके द्वारा रक्षणीय हैं उसी प्रकार मुझे भी इनकी रक्षा करनी चाहिए।[191] गान्धारीके ऐसे वचनोंको सुनकर व्यासको सन्तोष हुआ।

[व्याससे गान्धारीको दिव्य दृष्टिकी प्राप्ति]

गान्धारी पतिव्रता, परम सौभाग्यशाली, उग्र तपस्यासे युक्त तथा सदा सत्य बोलने वाली थी। व्यासने गान्धारीको भी दिव्य दृष्टि प्रदान की, जिससे गान्धारी रणभूमिका दृश्य देख सकनेमें समर्थ हुई। इस अवसरपर कहा गया है कि गान्धारीने नरवीरोंके उस अद्भुत एवं

---

188. जितं पाण्डुसुतैर्युद्धे नूनं धर्मस्ततोऽधिकः (महास्त्री॰ 14.11)।
189. अधर्मं जहि धर्मज्ञे यतो धर्मस्ततो जयः (महास्त्री॰ 14.12)।
190. दुर्योधनापराधेन शकुनेः सौबलस्य च। कर्णदुःशासनाभ्यां च कृतोऽयं कुरुसंक्षयः।। नापराध्यति बीभत्सुर्न च पार्थो वृकोदरः। नकुलः सहदेवश्च नैव जातु युधिष्ठिरः (महास्त्री॰ 14.16-17)।
191. यथैव कुन्त्या कौन्तेय रक्षितव्यास्तथा मया (महास्त्री॰ 14.15)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रोमाञ्चकारी समराङ्गणको दूरसे भी उसी तरह देखा, जैसे निकटसे देखा जाता है।[192]

यह दृश्य बड़ा ही हृदयविदारक था। गान्धारी जैसे-जैसे युद्धभूमिमें पड़े हुए अपने सम्बन्धियोंको देखती जाती थी, वैसे वैसे ही वह विलाप करने लगती थी। बादमें पाण्डव, विदुर, धृतराष्ट्र तथा भरतवंशकी स्त्रियाँ- इन सबने गंगाजीमें समस्त सुहृदोंके लिए जलाञ्जलि दी। महाराज युधिष्ठिर एक महीने तक गंगाके तटपर ही रहे। इस बीच महर्षि व्यास, नारद, देवल ऋषि, देवस्थान तथा कण्व अपने शिष्योंके साथ युधिष्ठिरसे मिलनेके लिए आए।

[युधिष्ठिरका शोकमग्न होना]

यद्यपि युधिष्ठिरको राज्यलक्ष्मी प्राप्त हो गई, लेकिन उनका मन बहुत उदास था, विशेषकर इस बातसे वे अत्यधिक शोकमग्न हो गए कि भाई कर्णका वध उसके भाईके द्वारा ही हो गया। शोकसे ग्रस्त होकर उन्होंने सबके सम्मुख वनमें चले जानेका प्रस्ताव रखा।

इस अवसरपर अर्जुन युधिष्ठिरके मतका निराकरण करते हुए धनकी महत्ता बताते हैं किन्तु युधिष्ठिर वानप्रस्थ एवं संन्यासीके अनुसार जीवन व्यतीत करनेका निश्चय करते हैं। भीमसेन राजाके लिए संन्यासका विरोध करते हैं। पुनः अर्जुन गृहस्थ धर्मके पालनपर जोर देते हैं। नकुल युधिष्ठिरको समझाते हैं। सहदेव भी समझाते हैं और ममता और आसक्तिसे रहित होकर राज्य करनेकी सलाह देते हैं। द्रौपदी युधिष्ठिरको पृथिवीका शासन करनेके लिए प्रेरित करती है। भीमसेन

---

192. ददर्श सा बुद्धिमती दूरादपि यथान्तिके। रणाजिरं नृवीराणामद्भुतं लोमहर्षणम् (महास्त्री॰ 16.4)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

राज्यशासन और यज्ञानुष्ठानके लिए प्रेरित करते हैं। मुनि देवस्थान उन्हें समझाते हैं तथा यज्ञके लिए प्रेरित करते हैं।

इतने लोगोंके द्वारा समझाए जानेपर भी युधिष्ठिर टससे मस नहीं होते। अन्तमें अर्जुन पुनः क्षत्रिय धर्मकी प्रशंसा करते हुए कहते हैं कि जो कुछ हुआ है, वह उसी रूपमें होनेवाला था। दैवके विधानका उल्लंघन नहीं किया जा सकता।[193]

[व्यास द्वारा युधिष्ठिरको समझाना तथा राजधर्ममें ही दृढ़ रहनेकी आज्ञा देना]

अर्जुनकी बात सुनकर युधिष्ठिर जब कुछ नहीं बोले, तब व्यास जीने इस प्रकार उन्हें समझानेका प्रयास किया – युधिष्ठिर! अर्जुनने जो आपको क्षात्रधर्मका ही पालन करनेके लिए अपनी सम्मति दी है, वह उचित ही है। शास्त्रोक्त परम धर्म गृहस्थाश्रमका ही आश्रय लेकर टिका हुआ है। तुम्हारे लिए गृहस्थाश्रमको छोड़कर वनमें जानेका विधान नहीं है। देवता, पितर, अतिथि, भृत्यगण, पशु, पक्षी तथा अन्य प्राणी भी गृहस्थोंसे पालित होते हैं अतः गृहस्थ ही सबसे श्रेष्ठ है।

पुनः व्यास समझाते हैं – तुम क्षत्रिय राजा हो। अतः यज्ञ, विद्याभ्यास, शत्रुओंपर चढ़ाई करना, राजलक्ष्मीकी प्राप्तिसे कभी सन्तुष्ट न होना, दुष्टोंको दण्ड देनेके लिए उद्यत रहना, क्षत्रियतेजसे सम्पन्न रहना, प्रजाकी सब ओरसे रक्षा करना, तप, सदाचार, अधिक द्रव्योपार्जन और सत्पात्रको दान देना, यह क्षत्रिय राजाओंका धर्म है। इनका तुम्हें पालन करना चाहिए।

---

193. भवितव्यं तथा तच्च यद् वृत्तं भरतर्षभ। दिष्टं ही राजशार्दूल न शक्यमतिवर्तितुम् (महाशान्ति॰ 22.15)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अन्तमें व्यासने कहा – युधिष्ठिर! दण्ड धारण करना राजाका प्रधान धर्म बताया गया है, क्योंकि क्षत्रियमें बलकी नित्य स्थिति होती है और बलमें ही दण्ड प्रतिष्ठित होता है।[194] दण्डधारण ही क्षत्रियधर्म है, मूँड मुड़ाकर संन्यासी बनना नहीं।[195] इस समय भाइयोंके साथ तुम धर्म, अर्थ और कामका उपभोग करो। पीछे वनमें चले जाना।[196] पहले याचकों, पितरों और देवताओंके ऋणसे उऋण हो जाओ, फिर वह सब करना।[197]

व्यासकी बात सुनकर युधिष्ठिर उससे प्रभावित न होकर पति और पुत्रोंसे हीन हुई युवतियोंके करुण विलापकी बात करते हैं। उन्होंने व्याससे कहा – भूतलका यह राज्य तथा भिन्न-भिन्न प्रकारके भोग मेरे मनको प्रसन्न नहीं कर रहे हैं।

युधिष्ठिरको शोकाकुल देखकर व्यास फिरसे उन्हें समझाना प्रारम्भ करते हैं – न तो कर्म करनेसे नष्ट हुई वस्तु मिल सकती है और न ही चिन्ता करनेसे। ऐसा कोई दाता भी नहीं है, जो मनुष्यको उसकी खोई हुई वस्तु दे दे। विधाताके विधानके अनुसार बारी-बारीसे मनुष्य समयपर

194. एषां ज्यायस्तु कौन्तेय दण्डधारणमुच्यते। बलं हि क्षत्रिये नित्यं बले दण्डः समाहितः (महाशान्ति॰ 23.13)।
195. दण्ड एव हि राजेन्द्र क्षत्रधर्मो न मुण्डनम् (महाशान्ति॰ 23.47)।
196. धर्ममर्थं च कामं च भ्रातृभिः सह भारत। अनुभूय ततः पश्चात् प्रस्थातासि विशाम्पते (महाशान्ति॰ 24.5)।
197. अर्थिनां च पितृणां च देवतानां च भारत। आनृण्यं गच्छ कौन्तेय तत् सर्वं च करिष्यसि (महाशान्ति॰ 24.6)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सब कुछ पा लेता है।[198] बुद्धि और शास्त्राध्ययनसे भी मनुष्य असमयमें किसी विशेष वस्तुको नहीं पा सकता और समय आनेपर कभी-कभी मूर्ख भी अभीष्ट पदार्थोंको पा लेता है। अतः काल ही कार्यकी सिद्धिमें सामान्य कारण है।[199] अवनतिके समय शिल्पकलाएँ, मन्त्र तथा औषध भी कोई फल नहीं देते हैं। वे ही जब उन्नतिके समय उपयोगमें लाए जाते हैं, तब कालकी प्रेरणासे सफल होते हैं और वृद्धिमें सहायक बनते हैं।[200] यह दुःसह कालचक्र सभी मनुष्योंपर अपना प्रभाव डालता है। एक दिन सभी राजा कालसे परिपक्व होकर मृत्युके अधीन हो जाते हैं।[201] युधिष्ठिर! मनुष्य दूसरोंको मारते हैं, फिर उन्हें भी दूसरे लोग मार देते हैं। यह मरना-मारना लौकिक संज्ञा है। वास्तवमें तो न कोई मारता है और न मारा ही जाता है।[202] तुम मूढ बनकर शोक क्यों कर रहे हो। उन मरे हुए शोचनीय व्यक्तियोंका बार-बार स्मरण ही क्यों करते हो ? देखो, शोक करनेसे दुःखमें दुःख तथा भयमें भयकी वृद्धि होगी।[203]

---

198. न कर्मणा लभ्यते चिन्तया वा नाप्यस्ति दाता पुरुषस्य कश्चित्। पर्यायोगाद् विहितं विधात्रा कालेन सर्वं लभते मनुष्यः (महाशान्ति॰ 25.5)।
199. न बुद्धिशास्त्राध्ययनेन शक्यं प्राप्तुं विशेषं मनुजैरकाले। मूर्खोऽपि चाप्नोति कदाचिदर्थान् कालो हि कार्यं प्रति निर्विशेषः (महाशान्ति॰ 25.6)।
200. नाभूतिकालेषु फलं ददन्ति शिल्पानि मन्त्राश्च तथौषधानि। तान्येव कालेन समाहितानि सिद्ध्यन्ति वर्धन्ति च भूतिकाले (महाशान्ति॰ 25.7)।
201. सर्वानिवैष पर्यायो मर्त्यान् स्पृशति दुःसहः। कालेन परिपक्वा हि म्रियन्ते सर्वपार्थिवाः (महाशान्ति॰ 25.14)।
202. घ्नन्ति चान्यान् नरा राजंस्तानप्यन्ये तथा नराः। संज्ञैषा लौकिकी राजन् न हिनस्ति न हन्यते (महाशान्ति॰ 25.15)।
203. स किं शोचसि मूढः सञ्शोच्यान् किमनुशोचसि। पश्य दुःखेषु दुःखानि भयेषु च भयान्यपि (महाशान्ति॰ 25.18)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

युधिष्ठिरको समझाते हुए व्यास पुनः कहने लगते हैं – यह शरीर भी अपना नहीं है और सारी पृथिवी भी अपनी नहीं है। यह जिस तरहसे मेरी है, उसी तरहसे दूसरोंकी भी है। ऐसी सोच रखनेवाला कभी भी मोहमें नहीं पड़ता।[204] सुखके बाद दुःख और दुःखके बाद सुख आता है। कोई भी न तो सदा दुःख पाता है और न निरन्तर सुख ही प्राप्त करता है।[205] सुख हो या दुःख, प्रिय हो अथवा अप्रिय, जब जो कुछ प्राप्त हो, उस समय उसे सहर्ष अपनावे। हिम्मत न हारे। सुख-दुःखके सामने अपनी पराजय न स्वीकार करे।[206] संसारमें जो अत्यन्त मूर्ख हैं, अथवा जो बुद्धिसे परे पहुँच गए हैं, वे ही सुखी रहते हैं, बीचवाले तो कष्ट ही भोगते रहते हैं।[207]

युधिष्ठिरको समझाते हुए व्यास कहते हैं कि जिस किसी भी दुःखसे जो दुखी है, वह कभी सुखी नहीं हो सकता, क्योंकि दुःखोंका अन्त नहीं है। एक दुःखसे दूसरा दुःख होता ही रहता है।[208] सुख-दुःख, उत्पत्ति-विनाश, लाभ-हानि और जीवन-मरण – ये समय समयपर

---

204. आत्मापि चायं न मम सर्वापि पृथिवी मम। यथा मम तथान्येषामिति पश्यन् न मुह्यति (महाशान्ति॰ 25.19)।

205. सुखस्यानन्तरं दुःखं दुःखस्यानन्तरं सुखम्। न नित्यं लभते दुःखं न नित्यं लभते सुखम् (महाशान्ति॰ 25.23)।

206. सुखं वा यदि वा दुःखं प्रियं वा यदि वाऽप्रियम्। प्राप्तं प्राप्तमुपासीत हृदयेनापराजितः (महाशान्ति॰ 25.16)।

207. ये च मूढतमा लोके ये च बुद्धेः परं गताः। त एव सुखमेधन्ते मध्यमः क्लिश्यन्ते जनाः (महाशान्ति॰ 25.28)।

208. येन दुःखेन यो दुःखी न स जातु सुखी भवेत्। दुःखानां हि क्षयो नास्ति जायते ह्यपरात् परम् (महाशान्ति॰ 25.30)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

क्रमसे सबको प्राप्त होते हैं, इसीलिए धीर पुरुष इनके लिए हर्ष या शोक नहीं करते।[209]

युधिष्ठिर शोक न करें, इसके लिए भगवान् व्यास सुख-दुःखकी मीमांसा करते हुए उन्हें इन सब कार्योंको करनेके लिए प्रेरित करते हैं, जिन्हें करना एक क्षत्रिय राजाका कर्त्तव्य होता है। व्यास उन्हें संग्राममें जूझने, यज्ञमें दीक्षा लेने, उत्तम दण्डनीतिका पालन करने, यज्ञमें दक्षिणा देने, उत्तम विधिसे दान देने जैसे पवित्र कार्योंको करनेकी बात कहते हैं। अहंकार छोड़ने, बुद्धिमानीपूर्वक नीतिके अनुसार राज्यकी रक्षा करने, धर्मकी रक्षाको दृष्टिमें रखकर सम्पूर्ण लोकोंमें विचरण करनेकी सलाह देते हैं। युधिष्ठिर व्यासकी बातोंको सुनते हैं, लेकिन उनको लगता है कि मैं जाति-भाइयोंका घातक हूँ, राज्यका लोभी हूँ, अत्यन्त क्रूर हूँ, अपने वंशका विनाशक हूँ। ऐसा सोचते सोचते युधिष्ठिर भीष्मकी मृत्यु, द्रौपदीके पाँचों पुत्रोंकी मृत्यु आदि घटनाओंका स्मरण करके आमरण अनशनका निश्चय करते हैं और कहते हैं - जिसकी जहाँ इच्छा हो, वहाँ अपनी रुचिके अनुसार चला जाए। आप सब मुझे आज्ञा दें कि मैं अनशन करके इस शरीरका त्याग कर दूँ।[210]

युधिष्ठिरकी ऐसी विपरीत बुद्धि देखकर व्यास तुरन्त बोलने लगे- नहीं, ऐसा नहीं हो सकता।[211] तुम बहुत दुःखी मत होओ। मैं पहलेकी

---

209. सुखं च दुःखं च भवाभवौ च लाभालाभौ मरणं जीवितं च। पर्यायतः सर्वमवाप्नुवन्ति तस्माद् धीरो नैव हृष्येन्न शोचेत् (महाशान्ति॰ 25.31)।

210. यथेष्टं गम्यतां काममनुजाने प्रसाद्य वः। सर्वे मामनुजानीत त्यक्ष्यामीदं कलेवरम् (महाशान्ति॰ 27.26)।

211. मैवमित्यब्रवीद् व्यासः (महाशान्ति॰ 27.27)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कही हुई बात ही फिर दुहरा रहा हूँ, यह सब प्रारब्धका ही खेल है।[212] जैसे पानीमें बुलबुले होते हैं और मिट जाते हैं, उसी प्रकार संसारमें उत्पन्न हुए प्राणियोंके जो आपसमें संयोग होते हैं, उनका वियोग भी होता है।[213] सम्पूर्ण संग्रहोंका अन्त विनाश है, सारी उन्नतियोंका अन्त पतन है, संयोगोंका अन्त वियोग है और जीवनका अन्त मरण है।[214] न तो सुहृद् सुख देनेमें समर्थ हैं, न शत्रु दु:ख देनेमें। इसी प्रकार न तो प्रजा धन दे सकती है और न धन सुख दे सकता है।[215] विधाताने जिस प्रकारके कर्मोंके लिए तुम्हें पैदा किया है, तुम उन्हींका अनुष्ठान करो। उन्हींसे तुम्हें सिद्धि प्राप्त होगी। तुम कर्मोंके फलके नियन्ता नहीं हो।[216]

इतना सब कुछ कहनेके बाद भी युधिष्ठिरका शोक समाप्त नहीं हुआ। भगवान् व्यासने अवसरके उचित अनेक प्राचीन इतिहासका उल्लेख किया और समझानेका प्रयास किया किन्तु युधिष्ठिर शोक-मोहसे ग्रस्त ही रहे। अन्तमें व्यासने फिरसे समझाना प्रारम्भ किया- युधिष्ठिर! प्राणियोंके निकट जो सुख या दु:ख उपस्थित होता है, वह सब उन्हें विवश होकर सहना ही पड़ता है, क्योंकि उसके टालनेका

212. दिष्टमेतदिति प्रभो (महाशान्ति॰ 27.28)।

213. संयोगा विप्रयोगान्ता जातानां प्राणिनां ध्रुवम्। बुद्बुदा इव तोयेषु भवन्ति न भवन्ति च (महाशान्ति॰ 27.29)।

214. सर्वे क्षयान्तानिचयाः पतनान्ताः समुच्छ्रयाः। संयोगा विप्रयोगान्ता मरणान्तं हि जीवितम् (महाशान्ति॰ 27.30)।

215. नालं सुखाय सुहृदो नालं दुःखाय शत्रवः। न च प्रजालमर्थेभ्यो न सुखेभ्योऽप्यलं धनम् (महाशान्ति॰ 27.32)।

216. यथा सृष्टोऽसि कौन्तेय धात्रा कर्मसु तत् कुरु। अत एव हि सिद्धिस्ते नेशस्त्वं कर्मणां नृप (महाशान्ति॰ 27.33)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कोई उपाय नहीं है।[217] अप्रिय वस्तुओंके साथ संयोग, अत्यन्त प्रिय वस्तुका वियोग, अर्थ, अनर्थ, सुख और दुःख - इन सबकी प्राप्ति प्रारब्धके अनुसार होती है।[218] प्राणियोंकी उत्पत्ति, देहावसान, लाभ और हानि - ये सब प्रारब्धके अनुसार ही हैं।[219] जैसे शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गन्ध स्वभावतः आते-जाते रहते हैं, उसी प्रकार मनुष्य सुख और दुःखोंको प्रारब्धानुसार पाता रहता है।[220] इस संसारमें प्राणियोंके संयोग-वियोग इस प्रकार होते रहते हैं, जिस प्रकार महासागरमें एक लकड़ीका टुकड़ा एक ओरसे तथा दूसरा टुकड़ा दूसरी ओरसे आकर थोड़ी देरके लिए मिल जाता है तथा बिछुड़ भी जाता है।[221] हमने संसारमें अनेक बार जन्म लेकर सहस्रों माता-पिता और सैकड़ों स्त्री-पुरुषोंके सुखका अनुभव किया है, किन्तु अब वे किसके हैं अथवा हम उनमेंसे किसके हैं ? नहीं जानते।[222] इस जीवका न तो कोई सम्बन्धी होगा और न यह किसीका सम्बन्धी है। जैसे मार्गमें

---

217. सुखं वा यदि वा दुःखं भूतानां पर्युपस्थितम्। प्राप्तव्यमवशैः सर्वं परिहारो न विद्यते (महाशान्ति॰ 28.16)।
218. अप्रियैः सह संयोगो विप्रयोगश्च सुप्रियैः। अर्थानर्थौ सुख दुःखं विधानमनुमवर्तते (महाशान्ति॰ 28.18)।
219. प्रादुर्भावश्च भूतानां देहत्यागस्तथैव च। प्राप्तिर्व्यायामयोगश्च सर्वमेतत् प्रतिष्ठितम् (महाशान्ति॰ 28.19)।
220. गन्धवर्णरसस्पर्शा निवर्तन्ते स्वभावतः। तथैव सुखदुःखानि विधानमनुवर्तते (महाशान्ति॰ 28.20)।
221. यथा काष्ठं च काष्ठं च समेयातां महोदधौ। समेत्य च व्यपेयातां तद्वद् भूतसमागमः (महाशान्ति॰ 28.36)।
222. मातापितृसहस्राणि पुत्रदारशतानि च। संसारेष्वनुभूतानि कस्य ते कस्य वा वयम् (महाशान्ति॰ 28.38)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चलनेवालोंको दूसरे राहगीरोंका साथ मिल जाता है, उसी प्रकार यहाँ भाई-बन्धु, स्त्री-पुत्र और सुहृदोंका समागम होता है।[223]

राजन्! आज तुम्हारे पिता कहाँ हैं ? आज तुम्हारे पितामह कहाँ गए ? आज न तो तुम उन्हें देख रहे हो और न वे तुम्हें देखते हैं।[224] अतः तुम शोक छोड़कर उठो और हृदयमें हर्ष धारण करो। तुमने क्षत्रियधर्मके अनुसार इस पृथिवीपर विजय पायी है, अतः इसे भोगो। इसकी अवहेलना न करो।[225]

इतना सब कुछ सुननेके बाद भी युधिष्ठिर अपना शोक दूर करनेमें समर्थ नहीं होते। इसके बाद कृष्ण उन्हें समझाते हैं। अनेक इतिहास कथाओंका उदाहरण देते हैं, लेकिन युधिष्ठिरका शोक दूर नहीं होता। कृष्णके द्वारा समझाए जानेके बाद पुनः व्यास उन्हें समझानेका प्रयास करते हुए कहते हैं - युधिष्ठिर! राजाओंका धर्म प्रजाजनोंका पालन करना ही है। धर्मका अनुसरण करने वाले लोगोंके लिए सदा धर्म ही प्रमाण है।[226] तुम अपने बाप-दादोंके राज्यको ग्रहण करके उसका धर्मानुसार पालन करो। तपस्या तो ब्राह्मणोंका नित्य धर्म है। यही वेदका

---

223. नैवास्य कश्चिद् भविता नायं भवति कस्यचित्। पथि सङ्गतमेवेदं दारबन्धुसुहृज्जनैः (महाशान्ति॰ 28.39)।

224. क्व नु तेऽद्य पिता राजन् क्व नु तेऽद्य पितामहाः। न त्वं पश्यसि तानद्य न त्वां पश्यन्ति तेऽनघ (महाशान्ति॰ 28.53)।

225. मुञ्च शोकमुत्तिष्ठ शक्रोपम हर्षमेहि। क्षात्रेण धर्मेण मही जिता ते तां भुङ्क्ष्व कुन्तीसुत मावमंस्थाः (महाशान्ति॰ 28.59)।

226. प्रजानां पालनं धर्मो राज्ञां राजीवलोचन। धर्मः प्रमाणं लोकस्य नित्यं धर्मानुवर्तिनः (महाशान्ति॰ 32.2)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

निश्चय है।[227] क्षत्रियका कार्य है कि वह दोनों भुजाओंके बलसे धर्मद्रोहीका दमन करें।[228] जो प्रमाणभूत धर्म तथा शास्त्रको न मानें, वह कोई भी हो, उन्हें नष्ट कर डाले।[229] जो राजा ऐसा नहीं करता, वह पापका भागी होता है। जो नष्ट होते हुए धर्मकी रक्षा नहीं करता, वह राजा धर्मका घात करने वाला है।[230] युधिष्ठिर! तुमने तो उन्हीं लोगोंका सेवकों सहित वध किया है, जो धर्मका नाश करने वाले थे। फिर तुम क्यों शोक कर रहे हो। तुम तो अपने धर्ममें स्थित हो। तुमने वही कार्य किया है, जो एक राजाको करना चाहिए। क्योंकि राजाका यह कर्त्तव्य ही है कि वह धर्मद्रोहियोंका वध करे, सुपात्रोंको दान दे तथा धर्मके अनुसार प्रजाकी रक्षा करे।[231] तुम जैसे धर्मात्मा नरेशके लिए अपने शरीरका परित्याग करना शोभाकी बात नहीं है।[232] यदि युद्ध आदिमें राग–द्वेषके कारण निन्द्यकर्म बन जाते हैं तो उनके लिए प्रायश्चित्त किया जा सकता है। अतः किसी भी अवस्थामें शरीरका त्याग करना उचित नहीं है।

व्यासके इतना समझानेके बाद भी जब युधिष्ठिरका शोक दूर नहीं होता तो कृष्णको कहना पड़ता है – युधिष्ठिर! अब आप अत्यन्त

---

227. अनुतिष्ठस्व तद् राजन् पितृपैतामहं पदम्। ब्राह्मणेषु तपो धर्मः स नित्यो वेदनिश्चितः (महाशान्ति॰ 32.3)।
228. स बाहुभ्यां विनिग्राह्यः (महाशान्ति॰ 32.5)।
229. पापान् सर्वैरुपायैस्तान् नियच्छेच्छातयीत वा (महाशान्ति॰ 32.6)।
230. अतोऽन्यथा वर्तमानो राजा प्राप्नोति किल्विषम्। धर्मं विनश्यमानं हि यो न रक्षेत् स धर्महा (महाशान्ति॰ 32.7)।
231. ते त्वया धर्महन्तारो निहताः सपदानुगाः। स्वधर्मे वर्तमानस्त्वं किं नु शोचसि पाण्डव। राजा हि हन्याद् दद्याच्च प्रजा रक्षेच्च धर्मतः (महाशान्ति॰ 32.9)।
232. एवमात्मपरित्यागस्तव राजन् न शोभनः (महाशान्ति॰ 32.23)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हठपूर्वक शोकको ही न पकड़े रहें। भगवान् व्यास जो आज्ञा देते हैं, वही करें।[233] गुरुदेव व्यासकी आज्ञासे सुहृदोंका तथा द्रौपदीका प्रिय कीजिए तथा सम्पूर्ण जगत्‌के हितसाधनमें लग जाइए।[234] लोकके हितसाधनकी बात सुनकर तथा भगवान् व्यासादि जनोंके समझाने-बुझानेपर अब युधिष्ठिरका शोक शान्त होता है और वे नगरमें प्रवेश करनेके लिए उद्यत होते हैं।

[युधिष्ठिरके सम्मुख भीष्मका व्यास एवं शुकके संवादका कथन]

कुछ दिनोंके बाद भगवान् कृष्ण युधिष्ठिरको भीष्मके पास जानेके लिए प्रेरित करते हैं तथा धर्म-अर्थ एवं कामसे सम्बन्धित और अन्य विषयोंको उनसे समझनेके लिए आग्रह करते हैं। शान्तिपर्वके 231वें अध्यायमें युधिष्ठिर भूतोंकी उत्पत्ति तथा उनका अन्त, परमार्थप्राप्तिके लिए ध्यान एवं कर्मका अनुष्ठान, कालका स्वरूप तथा भिन्न-भिन्न युगोंमें मनुष्योंकी आयुका परिमाण जैसे विषयोंको भीष्मके सम्मुख रखते हैं तथा उनका उत्तर प्राप्त करना चाहते हैं। इस प्रसंगमें भीष्म शुकदेवके सम्मुख व्यासके द्वारा दिए गए उपदेशका उल्लेख करते हैं तथा स्पष्ट करते हैं कि इन्हीं विषयोंको व्यासने शुकदेवके सम्मुख व्यक्त किया था। महाभारतमें व्यास और शुक संवादके रूपमें यह विषय अध्याय 231 से लेकर अध्याय 254 तक वर्णित है। शुकदेव द्वारा प्रश्न किए जानेपर व्यासने जिन विषयोंका निरूपण किया, उसका उल्लेख संक्षिप्त रूपसे यहाँ प्रस्तुत किया जाता है।

233. नेदानीमतिनिर्बन्धं शोके त्वं कर्तुमर्हसि। यदाह भगवान् व्यासस्तत् कुरुष्व नृपोत्तम (महाशान्ति॰ 37.21)।

234. लोकस्य च हितं कुरु (महाशान्ति॰ 37.25)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(सृष्टिके प्रारम्भमें ब्रह्मकी सत्ता)

शुकदेव मुनिने अङ्गों और उपनिषदों सहित सम्पूर्ण वेदका अध्ययन किया था। शुकदेव जी जानते थे कि धर्म और अर्थ विषयक जितना भी सन्देह है, उसका समाधान पिता व्यास अवश्य करेंगे। इसीलिए व्यासके प्रति शुकदेवका पहला प्रश्न था कि प्राणिसमुदायको उत्पन्न करने वाला कौन है तथा कालके ज्ञानके विषयमें आपका क्या निश्चय है। ब्राह्मणका क्या कर्त्तव्य है, यह सब बतानेकी कृपा करें।[235]

इस प्रश्नके उत्तरमें व्यासने कहा - सृष्टिके प्रारम्भमें अनादि, अनन्त, अजन्मा, दिव्य, अजर-अमर, ध्रुव, अविकारी, अतर्क्य और ज्ञानातीत ब्रह्म ही रहता है।[236]

(कालज्ञाननिर्णय)

कालज्ञानके सम्बन्धमें व्यास निमेष, काष्ठा, कला, मुहूर्त्त, दिन-रात, मास, संवत्सर, उत्तरायण-दक्षिणायनकी चर्चा करते हैं तथा उसका परिमाण बताते हैं। इस अवसरपर व्यास कहते हैं कि रात प्राणियोंके सोनेके लिए है तथा दिन काम करनेके लिए।[237] मनुष्योंका एक मास पितरोंका एक दिन-रात होता है। शुक्लपक्षमें पितर अपना काम-काज करते हैं और कृष्णपक्षमें वे विश्राम करते हैं।[238] मनुष्योंका

---

235. भूतग्रामस्यकर्त्तारं कालज्ञाने च निश्चयम्। ब्राह्मणस्य च यत् कृत्यं तद् भवान् वक्तुमर्हति (महाशान्ति॰ 231.9)।
236. अनाद्यन्तमजं दिव्यमजरं ध्रुवमव्ययम्। अप्रतर्क्यमविज्ञेयं ब्रह्माग्रे सम्प्रवर्तते (महाशान्ति॰ 231.11)।
237. रात्रिः स्वप्नाय भूतानां चेष्टायै कर्मणामहः (महाशान्ति॰ 231.15)।
238. पित्र्ये रात्र्यहनी मासः प्रविभागस्तयोः पुनः। शुक्लोऽहः कर्मचेष्टायां कृष्णः स्वप्नाय शर्वरी (महाशान्ति॰ 231.16)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

एक वर्ष देवताओंका एक दिन-रात होता है। उत्तरायण उनका दिन होता है और दक्षिणायन उनकी रात्रि।[239]

(युगानुरूप विशेषता)

इसके अनन्तर ब्रह्माके दिन-रातका मान बताकर प्रत्येक युगकी विशेषताओंका उल्लेख करते हुए कहते हैं कि सत्ययुगमें सत्य और धर्मके चारों चरण परिपूर्ण रूपसे मौजूद रहते हैं।[240]

अन्य युगोंमें शास्त्रोक्त धर्मका एक-एक चरण क्षीण होता जाता है तथा चोरी, असत्य, छल-कपट आदिके द्वारा अधर्मकी वृद्धि होने लगती है।[241]

युगके अनुसार मनुष्योंकी आयुका परिमाण बताते हुए व्यास कहते हैं कि सत्ययुगमें मनुष्य नीरोग होते हैं। उनकी सम्पूर्ण कामनाएँ पूर्ण होती हैं तथा वे चार सौ वर्षोंकी आयु वाले होते हैं। त्रेतायुगमें तीन सौ वर्ष, द्वापरमें घटकर दो सौ वर्ष तथा कलियुगमें केवल सौ वर्षकी आयु होती है।[242] युगोंके अनुसार मनुष्योंके धर्म भी भिन्न-भिन्न प्रकारके हो जाते हैं। सत्ययुगमें तपस्याको ही सबसे बड़ा धर्म माना गया है। त्रेतामें

---

239. दैवे रात्र्यहनी वर्षं प्रविभागस्तयोः पुनः। अहस्तत्रोदगयनं रात्रिः स्याद् दक्षिणायनम् (महाशान्ति॰ 231.17)।

240. चतुष्पात् सकलो धर्मः सत्यं चैव कृते युगे (महाशान्ति॰ 231.23)।

241. इतरेष्वागमाद् धर्मः पादशस्त्ववरोप्यते। चौर्यकानृतमायाभिरधर्मश्चोपचीयते (महाशान्ति॰ 231.24)।

242. अरोगाः सर्वसिद्धार्थाश्चतुर्वर्षशतायुषः। कृते त्रेतायुगे त्वेषां पादशो ह्रसते वयः (महाशान्ति॰ 231.25)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ज्ञानको, द्वापरमें यज्ञ तथा कलियुगमें एकमात्र दान ही श्रेष्ठ कहा गया है।[243]

अब उसी प्रश्नका उत्तर पुनः देते हैं, जो प्रश्न सबसे पहले मुनि शुकदेवने किया था कि समस्त प्राणिसमुदायको उत्पन्न करने वाला कौन है ? व्यास कहते हैं- तेजोमय ब्रह्म ही सबका बीज है, उसीसे यह सम्पूर्ण जगत् उत्पन्न हुआ है। उस एक ही ब्रह्मसे स्थावर और जङ्गम दोनोंकी उत्पत्ति होती है।[244]

[सृष्टिकी उत्पत्तिका क्रम]

इस अवसरपर भगवान् व्यास सृष्टिकी उत्पत्तिके क्रमपर प्रकाश डालते हुए कहते हैं कि सबसे पहले महत्तत्व, उसके बाद स्थूल सृष्टिका आधारभूत मन, मनसे आकाश, आकाशसे वायु, वायुसे अग्नि, अग्निसे जल तथा जलसे पृथिवी उत्पन्न होती है। महत्तत्व, मन (अहंकार) तथा पञ्चमहाभूत - ये सातों पदार्थ परस्पर मिलकर सृष्टिका निर्माण करते हैं। ये ही सातों मिलकर भिन्न-भिन्न शरीरके आकारमें बदल जाते हैं। उस शरीर नामक पुरमें निवास करनेके कारण जीवात्मा पुरुष कहलाता है।[245] पाँच स्थूल महाभूत, दस इन्द्रियाँ और मन - इन सोलह तत्त्वोंसे शरीरका निर्माण होता है। इन सबका आश्रय होनेके कारण ही देहको शरीर कहते हैं।[246] भूतोंके आदि कर्त्ता ब्रह्मा जी

---

243. तपः परं कृतयुगे त्रेतायां ज्ञानमुत्तमम्। द्वापरे यज्ञमेवाहुर्दानमेकं कलौ युगे (महाशान्ति॰ 231.28)।

244. ब्रह्म तेजोमयं शुक्रं यस्य सर्वमिदं जगत्। एकस्य ब्रह्मभूतस्य द्वयं स्थावरजङ्गमम् (महाशान्ति॰ 232.1)।

245. शरीराश्रयणं प्राप्तास्ततः पुरुष उच्यते (महाशान्ति॰ 232.11)।

246. शरीरं श्रयणाद् भवति (महाशान्ति॰ 232.12)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तपस्याके लिए समस्त सूक्ष्म भूतोंको लेकर समष्टि शरीरमें प्रवेश करके स्थित होते हैं, इसलिए मुनिजन उन्हें प्रजापति कहते हैं।[247] प्रजापति ही चराचर प्राणियोंकी सृष्टि करते हैं। वे ही देवता, ऋषि, पितर, मनुष्य, नाना प्रकारके लोक, नदी, समुद्र, दिशा, पर्वत, वनस्पति, किन्नर, राक्षस, पशु, पक्षी, मृग तथा सर्पोंको उत्पन्न करते हैं।

सृष्टि क्रमको स्पष्ट करते हुए भगवान् व्यास प्रत्येक युगोंके धर्मोंके बारेमें भी बताते हैं। इस अवसरपर व्यास कहते हैं – सत्ययुगमें मनुष्य ज्ञानरूप तपस्यामें प्रवृत्त होते हैं। त्रेतायुगमें वेद, यज्ञ, वर्णाश्रमधर्म सुव्यवस्थित रूपसे पालित होते हैं। द्वापरमें आयुकी न्यूनता होनेसे मनुष्य वेद और यज्ञादिसे च्युत होने लगते हैं। कलियुगमें तो अधर्मसे पीड़ित होकर यज्ञ और वेद लुप्त हो जाते हैं। जैसे वर्षाकालमें वर्षा होनेसे स्थावर और जङ्गम समस्त पदार्थ वृद्धिको प्राप्त होते हैं और वर्षा बीतनेपर उनका ह्रास होने लगता है, उसी प्रकार प्रत्येक युगमें धर्म और अधर्मकी वृद्धि और ह्रास होते रहते हैं।[248] वसन्त ऋतुमें जिस प्रकार फूल और फल आदि नाना प्रकारके ऋतुचिह्न दिखाई देते हैं और भिन्न ऋतुओंमें उन चिह्नोंका दर्शन नहीं होता, उसी प्रकार ब्रह्मा, विष्णु और शिवमें सृष्टि, स्थिति और संहारकी शक्तियाँ कभी कम तथा कभी अधिक दिखाई देती हैं।[249]

---

247. सर्वभूतान्युपादाय तपसश्चरणाय हि। आदिकर्त्ता स भूतानां तमेवाहुः प्रजापतिम् (महाशान्ति॰ 232.13)।

248. यथा विश्वानि भूतानि वृष्ट्या भूयाँसि प्रावृषि। सृज्यन्ते जङ्गमस्थानि तथा धर्मा युगे युगे (महाशान्ति॰ 232.39)।

249. यथर्तुष्वृतुलिङ्गानि नानारूपाणि पर्यये। दृश्यन्ते तानि तान्येव तथा ब्रह्महरादिषु (महाशान्ति॰ 232.40)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अन्तमें भगवान् व्यास कहते हैं, बेटा! तुमने मुझसे जो कुछ पूछा था उसके अनुसार मैंने तुम्हें सृष्टि, काल, क्रिया, वेद, कर्त्ता, कार्य तथा क्रियाफल आदि सभी विषय बता दिए।[250]

इसके पश्चात् भगवान् व्यास महाप्रलय किस प्रकार होती है, इस सम्बन्धमें विस्तारसे बतलाते हुए कहते हैं कि जब प्रलयका समय आता है तो यह संसार सूर्य तथा अग्निकी ज्वालासे भस्म होने लगता है। समस्त चराचर प्राणी दग्ध होकर पृथिवीसे एकाकार हो जाते हैं। तृण और वृक्षोंसे रहित यह भूमि कछुएकी पीठ जैसी दिखाई देने लगती है। इसके पश्चात् जब जल पृथिवीका गुण गन्ध ग्रहण करता है, तब गन्धहीन हुई पृथिवी अपने कारणभूत जलमें लीन हो जाती है। अग्नि जलके गुण रसको ग्रहण कर लेता है, जिससे रसहीन जल अग्निमें लीन हो जाता है। फिर अग्निके गुण रूपको वायुतत्त्व ग्रहण कर लेता है, जिससे आग शान्त होकर वायुमें लीन हो जाती है। इसके पश्चात् आकाश वायुके गुण स्पर्शको ग्रहण कर लेता है, जिससे वायु शान्त होकर आकाशमें लीन हो जाती है। इस समय महान् शब्द करता हुआ आकाश अकेला ही रह जाता है। उसमें स्पर्श, रूप, रस और गन्धका नाम भी नहीं रहता। इसके पश्चात् दृश्य प्रपञ्चको व्यक्त करने वाला मन आकाशके गुण शब्दको ग्रहण कर लेता है, जिससे आकाश मनमें लीन हो जाता है, अन्तमें अव्यक्त (महत्तत्व) ब्रह्माके मनमें लीन हो जाता है। व्यासने इसीको ब्राह्मप्रलय कहा।[251] इस अवसरपर व्यासने कहा कि ऐसा सुननेमें आता है काल ज्ञान (समष्टि बुद्धि) को ग्रस लेता है,

250. सर्गकालक्रिया वेदाः कर्ता कार्यं क्रियाफलम्। प्रोक्तं ते पुत्र सर्वं वै यन्मां त्वं परिपृच्छसि (महाशान्ति॰ 232.43)।

251. महाशान्ति॰ (233.1–13)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

शक्ति उस कालको अपने अधीन कर लेती है, फिर महाकाल शक्तिको ग्रस लेता है और परब्रह्म महाकालको अपने अधीन कर लेता है।[252] आकाश जिस प्रकार अपने गुण शब्दको आत्मसात् कर लेता है, उसी प्रकार ब्रह्म महाकालको अपनेमें विलीन कर लेता है। यही ब्रह्म अव्यक्त, सनातन तथा सर्वोत्तम है। इस प्रकार सम्पूर्ण प्राणियोंका लय होता है और सबके लयका अधिष्ठान परमात्मा ही है।[253]

(ब्राह्मणोंका कर्त्तव्य)

महाप्रलयका वर्णन करनेके पश्चात् भगवान् व्यास शुकदेवको ब्राह्मणोंके कर्त्तव्योंके विषयमें बताते हैं। इस अवसरपर व्यास कहते हैं – ब्राह्मणोंको अध्ययन–अध्यापन, यजन–याजन तथा दान देना और प्रतिग्रह (दान लेना) – इन छह कर्मोंका आश्रय लेना चाहिए। ब्राह्मण न तो अनुचित रूपसे दान ले और न ही व्यर्थमें दान दे।[254] यजमानसे, शिष्य इत्यादिसे जब महान् धन प्राप्त हो, तब उस धनसे यज्ञ करे, दान दे, किन्तु अकेले उस धनका उपभोग न करे।[255] देवता, ऋषि, पितर, गुरु, वृद्ध, रोगी और भूखे मनुष्योंको भोजन देनेके लिए गृहस्थी ब्राह्मणोंको

252. कालो गिरति विज्ञानं कालं बलमिति श्रुतिः। बलं कालो ग्रसति तु तं विद्वान् कुरुते वशे (महाशान्ति॰ 233.16)।

253. आकाशस्य यथा घोषं तं विद्वान् कुरुते आत्मनि। तदव्यक्तं परं ब्रह्म तच्छाश्वतमनुत्तमम्। एवं सर्वाणि भूतानि ब्रह्मैव प्रतिसञ्चरः (महाशान्ति॰ 233. 17)।

254. अध्यापयेदधीयीत याजयेत यजेत वा। न वृथा प्रतिगृह्णीयान्न च दद्यात् कथञ्चन (महाशान्ति॰ 234.11)।

255. याज्यतः शिष्यतो वाऽपि कन्याया वा धनं महत्। यदागच्छेद् यजेद् दद्यान्नैकोऽश्नीयात् कथंचन (महाशान्ति॰ 234.12)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

दान लेना चाहिए। दान लेनेके सिवाय ब्राह्मणके लिए धनसंग्रहका दूसरा कोई पवित्र मार्ग नहीं है।[256]

अन्तमें भगवान् व्यास श्रेष्ठ पुरुषोंके मतका उल्लेख करते हुए कहते हैं – योग्य और पूजनीय ब्राह्मणोंके लिए कोई भी वस्तु अदेय नहीं है। वैसे सत्पात्रोंके लिए तो उच्चैःश्रवा घोड़ा भी दिया जा सकता है, ऐसा श्रेष्ठ पुरुषोंका मत है।[257]

यद्यपि ब्राह्मणोंके कर्त्तव्योंके विषयमें व्यासने शुकदेवको शान्तिपर्वके 234वें अध्यायमें पर्याप्त मात्रामें बताया है किन्तु पुनः फिरसे 235वें अध्यायमें ब्राह्मणोंके कर्त्तव्योंको स्पष्ट करते हुए कहते हैं – ब्राह्मणोंको 'अ उ म्' इन तीन अक्षरोंसे सम्बन्ध रखने वाली प्रणवविद्याका चिन्तन एवं विचार करना चाहिए। वेदके छहों अङ्गों सहित ऋक्, साम, यजुष् एवं अथर्वके मन्त्रोंका स्वर-व्यञ्जनके सहित अध्ययन करना चाहिए क्योंकि ब्राह्मणके छहों कर्मोंसे विराजमान धर्म ही इन वेदोंमें प्रतिष्ठित हैं।[258] ब्राह्मण किसी भी जीवको कष्ट न देकर – उसकी जीविकाका हनन न करके अपनी जीविका चलानेकी इच्छा करे।

---

256. गृहमावसतो ह्यस्य नान्यत तीर्थं प्रतिग्रहात्। देवर्षिपितृगुर्वर्थं वृद्धातुरबुभुक्षताम् (महाशान्ति॰ 234.13)।
257. अर्हतामनुरूपाणां नादेयं ह्यस्ति किंचन। उच्चैःश्रवसमप्यश्वं प्रापणीयं सतां विदुः (महाशान्ति॰ 234.15)।
258. त्रयीं विद्यामवेक्षेत वेदेषूक्तामथाङ्गतः। ऋक्सामवर्णाक्षरतो यजुषोऽथर्वणस्तथा। तिष्ठत्येतेषु भगवान् षट्सु कर्मसु संस्थितः (महाशान्ति॰ 235.1)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सन्तोंकी सेवामें रहकर तत्त्वज्ञान प्राप्त करे, अच्छा इंसान बने तथा शास्त्रकी व्याख्या करनेमें कुशल हो।[259]"

व्यास ब्राह्मणोंके कर्त्तव्योंका विशद रूपसे वर्णन करते हैं, जिसमें मुख्य रूपसे नैतिक गुणोंकी प्रधानता है। मन-इन्द्रियोंपर विजय पानेकी बात है। श्रेष्ठ पुरुषोंके धर्मके अनुसार चलने तथा शिष्टाचारके पालनका निर्देश है।

(सांख्य एवं योगका प्रतिपादन)

इसके अनन्तर व्यास योगसे सम्बन्धित विषयोंका प्रतिपादन शुकदेवके सम्मुख करते हैं। पञ्चमहाभूत, अहंकार और बुद्धिका उल्लेख करते हैं।

पञ्चमहाभूतमें से एक-एक भूतको पृथक् पृथकतया सिद्ध करनेपर जो सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं, उनका उल्लेख करते हैं।

इस अवसरपर भगवान् व्यास कहते हैं कि सप्त पदार्थों (पञ्चमहाभूत, अहंकार तथा बुद्धि) का कार्यभूत व्यक्त जगत् अन्तमें अव्यक्त परमात्मामें लीन हो जाता है क्योंकि उन्हीं परमात्मासे यह जगत् उत्पन्न होता है और व्यक्त नाम धारण करता है।[260]"

---

259. असंरोधेन भूतानां वृत्तिं लिप्सेत वै द्विजः। सद्भ्य आगतविज्ञानः शिष्टः शास्त्रविचक्षणः (महाशान्ति॰ 235.4)।

260. तथैव व्यक्तमात्मानमव्यक्तं प्रतिपद्यते। यतो निःसरते लोको भवति व्यक्तसंज्ञकः (महाशान्ति॰ 236.27)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

व्यक्त तथा अव्यक्तकी परिभाषा बताते हुए व्यास कहते हैं - जन्म, बुद्धि, जरा और मरण - इन चार लक्षणोंसे युक्त जो तत्त्व है, उसीको व्यक्त कहते हैं।[261] जो तत्त्व इसके विपरीत है अर्थात् जिसमें जन्म आदि चारों विकार नहीं है, उसे अव्यक्त कहा गया है। उसी अव्यक्तके दो भेद हैं - जीवात्मा और परमात्मा।[262] जीवात्मा व्यक्तके सम्पर्कसे जन्म, वृद्धि, जरा और मृत्यु - इन चार लक्षणोंसे युक्त तथा धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष - इन चार पुरुषार्थोंसे सम्बन्धित कहा जाता है। दूसरा अव्यक्त परमात्मा ज्ञानस्वरूप है। व्यक्तकी उत्पत्ति उसी अव्यक्त परमात्मासे होती है। व्यक्तको क्षेत्र और अव्यक्तको क्षेत्रज्ञ कहा जाता है। विषयोंमें आसक्त हुआ जीवात्मा जब असक्तिरहित होकर विषयोंसे निवृत्त हो जाता है, तब वह मुक्त कहलाता है। सांख्यवादियोंके मतमें यही मोक्ष है।[263]

इसके पश्चात् व्यास उन योगियोंकी चर्चा करते हैं, जो ब्रह्मभावको प्राप्त हो जाते हैं। इस प्रसंगमें भगवान् व्यास कहते हैं - जिसने ममता और अहंकारका त्याग कर दिया है, जो शीत, उष्ण आदि द्वन्द्वोंको समानभावसे सहता है, जिसके संशय दूर हो गए हैं, जो कभी क्रोध और द्वेष नहीं करता, झूठ नहीं बोलता, गाली सुनकर तथा मार खाकर भी जो अहितकी बात नहीं सोचता, सबपर मित्रभाव रखता है,

---

261. प्रोक्तं तद् व्यक्तमित्येव जायते वर्धते च यत्। जीर्यते म्रियते चैव चतुर्भिर्लक्षणैर्युतम् (महाशान्ति॰ 236.30)।
262. विपरीतमतो यत् तु तदव्यक्तमुदाहृतम्। द्वावात्मानौ च वेदेषु सिद्धान्तेष्वप्युदाहृतौ (महाशान्ति॰ 236.31)।
263. चतुर्लक्षणजं त्वाद्यं चतुर्वर्गं प्रचक्षते। व्यक्तमव्यक्तजं चैव तथा बुद्धमथेतरत्। सत्त्वं क्षेत्रज्ञ इत्येतद् द्वयमप्यनुदर्शितम्। द्वावात्मानौ च वेदेषु विषयेष्वनुरज्यतः। विषयात् प्रतिसंहारः सांख्यानां सिद्धिलक्षणम् (महाशान्ति॰ 236.32-33)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जो मन, वाणी और कर्मसे किसी जीवको कष्ट नहीं पहुँचाता और समस्त प्राणियोंपर समानभाव रखता हे, वही योगी ब्रह्मभावको प्राप्त होता है।[264]

किस प्रकारके सांख्ययोगी (ज्ञानी) संसार-बन्धनसे मुक्त हो जाते हैं, उनकी विशेषताओंका वर्णन भगवान् व्यासने इस प्रकार किया - जो किसी वस्तुकी न तो इच्छा करता है, न अनिच्छा ही करता है, जीवन-निर्वाह मात्रके लिए जो कुछ मिल जाता है, उसीपर सन्तोष करता है, जो निर्लोभ, व्यथारहित और जितेन्द्रिय है, जिसको न तो कुछ करनेसे प्रयोजन है और न कुछ न करनेसे ही, जिसकी इन्द्रियाँ और मन कभी चञ्चल नहीं होते, जिसका मनोरथ पूर्ण हो गया है, जो समस्त प्राणियोंपर समान दृष्टि और मैत्री भाव रखता है, मिट्टीके ढेले, पत्थर और स्वर्णको एक जैसा समझता है, जिसकी दृष्टिमें प्रिय-अप्रियका भेद नहीं है, जो धीर है और अपनी निन्दा और स्तुतिमें सम रहता है, जो सम्पूर्ण भोगोंमें स्पृहारहित है, जो दृढ़तापूर्वक ब्रह्मचर्यमें स्थित है तथा सब प्राणियोंमें हिंसाभावसे रहित है, ऐसा सांख्ययोगी संसार-बन्धनसे मुक्त हो जाता है।[265]

264. निर्ममश्चानहङ्कारो निर्द्वन्द्वश्छिन्नसंशयः। नैव क्रुद्ध्यति न द्वेष्टि नानृता भाषते गिरः। आक्रुष्टस्ताडितश्चैव मैत्रेण ध्याति नाशुभम्। वाग्दण्डकर्ममनसा त्रयाणां च निवर्तकः। समः सर्वेषु भूतेषु ब्रह्माणमभिवर्तते (महाशान्ति॰ 236.34-35)।

265. नैवेच्छति न चानिच्छो यात्रामात्रव्यवस्थितः। अलोलुपोऽव्यथो दान्तो न कृती न निराकृतिः। नास्येन्द्रियमनेकाग्रं न विक्षिप्तमनोरथः। सर्वभूतसदृङ्मैत्रः समलोष्टाश्मकाञ्चनः। तुल्यप्रियाप्रियो धीरस्तुल्यनिन्दात्मसंस्तुतिः।। अस्पृहः सर्वकामेभ्यो ब्रह्मचर्यदृढव्रतः। अहिंस्रः सर्वभूतानामीदृक् सांख्यो विमुच्यते (महाशान्ति॰ 236.36-39)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(सृष्टिके समस्त कार्योंमें बुद्धिकी प्रधानता)

सांख्य एवं योग द्वारा ज्ञानसे मोक्षकी प्राप्ति होनेकी बात सुननेके पश्चात् इस अवसरपर मुनि शुकदेव भगवान् व्याससे एक प्रश्न करते हैं और कहते हैं - वह ज्ञान अथवा विद्या क्या है, जिसके द्वारा मनुष्य जन्म और मृत्यु दोनोंके बन्धनसे छुटकारा पा जाता है। यह ज्ञान अथवा विद्या प्रवृत्ति रूप धर्म है अथवा निवृत्ति रूप? यह सब मुझे समझाइए।[266] इस प्रश्नके उत्तरमें व्यास सर्वप्रथम नास्तिकोंके मतका प्रतिपादन करते हैं तथा उसकी भर्त्सना करते हैं। व्यासका कहना है कि जो लोग यह मानते हैं कि जगत् स्वभावसे ही उत्पन्न है, इसका कोई चेतन मूल कारण नहीं है, वह अज्ञानी ही है। इस मतका सहारा लेकर वे परमेश्वरकी उपासनासे निवृत्त हो जाते हैं। ऐसे लोग अदृष्ट और ईश्वरकी सत्ताको स्वीकार नहीं करते। नास्तिकोंका यह मत मनुष्योंको परमार्थसे वञ्चित करके उनके विनाशके लिए ही पैदा किया गया है। ऐसे लोग कल्याणके भागी नहीं होते।[267]

न तो जगत् अपने आप उत्पन्न हो जाता है और न ही कार्य अपने आप हो जाते हैं, इस विषयको स्पष्ट करते हुए कहते हैं - देखा जाता है कि जगत् में बुद्धि सम्पन्न चेतन प्राणियोंद्वारा ही भूमिको जोतनेके कार्य, अनाजके बीजोंका संग्रह तथा सवारी, आसन और गृहनिर्माण - ये सब कार्य सदासे किए जाते रहे हैं। यदि ये कार्य अपने

---

266. किं तज्ज्ञानमथो विद्या यथा निस्तरते द्वयम्। प्रवृत्तिलक्षणो धर्मो निवृत्तिरिति वा वद (महाशान्ति॰ 237.2)।

267. ये चैनं पक्षमाश्रित्य निवर्तन्त्यल्पमेधसः। स्वभावं कारणं ज्ञात्वा न श्रेयः प्राप्नुवन्ति ते (महाशान्ति॰ 237.5)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आप ही हो जाते तो कोई भी इनमें प्रवृत्त नहीं होता।[268] चेतन प्राणी ही खेलनेके लिए स्थान और रहनेके लिए घर बनाते हैं। चेतन प्राणी ही रोगोंको ठीकसे पहचानकर दवाका प्रयोग करते हैं। बुद्धिमान् मनुष्योंके द्वारा ही ये सब कार्य किए जाते हैं, अपने आप कोई कार्य नहीं होता।[269] बुद्धि ही धनकी प्राप्ति कराती है। बुद्धिसे ही मनुष्य कल्याणको प्राप्त करता है। एक जैसे लक्षणों वाले राजाओंमें भी जो राजा लोग बुद्धिमें बढ़े-चढ़े होते हैं, वे ही राज्यका उपभोग करते हैं तथा दूसरोंपर शासन करते हैं।[270] इस प्रकार व्यासने चेतन मनुष्योंमें बुद्धिकी प्रधानताका प्रतिपादन किया। अन्तमें व्यास कहते हैं – प्राणियोंके स्थूल-सूक्ष्म या छोटे-बड़ेका भेद भी बुद्धिसे ही जाना जाता है। इस जगत्में सब प्राणियोंकी सृष्टि विद्यासे हुई और उनकी परम गति विद्या ही है।[271]

(प्राणियोंकी श्रेष्ठताके तारतम्यका निरूपण)

सृष्टिके समस्त कार्योंमें बुद्धिकी प्रधानताका निरूपण करनेके पश्चात् भगवान् व्यास जरायुज, अण्डज, स्वेदज और उद्भिज्ज – इन चारों प्रकारके प्राणियोंकी श्रेष्ठताके तारतम्यको बताना प्रारम्भ करते हैं। इस अवसरपर व्यास कहते हैं – स्थावर प्राणियोंकी अपेक्षा जङ्गम

---

268. कृष्यादीनीह कर्माणि सस्यसंहरणानि च। प्रज्ञावद्भिः प्रक्लृप्तानि यानासनगृहाणि च (महाशान्ति॰ 237.7)।
269. आक्रीडानां गृहाणां च गदानामगदस्य च। प्रज्ञावन्तः प्रयोक्तारो ज्ञानवद्भिरनुष्ठिताः (महाशान्ति॰ 237.8)।
270. प्रज्ञा संयोजयत्यर्थैः प्रज्ञा श्रेयोऽधिगच्छति। राजानो भुञ्जते राज्यं प्रज्ञया तुल्यलक्षणाः (महाशान्ति॰ 237.9)।
271. परावरं तु भूतानां ज्ञानेनैवोपलभ्यते। विद्यया तात सृष्टानां विद्यैवेह परा गतिः (महाशान्ति॰ 237.10)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्राणियोंको अधिक श्रेष्ठ समझना चाहिए, क्योंकि जङ्गम प्राणियोंमें विशेष रूपसे चेष्टा देखी जाती है।[272] जङ्गम प्राणियोंमें भी बहुत पैरवाले तथा दो पैरवाले - ये दो तरहके प्राणी होते हैं। इनमें बहुत पैरवालोंकी अपेक्षा दो पैरवाले अनेक प्राणी श्रेष्ठ बताए गए हैं।[273] दो पैरवाले जङ्गम प्राणी भी दो प्रकारके कहे हैं - पार्थिव मनुष्य और अपार्थिव पक्षी। अपार्थिवोंसे पार्थिव श्रेष्ठ हैं, क्योंकि वे अन्नका भोजन करते हैं।[274] पार्थिव मनुष्य भी दो प्रकारके बताए गए हैं - मध्यम और अधम। इनमें मध्यम मनुष्य अधम मनुष्यकी अपेक्षा श्रेष्ठ हैं, क्योंकि वे जाति-धर्मको धारण करते हैं।[275]

मध्यम पुरुष दो प्रकारके कहे गए हैं - धर्मज्ञ और धर्मसे अनभिज्ञ। इनमें धर्मज्ञ ही श्रेष्ठ हैं, क्योंकि वे कर्त्तव्य और अकर्त्तव्यका विवेक रखते हैं और कर्त्तव्यका पालन करते हैं।[276] धर्मज्ञोंके दो भेद हैं- वेदज्ञ और अवेदज्ञ। इनमें वेदज्ञ श्रेष्ठ हैं क्योंकि उन्हींमें ही वेद प्रतिष्ठित

272. स्थावरेभ्यो विशिष्टानि जङ्गमान्युपधारयेत्। उपपन्नं हि यच्चेष्टा विशिष्येत विशेष्यया (महाशान्ति॰ 237.12)।
273. आहुर्वै बहुपादानि जङ्गमानि द्वयानि तु। बहुपाद्भ्यो विशिष्टानि द्विपदानि बहून्यपि (महाशान्ति॰ 237.13)।
274. द्विपदानि द्वयान्याहुः पार्थिवानीतराणि च। पार्थिवानि विशिष्टानि तानि ह्यन्नानि भुञ्जते (महाशान्ति॰ 237.14)।
275. पार्थिवानि द्वयान्याहुर्मध्यमान्यधमानि तु। मध्यमानि विशिष्टानि जातिधर्मोपधारणात् (महाशान्ति॰ 237.15)।
276. मध्यमानि द्वयान्याहुर्धर्मज्ञानीतराणि च। धर्मज्ञानि विशिष्टानि कार्याकार्योपधारणात् (महाशान्ति॰ 237.16)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हैं।[277] वेदज्ञ भी दो प्रकारके बताए गए हैं – प्रवक्ता तथा अप्रवक्ता। इनमें प्रवचन करने वाले प्रवक्ता श्रेष्ठ हैं, क्योंकि वे वेदमें बताए हुए सम्पूर्ण धर्मोंको धारण करने वाले होते हैं।[278] प्रवक्ता भी दो प्रकारके कहे गए हैं – आत्मज्ञ और अनात्मज्ञ। इनमें आत्मज्ञ पुरुष ही श्रेष्ठ हैं क्योंकि वे जन्म और मृत्युके तत्त्वको समझते हैं।[279]

प्राणियोंके तारतम्यका इतना विस्तृत निरूपण करनेके पश्चात् व्यास शुकदेवसे कहते हैं – जो प्रवृत्तिरूप तथा निवृत्तिरूप दोनों प्रकारके धर्मोंको जानते हैं, वे ही सर्वज्ञ, सर्ववेत्ता, त्यागी, सत्यसंकल्प, सत्यवादी, पवित्र और समर्थ होते हैं।[280]

इसके पश्चात् व्यास कहते हैं कि सत्ययुगमें सभी तपका आश्रय लेते हैं। तपस्याके प्रभावसे वे ब्रह्मभावको प्राप्त करते हैं। यह ब्रह्म यद्यपि वेदोंके कर्मकाण्डमें गुप्तरूपसे प्रतिपादित हुआ है, किन्तु वेदान्तमें स्पष्ट रूपसे प्रतिपादित किया गया है।[281]

---

277. धर्मज्ञानि द्वयान्याहुर्वेदज्ञानीतराणि च। वेदज्ञानि विशिष्टानि वेदो ह्येषु प्रतिष्ठितः (महाशान्ति॰ 237.17)।

278. वेदज्ञानि द्वयान्याहुः प्रवक्तॄणीतराणि च। प्रवक्तॄणि विशिष्टानि सर्वधर्मोपधारणात् (महाशान्ति॰ 237.18)।

279. प्रवक्तॄणि द्वयान्याहुरात्मज्ञानीतराणि च। आत्मज्ञानि विशिष्टानि जन्माजन्मोपधारणात् (महाशान्ति॰ 237.20)।

280. धर्मद्वयं हि यो वेद स सर्वज्ञः स सर्ववित्। स त्यागी सत्यसङ्कल्पः सत्यः शुचिरथेश्वरः (महाशान्ति॰ 237.21)।

281. तदुक्तं वेदवादेषु गहनं वेददर्शिभिः। वेदान्तेषु पुनर्व्यक्तं कर्मयोगेन लक्ष्यते (महाशान्ति॰ 238.11)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(ज्ञानका साधन)

शुकदेव इतना सब सुननेके पश्चात् इसी ब्रह्मके विषयमें अपनी जिज्ञासा प्रस्तुत करते हैं कि जो प्रज्ञावान् हैं, वेदवेत्ता, याज्ञिक, दोष–दृष्टिसे रहित तथा शुद्ध बुद्धिवाले हैं, उस ब्रह्मको वे किस प्रकार प्राप्त करते हैं। यह ब्रह्म तो प्रत्यक्ष और अनुमानसे भी अज्ञात है तथा वेदके द्वारा भी ''यह ऐसा है'' इस प्रकार स्पष्टरूपसे वर्णन नहीं किया गया।[282] तप, ब्रह्मचर्य, सर्वस्वका त्याग और मेधाशक्ति – इनमेंसे किस साधनके द्वारा तत्वका साक्षात्कार माना गया है, कृपा करके मुझे इस विषयका उपदेश दीजिए।[283]

ब्रह्मके सम्बन्धमें इस प्रकारका प्रश्न शुकदेवके द्वारा पूछे जानेपर व्यास कहते हैं – विद्या, तप, इन्द्रियनिग्रह और सर्वस्वत्यागके बिना कोई भी सिद्धि नहीं पा सकता।[284] शरीरमें अव्यक्त भावसे स्थित परमेश्वरका जो ज्ञानमयी दृष्टिसे निरन्तर दर्शन करता रहता है, वह मृत्युके पश्चात् ब्रह्मभावको प्राप्त होनेमें समर्थ हो जाता है।[285] जो ब्रह्म गौ, ब्राह्मण, हाथी, कुत्ते और चाण्डालमें समभावसे स्थित है, उस ब्रह्मको पण्डितजन

---

282. प्रज्ञावाञ्श्रोत्रियो यज्वा कृतप्रज्ञोऽनसूयकः। अनागतमनैतिह्यं कथं ब्रह्माधिगच्छति (महाशान्ति॰ 239.2)।
283. तपसा ब्रह्मचर्येण सर्वत्यागेन मेधया। सांख्ये वा यदि वा योग एतत् पृष्टो वदस्व मे (महाशान्ति॰ 239.3)।
284. नान्यत्र विद्यातपसोर्नान्यत्रेन्द्रियनिग्रहात्। नान्यत्र सर्वसंत्यागात् सिद्धिं विन्दति कश्चन (महाशान्ति॰ 239.5)।
285. अव्यक्तं सर्वदेहेषु मर्त्येषु परमाश्रितम्। योऽनुपश्यति स प्रेत्य कल्पते ब्रह्मभूयसे (महाशान्ति॰ 239.18)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

दर्शन करनेमें समर्थ होते हैं।[286] जब जीवात्मा सभीमें अपनेको और अपनेमें सभी प्राणियोंको स्थित देखता है, उस समय वह ब्रह्मभावको प्राप्त हो जाता है।[287] जैसे अपने शरीरमें ज्ञानस्वरूप आत्मा है, वैसे ही दूसरोंके शरीरमें ज्ञानस्वरूप आत्मा है। निरन्तर जिस पुरुषको ऐसा ज्ञान बना रहता है, वह अमृततत्त्वको प्राप्त करनेमें समर्थ हो जाता है।[288] ब्रह्मभावकी प्राप्तिके साधनके रूपमें भगवान् व्यासने शुकदेवको साररूपमें इस प्रकारका तात्विक निरूपण प्रस्तुत किया।

ज्ञानके द्वारा जिस प्रकार ब्रह्मका साक्षात्कार होता है, उसी प्रकार योगके द्वारा भी परमात्मा अथवा ब्रह्मका साक्षात्कार होता है, इस विषयका साररूपमें निरूपण करते हुए भगवान् व्यास कहते हैं – योगी पाँचों इन्द्रियोंको वशमें करके दृढ़तापूर्वक मनमें स्थापित करे। जब छठे मनसहित पाँचों इन्द्रियाँ बुद्धिमें स्थिर होकर स्वच्छ हो जाती हैं, तब वह योगी ब्रह्मका साक्षात्कार कर लेता है।[289] ऐसा वह योगी अपने अन्तःकरणमें धूमरहित प्रज्वलित अग्निके समान, दीप्तिमान् सूर्यके समान

286. विद्याभिजनसम्पन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि। शुनि चैव श्वपाके च पण्डिताः समदर्शिनः (महाशान्ति॰ 239.19)।

287. सर्वभूतेषु चात्मानं सर्वभूतानि चात्मनि। यदा पश्यति भूतात्मा ब्रह्म सम्पद्यते तदा (महाशान्ति॰ 239.21)।

288. यावानात्मनि वेदात्मा तावानात्मा परात्मनि। य एवं सततं वेद सोऽमृतत्त्वाय कल्पते (महाशान्ति॰ 239.22)।

289. पञ्चेन्द्रियाणि सन्धाय मनसि स्थापयेद् यतिः। यदैतान्यवतिष्ठन्ति मनः षष्ठान्यथात्मनि। प्रसीदन्ति च संस्थाय तदा ब्रह्म प्रकाशते (महाशान्ति॰ 240.18)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तथा आकाशमें चमकती हुई बिजलीके समान प्रकाशस्वरूप आत्माका दर्शन करता है।[290]

(कर्म और ज्ञानमें अन्तर)

ज्ञान दृष्टिके द्वारा तथा योगके द्वारा ब्रह्मसाक्षात्कार होनेके तात्त्विक विषयको अपने पिता व्याससे सुननेके पश्चात् पुनः शुकदेव कर्म और ज्ञानके विषयमें प्रश्न करते हैं - वेदमें "कर्म करो" और "कर्म छोड़ो" ये दो प्रकारके वचन मिलते हैं। विद्याके द्वारा कर्मको त्याग देनेपर मनुष्य किस दिशामें जाते हैं ? और कर्म करनेसे उन्हें किस गतिकी प्राप्ति होती है ? यह मै जानना चाहता हूँ।[291]

शुकदेवके मुखसे ऐसा प्रश्न सुनकर भगवान् वेदव्यास उनके प्रश्नका उत्तर इस प्रकार देना प्रारम्भ करते हैं - सकाम कर्मसे मनुष्य बन्धनमें पड़ता है और ज्ञानसे मुक्त हो जाता है।[292] कर्म करनेसे मनुष्य जन्म लेता है, किन्तु ज्ञानके प्रभावसे जीव परमात्माको प्राप्त होता है।[293] कर्मके फल हैं - सुख-दुःख तथा जन्म-मृत्यु। कर्म द्वारा मनुष्य इन्हींको पाते हैं, किन्तु ज्ञानके द्वारा उन्हें परमपदकी प्राप्ति होती है।[294] शुकदेव!

---

290. विधूम इव दीप्तार्चिरादित्य इव दीप्तिमान्। वैद्युतोऽग्निरिवाकाशे दृश्यते आत्मा तथात्मनि (महाशान्ति॰ 240.19)।
291. यदिदं वेदवचनं कुरु कर्म त्यजेति च। कां दिशं विद्यया यान्ति कां च गच्छन्ति कर्मणा (महाशान्ति॰ 241.1)।
292. कर्मणा बध्यते जन्तुर्विद्यया तु प्रमुच्यते (महाशान्ति॰ 241.7)।
293. कर्मणा जायते प्रेत्य मूर्तिमान् षोडशात्मकः। विद्यया जायते नित्यमव्यक्तं ह्यव्ययात्मकम् (महाशान्ति॰ 241.8)।
294. कर्मणः फलमाप्नोति सुखदुःखे भवाभवौ। विद्यया तदवाप्नोति यत्र गत्वा न शोचति (महाशान्ति॰ 241.11)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ज्ञानी मनुष्य कुछ और ही होता है, कर्मासक्त मनुष्य उससे सर्वथा भिन्न है।[295]

यद्यपि शुकदेवके प्रश्नका उत्तर व्यास दे चुके हैं, कर्म और ज्ञानका अन्तर भी स्पष्ट कर चुके हैं, लेकिन पुनः शुकदेव उसी प्रश्नको दोहरा रहे हैं - वेदमें "कर्म करो" और "कर्म छोड़ो" ये दोनों बातें कही गई हैं। मैं इनका तात्पर्य कैसे समझूँ, जिससे इनका विरोध हट जाए।[296] इस प्रश्नको दुबारा शुकदेवके द्वारा कहे जानेपर व्यासने शुकदेवके सम्मुख स्पष्ट किया - पूर्वकालमें ब्रह्मा जी ने जिस आचार व्यवहारका विधान किया है तथा जिसका पालन पहलेके सत्पुरुष तथा ऋषि-महर्षि पालन करते आ रहे हैं, तुम भी उसी आचार-व्यवहारका पालन करो। इस अवसरपर व्यासने ब्रह्मचर्यके पालन करनेकी बात उठाते हुए स्पष्ट किया कि परम ऋषियोंने ब्रह्मचर्यके पालनसे ही उत्तम लोकोंपर विजय पाई है, अतः कल्याणकी इच्छा रखकर सर्वप्रथम ब्रह्मचर्यका पालन करना चाहिए।[297] अन्तमें शुकदेवको भगवान् व्यास आदेश देते हैं कि स्तुति और नमस्कारसे अलग रहकर शुभाशुभ कर्मोंका परित्याग करके जो भी कन्दमूल-फल मिल जाए, उसीसे भूख मिटाते हुए वनमें अकेले विचरण करो।[298]

---

295. विद्यामयोऽन्यः पुरुषस्तात कर्ममयोऽपरः (महाशान्ति॰ 241.15)।
296. वेदे वचनमुक्तं तु कुरु कर्म त्यजेति च। कथमेतद् विजानीयां तच्च व्याख्यातुमर्हसि (महाशान्ति॰ 242.3)।
297. ब्रह्मचर्येण वै लोकान् जयन्ति परमर्षयः। आत्मनश्च ततः श्रेयांस्यन्विच्छन् मनसात्मनि (महाशान्ति॰ 242.6)।
298. निःस्तुतिर्निर्नमस्कारः परित्यज्य शुभाशुभे। अरण्ये विचरैकाकी येन केनचिदाशितः (महाशान्ति॰ 242.9)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

शुकदेवने एक ही प्रश्नको दो बार भगवान् व्यासके सम्मुख रखा और दोनों बार व्यास प्रश्नका उत्तर देते हैं, लेकिन तीसरी बार पुनः उसी प्रश्नको शुकदेव दोहराते हुए कहते हैं कि "कर्म करो" और "कर्म छोड़ो" - वेदके ये दो तरहके वचन हैं, लोकदृष्टिसे विचार करनेपर परस्पर विरुद्ध जान पड़ते हैं। क्या ये प्रामाणिक हैं या अप्रामाणिक ? यदि प्रामाणिक हैं तो परस्पर विरोध रहते हुए इन्हें शास्त्रवचन कैसे माना जा सकता है ? तथा दोनों ही वचन प्रामाणिक कैसे हो सकते हैं ? इसके साथ-साथ कर्मोंका विरोध किए बिना मोक्षकी प्राप्ति किस प्रकार हो सकती है[299]? फिरसे शुकदेवके द्वारा यही प्रश्न किए जानेपर भगवान् व्यासने चारों वर्णों एवं चारों आश्रमोंके कर्त्तव्याकर्त्तव्योंका प्रतिपादन करनेके पश्चात् यही कहा कि जो धर्मानुकूल वर्णाश्रमोंके नियमोंका पालन करते हैं, वे मोक्षको प्राप्त हो जाते हैं। अन्तमें भगवान् व्यास कहते हैं - निष्काम भावसे किया गया कर्मानुष्ठान पहलेके किए गए अशुभ कर्मोंको भी नष्ट कर डालता है। यह कर्म लोकमें अथवा परलोकमें कुछ भी भला या बुरा करनेमें समर्थ नहीं होता।[300]

[शुकदेवको सावधान करनेके लिए व्यासका उन्हें उपदेश]

भगवान् कृष्णके कहनेसे युधिष्ठिर भीष्मसे प्रश्नोत्तरके रूपमें अनेक विद्याओं, कलाओं तथा धर्मोंके बारेमें जानकारी प्राप्त करते हैं।

---

299. यदिदं वेदवचनं लोकवादे विरुध्यते। प्रमाणे वाऽप्रमाणे च विरुद्धे शास्त्रता कुतः॥ इत्येतच्छ्रोतुमिच्छामि प्रमाणं तूभयं कथम्। कर्मणामविरोधेन कथं मोक्षः प्रवर्तते (महाशान्ति॰ 242.10-11)।

300. यत् करोत्यनभिसन्धिपूर्वकं तच्च निर्णुदति तत् पुराकृतम्। न प्रियं तदुभयं न चाप्रियं तस्य तज्जनयतीह कुर्वतः (महाशान्ति॰ 249.14)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इन्हीं प्रश्नोंमें युधिष्ठिर भीष्मसे एक प्रश्न करते हैं कि व्यासपुत्र शुकदेवको किस प्रकार वैराग्य प्राप्त हुआ था ? यह मैं आपके मुखसे सुनना चाहता हूँ।[301] भीष्म युधिष्ठिरका प्रश्न सुनकर कहते हैं कि जब व्यासने देखा कि यह साधारण लोगोंकी भाँति आचरण कर रहा है, तब व्यासने उन्हें सम्पूर्ण वेदोंका अध्ययन कराया और फिर उपदेश दिया।[302] इस सम्पूर्ण उपदेशमें व्यास उन्हें प्राणवायुपर विजय प्राप्त करनेके लिए कहते हैं। कड़ीसे कड़ी सर्दी, गर्मी, भूख-प्यासको सहन करनेके लिए कहते हैं। इसके अतिरिक्त धर्मका विधिपूर्वक पालन करने, देवताओं एवं अतिथियोंका सत्कार करने, कुपथगामी मनको वशमें करने, नास्तिकोंसे दूर रहने, धैर्यका आश्रय लेने, धर्मरूपी नौकापर चढ़कर भवसागरसे पार होने, ब्राह्मणोचित कर्त्तव्यका पालन करने, स्वाध्याय तथा तपस्यामें रत रहने, समाधिमें रहने, ज्ञानका भण्डार भरने, तपका अनुष्ठान करने, पुण्य सञ्चय करने, धर्मरूपी धनका उपार्जन करनेकी बात कहते हैं।[303]

उपदेश देनेके बीचमें अनेक बार भगवान् व्यास पुत्रको सावधान करते हुए कहते हैं - यह शरीर जलके फेनके समान क्षणभङ्गुर है। इस शरीरमें जीव पक्षीकी तरह बसा हुआ है। प्रियजनोंका मेल-मिलाप भी सदा रहने वाला नहीं है। फिर भी तुम क्यों सोए पड़े हो[304]? तुम्हारे शत्रु सर्वदा सावधान, जगे हुए, सर्वथा उद्यत और तुम्हारे छिद्रोंको देखनेमें लगे

---

301. कथं निर्वेदमापन्नः शुको वैयासकिः पुरा। एतदिच्छाम्यहं श्रोतुं परं कौतूहलं हि मे (महाशान्ति॰ 321.1)।
302. प्राकृतेन सुवृत्तेन चरन्तमकुतोभयम्। अध्याप्य कृत्स्नं स्वाध्यायमन्वशाद् वै पिता सुतम् (महाशान्ति॰ 321.3)।
303. महाशान्ति॰ (321वाँ अध्याय)।
304. फेनमात्रोपमे देहे जीवे शकुनिवत् स्थिते। अनित्य प्रियसंवासे कथं स्वपिषि पुत्रक (महाशान्ति॰ 321.7)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हुए हैं, परन्तु तुम अभी बालक हो, इसलिए समझ नहीं पा रहे हो।[305] तुम्हारी आयुके दिन गिने जा रहे हैं। आयु क्षीण होती जा रही है और जीवन मानों कहीं लिखा जा रहा हो। फिर तुम उठकर भागते क्यों नहीं हो अर्थात् शीघ्रतापूर्वक कर्त्तव्यपालनमें क्यों नहीं लग जाते।[306] मनुष्य खड़ा हो या सो रहा हो, मृत्यु निरन्तर उसे खोजती फिरती है। जब तुम एक दिन अकस्मात् मृत्युके ग्रास बन जाने वाले हो, तब इस तरह निश्चिन्त और शान्त कैसे बैठे रह सकते हो।[307] तुम अब पच्चीस वर्षके हो गए हो। तुम्हारी आयुके चौबीस वर्ष बीत गए हैं। अतः धर्मका सञ्चय करो। तुम्हारी समस्त आयु यों ही बीती जा रही है।[308] जो काम कल करना हो उसे आज ही कर लेना चाहिए। जो काम दोपहर बाद करना हो, उसे पहले ही पहरमें पूरा कर डालना चाहिए, क्योंकि मृत्यु यह नहीं देखती कि इसका काम पूरा हुआ है या नहीं।[309]

और भी अनेक प्रकारके वैराग्यको बढ़ाने वाले उपदेश देनेके पश्चात् भगवान् व्यास अन्तमें कहते हैं – उस धनसे क्या लाभ जो न तो दिया जा सके और न उपयोगमें लाया जा सके। उस बलसे क्या

305. अप्रमत्तेषु जाग्रत्सु नित्ययुक्तेषु शत्रुषु। अन्तरं लिप्समानेषु बालस्त्वं नावबुध्यसे (महाशान्ति॰ 321.8)।

306. अहःसु गण्यमानेषु क्षीयमाणे तथायुषि। जीविते लिख्यमाने च किमुत्थाय न धावसि (महाशान्ति॰ 321.9)।

307. तिष्ठन्तं च शयानं च मृत्युरन्वेषते यदा। निर्वृत्तिं लभते कस्मादकस्मान्मृत्युनाशितः (महाशान्ति॰ 321.19)।

308. गता त्रिरष्टवर्षता ध्रुवोऽसि पञ्चविंशकः। कुरुष्व धर्मसञ्चयः वयो हि तेऽतिवर्तते (महाशान्ति॰ 321.68)।

309. श्वः कार्यमद्य कुर्वीत पूर्वाह्णे चापराह्णिकं। न हि प्रतीक्षते मृत्युः कृतं वाऽस्य न वाकृतम् (महाशान्ति॰ 321.73)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

लाभ, जिससे शत्रुओंको बाधित न किया जा सके। उस शास्त्रज्ञानसे क्या लाभ, जिसके द्वारा मनुष्य धर्माचरण न कर सके और उस जीवात्मासे क्या लाभ, जो न तो जितेन्द्रिय है और न ही अपने मनको वशमें करके रखता है।[310]

युधिष्ठिरके प्रश्नका इस प्रकार विस्तारपूर्वक उत्तर देनेके पश्चात् भीष्मने कहा कि व्यासजीके द्वारा कहे हुए इन हितकारी वचनोंको सुनकर शुकदेवजी अपने पिताको छोड़कर मोक्षतत्त्वके उपदेशक गुरुके पास चले गए।[311]

[वेदाध्ययन विधि]

मुनि शुकदेवको मिथिलाधिपति राजा जनकके पास भेजनेके उपरान्त व्यास हिमालयकी पूर्व दिशामें स्थित अपने आश्रममें सुमन्तु, जैमिनि, पैल और वैशम्पायन - इन चारों शिष्योंको वेद पढ़ाने लगे थे। बादमें जनकसे मिलकर शुकदेव यहीं आ गए और पिता व्याससे वेदाध्ययन करने लगे। इस समय एक बार स्वाध्यायके विषयमें व्यासने अपने शिष्योंको इस प्रकारका उपदेश दिया - जो ब्रह्मलोकमें अटल निवास चाहता है, उसे चाहिए कि पढ़नेकी इच्छासे आए हुए ब्राह्मणको सदा ही वेद पढ़ाए।[312] जिसका मन वशमें न हो, जो ब्रह्मचर्य-व्रतका पालन न करता हो तथा जो शिष्यभावसे पढ़ने न आया हो, उसे

---

310. धनेन किं यन्न ददाति नाश्नुते बलेन किं येन रिपुं न बाधते। श्रुतेन किं येन न धर्ममाचरेत् किमात्मना यो न जितेन्द्रियो वशी (महाशान्ति॰ 321.93)।

311. इदं द्वैपायनवचो हितमुक्तं निशम्य तु। शुको गतः परित्यज्य पितरं मोक्षदैशिकम् (महाशान्ति॰ 321.94)।

312. ब्राह्मणाय सदा देयं ब्रह्म शुश्रूषवे तथा। ब्रह्मलोके निवासं यो ध्रुवं समभिकाङ्क्षते (महाशान्ति॰ 327.44)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वेदाध्ययन नहीं कराना चाहिए।[313] किसीको शिष्य बनानेसे पूर्व उसके गुणोंको यथार्थरूपसे परख लेना चाहिए। जिसके सदाचारकी परीक्षा न ली गई हो, उसे किसी भी प्रकार विद्यादान नहीं देना चाहिए।[314] जिस प्रकार आगमें तपाने, काटने तथा कसौटीपर कसनेसे शुद्ध सोनेकी परख की जाती है, उसी प्रकार कुल और गुण आदिके द्वारा शिष्योंकी परीक्षा करनी चाहिए।[315] तुम्हारे द्वारा पढ़ाने पर भी जिस शिष्यकी जैसी बुद्धि होगी और जो पढ़नेमें जितना परिश्रम करेगा, उसीके अनुसार उस शिष्यकी विद्या सफल होगी, ऐसा समझना चाहिए।[316] यह वेदाध्ययन महान् कार्य माना गया है, इसे अवश्य करना चाहिए।[317] स्वयम्भू ब्रह्माने यहाँ देवताओंकी स्तुतिके लिए वेदोंकी सृष्टि की है।[318] यह सब उपदेश व्यासने अपने चारों शिष्योंको दिया तथा पुत्र शुकदेवके लिए भी यही उपदेश था।

इसके बाद चारों शिष्य वेदोंके अनेक विभाग करके उनका प्रचार करनेके लिए व्याससे अनुमति लेकर पृथिवीपर आए तथा उन्होंने अग्निहोत्रसे लेकर सोमयाग तकका प्रचार किया तथा गृहस्थाश्रमें प्रवेश करके ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्योंके यज्ञोंको सम्पन्न कराते हुए वे आनन्दसे रहने लगे।

---

313. नाशिष्ये सम्प्रदातव्यो नाव्रते नाकृतात्मनि (महाशान्ति॰ 327.45)।
314. एते शिष्यगुणाः सर्वे विज्ञातव्या यथार्थतः। नापरीक्षितचारित्रे विद्या देया कथंचन (महाशान्ति॰ 327.46)।
315. यथा हि कनकं शुद्धं तापच्छेदनिकर्षणैः। परीक्षेत तथा शिष्यानीक्षेत् कुलगुणादिभिः (महाशान्ति॰ 327.47)।
316. यथामति यथापाठं तथा विद्या फलिष्यति (महाशान्ति॰ 327.48)।
317. वेदस्याध्ययनं हीदं तच्च कार्यं महत् स्मृतम् (महाशान्ति॰ 327.49)।
318. स्तुत्यर्थमिह देवानां वेदाः सृष्टाः स्वयम्भुवा (महाशान्ति॰ 327.50)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

[व्यास द्वारा शुकदेवको गौओंकी श्रेष्ठताका प्रतिपादन]

युधिष्ठिर भीष्म पितामहसे अनेक प्रकारके प्रश्न पूछ रहे हैं, उनमें युधिष्ठिरने जब पितामहसे यह प्रश्न किया कि ऐसी कौनसी वस्तु है जो पवित्रोंमें भी पवित्र है तथा लोक भी उसे पवित्र मानता है, तब भीष्मने एक पुराने वृत्तान्तको सुनाया जो व्यास एवं शुकदेवके प्रश्नोत्तरके रूपमें था।

भीष्मने कहा कि एक बार शुकदेवने व्याससे पूछा कि पवित्रोंमें पवित्र वस्तु क्या है[319]? इस प्रश्नके उत्तरमें व्यासने गौको ही पवित्र बताते हुए इस विषयका निरूपण इस प्रकार किया - गौवें सम्पूर्ण भूतोंकी प्रतिष्ठा हैं। गौवें परम आश्रय हैं। गौएँ पुण्यमयी एवं पवित्र होती हैं। गोधन सबको पवित्र करनेवाला है।[320] गौएँ परम पावन, पवित्र और पुण्यस्वरूपा हैं।[321] यह सब सुननेके बाद शुकदेवके मनमें भी गौकी सेवा-पूजा करनेकी भावना उत्पन्न हुई।

युधिष्ठिरके प्रश्नके उत्तरमें व्यासके इस मन्तव्यको सुनानेके बाद भीष्मने युधिष्ठिरको भी गौओंकी सेवा-पूजा करनेका आदेश दिया।

[व्यास और मैत्रेय संवाद]

तुरन्त ही युधिष्ठिर भीष्म पितामहसे एक प्रश्न करते हैं कि विद्या, तप और दान - इन तीनोंमें कौन श्रेष्ठ है। इस प्रश्नके उत्तरमें भीष्म व्यास और मैत्रेयके उस संवादका कथन करते हैं, जिसमें विद्या, दान

319. पवित्राणां पवित्रं च यत् तद् ब्रूहि पितर्मम (महाअनुशासन॰ 81.11)।

320. गावः प्रतिष्ठा भूतानां तथा गावः परायणम्। गावः पुण्याः पवित्राश्च गोधनं पावनं तथा (महाअनुशासन॰ 81.12)।

321. गावः पवित्राः पुण्याश्च पावनं परमं महत् (महाअनुशासन॰ 81.41)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

और तपके विषयमें मैत्रेय और व्यास अपना-अपना विचार प्रस्तुत करते हैं। दानके विषयमें व्यास कहते हैं - मनुष्यके लिए वेद तीन बातोंको उत्तम व्रत बताते हैं - किसीके प्रति द्रोह न करे, दान दे तथा दूसरोंसे सदा सत्य बोले।[322] जिस प्रकार वेदोंका स्वाध्याय, इन्द्रियोंका संयम और सर्वस्वका त्याग उत्तम है, उसी प्रकार इस संसारमें दान भी उत्तम है।[323] मनीषी जनोंने तीन प्रकारके आचरण बताए हैं - पुण्यमय, पापमय तथा पुण्य-पाप दोनोंसे रहित।[324] जो मनुष्य यज्ञ, दान और तपस्यामें प्रवीण होते हैं, वे ही मनुष्य पुण्य कर्म करने वाले होते हैं।[325]

इसके पश्चात् व्यास मैत्रेयके सम्मुख दानसे भी उत्तम धर्मका वर्णन करनेके लिए प्रवृत्त होते हैं और इस प्रसंगमें तप और विद्याका उल्लेख करते हैं। व्यास कहते हैं - पुरुष जिस उद्देश्यसे भी तपमें प्रवृत्त होता है, वह सब उसे प्राप्त हो जाता है। तपस्यासे सब सुलभ हो जाता है, क्योंकि तपस्याका बल सबसे बड़ा है।[326] दान, तप और विद्याके सम्बन्धमें अपने विचार मैत्रेयके सम्मुख रखनेके पश्चात् व्यास अपने आश्रममें चले गये।[327]

---

322. त्रीण्येव तु पदान्याहुः पुरुषस्योत्तमं व्रतम्। न द्रुह्येच्चैव दद्याच्च सत्यं चैव परं वदेत् (महाअनुशासन॰ 120.10)।
323. यथा वेदाः स्वधीताश्च यथा चेन्द्रियसंयमः। सर्वत्यागो यथा चेह तथा दानमनुत्तमम् (महाअनुशासन॰ 120.19)।
324. त्रिविधानीह वृत्तानि नरस्याहुर्मनीषिणः। पुण्यमन्यत् पापमन्यन्न पुण्यं न च पापकम् (महाअनुशासन॰ 120.23)।
325. यज्ञदानतपःशीला नरा वै पुण्यकर्मिणः (महाअनुशासन॰ 120.25)।
326. दुरन्वयं दुष्प्रधर्षं दुरापं दुरतिक्रमम्। सर्वं वै तपसाभ्येति तपो हि बलवत्तरम् (महाअनुशासन॰ 122.8)।
327. गृहान् साधु व्रजाम्यहम् (महाअनुशासन॰ 122.19)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

[व्यास द्वारा धर्मके गूढ़ रहस्योंका प्रतिपादन]

युधिष्ठिर एक साथ अनेक प्रश्न भीष्म पितामहके सम्मुख करते हैं। इनमें मुख्य प्रश्न यह है कि कल्याण चाहने वाले मनुष्यको क्या करना चाहिए। इन प्रश्नोंके उत्तरमें भीष्म युधिष्ठिरसे धर्मके परम गुह्य रहस्योंका वर्णन करते हैं और स्पष्टतया इस बातका उल्लेख करते हैं कि जो गूढ़ रहस्य मैं बताने जा रहा हूँ, उनका वर्णन भगवान् व्यासने मुझसे किया था।[328] इस प्रसंगमें भीष्म पितरोंका मत, बृहस्पतिका मत, विष्णुका मत, बलदेव, धर्म, अग्नि, विश्वामित्र, ब्रह्मा, विभावसु, लक्ष्मी, अङ्गिरा, गर्ग, धौम्य, जमदग्नि, वायु, लोमश मुनि, अरुन्धती, धर्मराज यम, चित्रगुप्त, प्रमथगण, दिग्गज, शिव तथा स्कन्दके मतका प्रतिपादन करते हैं। उपर्युक्त जिन देवताओंके नामोंका उल्लेख किया गया है, उन्होंने धर्मशास्त्रीय श्राद्ध, दान आदि विषयोंका ही प्रतिपादन किया। अन्तमें फिरसे भीष्मने युधिष्ठिरके सम्मुख व्यासका उल्लेख करते हुए कहा कि देवताओंके द्वारा बताए हुए धर्मके निगूढ़ रहस्योंको व्यास जीने मुझसे कहा था।[329]

[व्यासके कहनेपर भीष्मके द्वारा युधिष्ठिरको हस्तिनापुर जानेके लिए आदेश]

जब भीष्मने शरशैय्यापर पड़े हुए ही युधिष्ठिरके धर्म-अर्थसे सम्बन्धित सभी प्रश्नोंका उत्तर दे दिया और उनकी सारी शंकाएँ तथा जिज्ञासाएँ शान्त हो गईं, तब भीष्म चुप हो गए। भगवान् व्यास वहाँ उस

328. शृणुष्वावहितो राजन् धर्मगुह्यानि भारत। यथा हि भगवान् व्यासः पुरा कथितवान् मयि (महाअनुशासन० 125.4)।

329. महाअनुशासन० (125-134)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

समय उपस्थित थे और दो घड़ी तक ध्यान करनेके पश्चात् भीष्मसे उन्होंने कहा – गङ्गानन्दन! युधिष्ठिर शान्त एवं सन्देहरहित हो चुके हैं तथा अपने भाइयों एवं कृष्णके साथ आपकी सेवामें बैठे हैं, अब आप इन्हें हस्तिनापुर जानेका आदेश प्रदान करें।[330] भगवान् व्यासके कहनेपर भीष्मने मन्त्रियों सहित राजा युधिष्ठिरको जानेकी आज्ञा दे दी।[331]

[भीष्मकी अन्त्येष्टिके समय व्यासकी उपस्थिति]

पचास दिनके बाद जिस समय युधिष्ठिर भीष्मकी शरशैय्याके सम्मुख पहुँचे, उस समय भगवान् व्यास तथा नारद एवं असित देवल ऋषि भीष्मके पास ही बैठे हुए थे।[332] इस समय सर्वप्रथम युधिष्ठिरने पितामहको तथा फिर व्यासको प्रणाम किया।[333] युधिष्ठिरकी विशाल भुजाको हाथमें लेकर भीष्मने कहा – बाणोंकी शैय्यापर शयन करते हुए आज मुझे अट्ठावन दिन हो गए। फिर धृतराष्ट्रको पुकारकर उनके प्रति समयोचित ये वचन कहे – तुम्हें शोक नहीं करना चाहिए। तुमने

330. राजन् प्रकृतिमापन्नः कुरुराजो युधिष्ठिरः। सहितो भ्रातृभिः सर्वैः पार्थिवैश्चानुयायिभिः।। उपास्ते त्वां नरव्याघ्र सह कृष्णेन धीमता। तमिमं पुरयानाय समनुज्ञातुमर्हसि (महाअनुशासन॰ 166.6-7)।

331. एवमुक्तो भगवता व्यासेन पृथिवीपतिः। युधिष्ठिरं सहामात्यमनुजज्ञे नदीसुतः (महाअनुशासन॰ 166.8)।

332. उपास्यमानं व्यासेन पाराशर्येण धीमता। नारदेन च राजर्षे देवलेनासितेन च (महाअनुशासन॰ 167.13)।

333. द्वैपायनादीन् विप्रांश्च तैश्च प्रत्यभिनन्दितः (महाअनुशासन॰ 167.16)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कृष्णद्वैपायन व्याससे देवताओंका रहस्य तो सुन ही रखा है। अतः जो कुछ हुआ है, वह अवश्यम्भावी था।[334]

इसके पश्चात् भीष्म जब कृष्णसे प्रार्थना करने लगे कि आप सदा मेरा उद्धार करें। अब मुझे जानेकी आज्ञा दें, तब उन्होंने कृष्णके सम्मुख ही इस विषयका खुलासा किया कि कृष्ण! मैं जानता हूँ – आप और अर्जुन साक्षात् भगवान् नारायण और नर हैं, जो मानव शरीरमें अवतीर्ण हुए हैं। यह बात मुझे व्यास और नारदने बतलाई थी।[335]

कृष्णसे अनुमति लेनेके बाद जैसे ही प्राणोंका त्याग करनेके लिए भीष्मने योगप्रक्रिया द्वारा अपने प्राणोंको क्रमशः ऊपर चढ़ाना प्रारम्भ किया, वैसे-वैसे ही उन-उन अङ्गोंके बाण अपने आप निकलते चले गए और घाव भी भरने लगे। यह सब व्यास देख रहे थे और यह देखकर उन्हें तथा कृष्णको बहुत आश्चर्य हुआ।[336] दाहसंस्कारके बाद कौरव गंगातटपर पहुँचे, जिनके साथ व्यास भी थे।

जिस समय कौरवोंने भीष्मको जलाञ्जलि दी, उस समय जलके ऊपर गंगा जी ने प्रकट होकर अपने पुत्र भीष्मके लिए विलाप किया। व्यास और कृष्णने यह कहकर गंगाका शोक दूर किया कि आपके पुत्र भीष्मने वसुओंका स्वरूप प्राप्त किया है। अतः इनके लिए चिन्तारहित

---

334. न शोचितव्यं कौरव्य भवितव्यं हि तत् तथा। श्रुतं देवरहस्यं ते कृष्णद्वैपायनादपि (महाअनुशासन॰ 167.32)।
335. तथा मे नारदः प्राह व्यासश्च सुमहातपाः। नरनारायणावेतौ सम्भूतौ मनुजेष्विति (महाअनुशासन॰ 167.44)।
336. तद् दृष्ट्वा विस्मिताः सर्वे वासुदेवपुरोगमाः। सह तैर्मुनिभिः सर्वैस्तदा व्यासादिभिर्नृप (महाअनुशासन॰ 168.5)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हो जाओ।[337] भीष्म तो महातेजस्वी वसु थे, वसिष्ठके शापसे इन्हें मनुष्य योनिमें आना पड़ा और फिर ये अपनी इच्छासे ही शरीर त्यागकर स्वर्गलोकको गए हैं, अतः तुम्हें शोक नहीं करना चाहिए।[338] व्यास और कृष्णके द्वारा इस प्रकार समझाए जानेपर गंगा जी शोकका त्याग करके जलमें उतर गईं।[339]

[व्यास द्वारा युधिष्ठिरको समझाना]

धृतराष्ट्रके द्वारा भीष्मको जलाञ्जलि दिये जानेके बाद युधिष्ठिर उन्हें आगे करके जलसे बाहर निकलते हैं। इस समय युधिष्ठिर शोकसे सन्तप्त हो उठते हैं। इस अवसरपर धृतराष्ट्र और कृष्ण युधिष्ठिरको समझाते हैं। युधिष्ठिर शोकसे इतना अधिक ग्रस्त हो जाते हैं कि पुनः कृष्णसे तपोवनमें जानेकी अनुमति चाहने लगते हैं। व्यास जब देखते हैं कि युधिष्ठिरका शोक कम नहीं हो रहा है, तब सान्त्वना देते हुए व्यास युधिष्ठिरको समझाते हैं कि युधिष्ठिर! तुम्हारी बुद्धि अभी शुद्ध नहीं हुई। फिरसे तुम बच्चोंके समान अविवेकके कारण मोहमें पड़ गए हो।[340] हम तो किसी भी लायक नहीं रहे हैं। जो कुछ कहते हैं, समझाते हैं, वह सब प्रलाप सिद्ध हो रहा है। क्षत्रियोंका धर्म तो तुम जानते ही हो।[341]

---

337. वसूनेष गतो देवि पुत्रस्ते विज्वरा भव (महाअनुशासन॰ 168.35)।
338. वसुरेष महातेजाः शापदोषेण शोभने। मानुषत्वमनुप्राप्तो नैनं शोचितुमर्हसि (महाअनुशासन॰ 168.31)।
339. इत्युक्त्वा सा तु कृष्णेन व्यासेन तु सरिद्वरा। त्यक्त्वा शोकं महाराज स्वं वार्यवततार ह (महाअनुशासन॰ 168.36)।
340. अकृता ते मतिस्तात पुनर्बाल्येन मुह्यसे (महाआश्वमेधिक॰ 2.15)।
341. किमाकारा वयं तात प्रलपामो मुहुर्मुहुः। विदिताः क्षत्रधर्मास्ते (महाआश्वमेधिक॰ 2.16)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मोक्षधर्मोंको भी तुमने यथार्थरूपसे सुना है।[342] मैंने अनेक बार कामजनित सन्देहोंका निवारण किया है, परन्तु दुर्बुद्धि होनेके कारण तुम उसपर श्रद्धा नहीं करते। निश्चय ही तुम्हारी स्मरण शक्ति लुप्त हो गई है।[343]

आगे व्यास फिर कहने लगे – युधिष्ठिर! कोई भी मनुष्य स्वाधीन होकर अपने आप कोई काम नहीं करता है।[344] वह ईश्वरसे प्रेरित होकर भले बुरे काम करता है। यह जो युद्ध हुआ और युद्धमें जो भी विनाश हुआ, वह ईश्वरकी प्रेरणाके अनुसार हुआ। इसके लिए शोक करनेकी क्या आवश्यकता है।[345]

भगवान् व्यास कहते हैं कि यदि तुम अपने आपको ही इस युद्धरूपी पापकर्मका प्रधान हेतु मानते हो तो उसका भी उपाय बताता हूँ। युधिष्ठिर! जो लोग पाप करते हैं, वे तप, यज्ञ और दानके द्वारा ही सदा अपना उद्धार करते हैं।[346] देवता और असुर पुण्यके लिए यज्ञ करनेका ही प्रयत्न करते हैं। अतः यज्ञ परम आश्रय है।[347]

---

342. मोक्षधर्माश्च निखिला याथातथ्येन ते श्रुताः (महाआश्वमेधिक॰ 2.17)।
343. असकृच्चापि सन्देहाश्छिन्नास्ते कामजा मया। अश्रद्दधानो दुर्मेधा लुप्तस्मृतिरसि ध्रुवम् (महाआश्वमेधिक॰ 2.18)।
344. न हि कश्चित् स्वयं मर्त्यः स्ववशः कुरुते क्रियाम् (महाआश्वमेधिक॰ 3.1)।
345. ईश्वरेण च युक्तोऽयं साध्वसाधु च मानवः। करोति पुरुषः कर्म तत्र का परिदेवना (महाआश्वमेधिक॰ 3.2)।
346. तपोभिः क्रतुभिश्चैव दानेन च युधिष्ठिर। तरन्ति नित्यं पुरुषा ये स्म पापानि कुर्वते (महाआश्वमेधिक॰ 3.4)।
347. असुराश्च सुराश्चैव पुण्यहेतोर्मखक्रियाम्। प्रयतन्ते महात्मानस्तस्माद् यज्ञाः परायणम् (महाआश्वमेधिक॰ 3.6)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

यज्ञोंका महत्त्व समझाकर व्यास युधिष्ठिरको राजसूय, अश्वमेध, सर्वमेध तथा नरमेध यज्ञ करनेकी सलाह देते हैं। इस अवसरपर युधिष्ठिर स्पष्ट रूपसे यह कहते हैं कि मुझमें थोड़ा सा भी दान करनेकी शक्ति नहीं रह गई है. क्योंकि मेरे पास धन नहीं है।[348] ऐसी स्थिति देखकर व्यास युधिष्ठिरको एक उपाय बतलाते हुए कहते हैं कि यद्यति तुम्हारा खजाना इस समय खाली हो गया है, तथापि वह बहुत शीघ्र भर जायेगा। हिमालय पर्वतपर मरुत्तके यज्ञमें ब्राह्मणोंने जो धन छोड़ दिया था, वह वहीं पड़ा हुआ है। तुम उसे ले लाओ। वह तुम्हारे लिए पर्याप्त होगा।[349]

[उत्तराको व्यासके द्वारा पुत्रके तेजस्वी होनेका वरदान]

इस बीच कृष्णकी इच्छा द्वारका जानेकी हुई। युधिष्ठिरसे आज्ञा लेकर कृष्ण द्वारका चले गए, जहाँ उन्होंने अभिमन्युके लिए श्राद्ध किया। इधर अभिमन्युकी पत्नीने दुःखसे आतुर होकर बहुत दिन तक भोजन नहीं किया। गर्भस्थ बालक दिन-दिन क्षीण होने लगा। दिव्य दृष्टिसे यह सब कुछ देखकर भगवान् व्यासने कुन्ती एवं उत्तराको समझाया और बोले - उत्तरे! तुम शोकको त्याग दो। तुम्हारा पुत्र महातेजस्वी होगा।[350] श्रीकृष्णके प्रभावसे तथा मेरे आशीर्वादसे पाण्डवोंके

348. दानमल्पं न शक्नोमि दातुं वित्तं च नास्ति मे (महाआश्वमेधिक० 3.12)।
349. कोशश्चापि विशीर्णोऽयं परिपूर्णो भविष्यति। विद्यते द्रविणं पार्थ गिरौ हिमवति स्थितम्। उत्सृष्टं ब्राह्मणैर्यज्ञे मरुत्तस्य महात्मनः। तदानयस्व कौन्तेय पर्याप्तं तद् भविष्यति (महाआश्वमेधिक० 3.20-21)।
350. उत्तरां च महातेजाः शोकः संत्यज्यतामयम्। भविष्यति महातेजाः पुत्रस्तव यशस्विनि (महाआश्वमेधिक० 62.11)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

बाद वही सम्पूर्ण पृथिवीका पालन करेगा।[351] अर्जुनको भी व्यासने समझाया, जिससे उन्होंने शोकको त्यागकर सन्तोष धारण किया। अन्तमें व्यासने युधिष्ठिरको अश्वमेध यज्ञ करनेका आदेश दिया और स्वयं वहाँसे अदृश्य हो गए।[352] व्यासका वचन सुनकर युधिष्ठिरने धन लानेके लिए हिमालयकी यात्रा करनेका विचार किया।

[व्यासके द्वारा अश्वमेध यज्ञ करनेकी आज्ञा]

कृष्ण हस्तिनापुर पधारे और उनकी कृपासे उत्तराके गर्भमें स्थित मृत शिशुको जीवन-दान मिला। इसके पश्चात् युधिष्ठिर हिमालयसे व्यासके निर्देशानुसार धन ले आए। भगवान् व्यास भी हस्तिनापुर आ गए और उन्होंने युधिष्ठिरको अश्वमेध करनेकी आज्ञा दी।[353] और इस अवसरपर व्यासने युधिष्ठिरसे कहा - राजेन्द्र! अश्वमेध यज्ञ यजमानको पवित्र बनाने वाला है। उसका अनुष्ठान करके तुम पापसे मुक्त हो जाओगे।[354]

[व्यास द्वारा अश्वमेधसे सम्बन्धित आवश्यक निर्देश]

इसके पश्चात् व्यासने युधिष्ठिरको कहा - जब यज्ञका समय आयेगा, उस समय मैं, पैल और याज्ञवल्क्य - ये सब आकर तुम्हारे

351. प्रभावाद् वासुदेवस्य मम व्याहरणादपि। पाण्डवानामयं चान्ते पालयिष्यति मेदिनीम् (महाआश्वमेधिक॰ 62.12)।
352. ततः संचोदयामास व्यासो धर्मात्मजं नृपम्। अश्वमेधं प्रति तदा ततः सोऽन्तर्हितोऽभवत् (महाआश्वमेधिक॰ 62.20)।
353. अनुजानामि राजंस्त्वां क्रियतां यदनन्तरम्। यजस्व वाजिमेधेन विधिवत् दक्षिणावता (महाआश्वमेधिक॰ 71.15)।
354. अश्वमेधोहि राजेन्द्र पावनः सर्वपाप्मनाम्। तेनेष्ट्वा त्वं विपाप्मा वै भविता नात्र संशयः (महाआश्वमेधिक॰ 71.16)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

यज्ञका सारा विधि-विधान सम्पन्न करेंगे।[355] युधिष्ठिर! आगामी चैत्रकी पूर्णिमाको तुम्हें यज्ञकी दीक्षा दी जायेगी। तब तक तुम उसके लिए सामग्री संचित करो।[356] सूत और ब्राह्मण अश्वकी परीक्षा करें।[357] जो भी अश्व चुना जाए उसे शास्त्रीय विधिके अनुसार छोड़ो।[358] इस बीच तुम सोनेके स्फ्य तथा कूर्च बनवा लो तथा और भी जो सुवर्णमय सामान आवश्यक हों, उन्हें तैयार कराओ।[359]

इस समय युधिष्ठिरने व्याससे कहा - इस घोड़ेकी रक्षा कौन करेगा।[360] युधिष्ठिरके इस प्रश्नके उत्तरमें व्यासने अश्वकी रक्षा करनेके लिए अर्जुनको, भीम और नकुलको राज्यकी रक्षा करनेमें तथा सहदेवको कुटुम्बकी देखभाल करनेमें नियुक्त करनेके लिए युधिष्ठिरको आदेश दिया।[361] व्यासने जैसा कहा, उसी प्रकार युधिष्ठिरने उनकी आज्ञाका पालन किया।[362]

355. अहं पैलोऽथ कौन्तेय याज्ञवल्क्यस्तथैव च। विधानं यद् यथाकालं तत् कर्तारो न संशयः (महाआश्वमेधिक॰ 72.3)।
356. चेत्र्यां हि पौर्णमास्यां तु तव दीक्षा भविष्यति। सम्भाराः सम्भ्रियन्तां च यज्ञार्थं पुरुषर्षभ (महाआश्वमेधिक॰ 72.4)।
357. अश्वविद्याविदश्चैव सूता विप्राश्च तद्विदः। मेध्यमश्वं परीक्षन्तां तव यज्ञार्थसिद्धये (महाआश्वमेधिक॰ 72.5)।
358. तमुत्सृज यथाशास्त्रम् (महाआश्वमेधिक॰ 72.6)।
359. स्फ्यश्च कूर्चश्च सौवर्णो यच्चान्यदपि कौरव। तत्र योग्यं भवेत् किञ्चित् रौक्मं तत् क्रियतामिति (महाआश्वमेधिक॰ 72.10)।
360. कः पालयेदिति मुने तद् भवान् वक्तुमर्हति (महाआश्वमेधिक॰ 72.13)।
361. अभिमन्योः पिता वीरः स एतं पालयिष्यति (महाआश्वमेधिक॰ 72.14-20)।
362. महाआश्वमेधिक॰ (72.22-26)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

दीक्षाका समय आनेपर व्यास आदि ऋत्विजोंने युधिष्ठिरको अश्वमेधकी दीक्षा दी।[363] व्यास जी ने स्वयं उस चुने हुए अश्वको छोड़ा।[364]

[यज्ञ आरम्भ करनेके लिए व्यासका आदेश]

अश्वके साथ अर्जुनके लौटनेपर यज्ञ प्रारम्भ करनेके लिए व्यासने युधिष्ठिरको आदेश दिया - तुम आजसे यज्ञ प्रारम्भ करो। यज्ञका शुभ मुहूर्त्त उपस्थित है। याजकगण तुम्हें बुला रहे हैं।[365] सुवर्णकी अधिकता होनेसे तुम्हारा यह यज्ञ बहुसुवर्णक नामसे विख्यात होगा।[366] व्यासके ऐसा कहनेपर युधिष्ठिरने अश्वमेध यज्ञकीं सिद्धिके लिए उसी दिन दीक्षा ग्रहण की।[367]

[अश्वमेधके अन्तमें व्यासका युधिष्ठिरको आशीर्वाद]

यज्ञके विधिपूर्वक सम्पन्न होनेपर व्यासने शिष्योंके साथ अभ्युदयसूचक आशीर्वाद दिया।[368] ब्राह्मणोंको दक्षिणा देनेके पश्चात् युधिष्ठिरने व्यासको पृथिवीका दान दिया।[369] व्यासने युधिष्ठिरके द्वारा दी

---

363. दीक्षाकाले तु सम्प्राप्ते ततस्ते सुमहर्त्विजः। विधिवद् दीक्षायामासुरश्वमेधाय पार्थिवम् (महाआश्वमेधिक॰ 73.1)।
364. हयश्च हयमेधार्थं स्वयं स ब्रह्मवादिना। उत्सृष्टः शास्त्रविधिना व्यासेनामिततेजसा (महाआश्वमेधिक॰ 73.3)।
365. अद्यप्रभृति कौन्तेय यजस्व समयो हि ते। मुहूर्तो यज्ञियः प्राप्तश्चोदयन्तीह याजकाः (महाआश्वमेधिक॰ 88.12)।
366. बहुत्वात् काञ्चनाख्यस्य ख्यातो बहुसुवर्णकः (महाआश्वमेधिक॰ 88.13)।
367. दीक्षां विवेश धर्मात्मा वाजिमेधाप्तये ततः (महाआश्वमेधिक॰ 88.17)।
368. व्यासः सशिष्यो भगवान् वर्धयामास तं नृपम् (महाआश्वमेधिक॰ 89.7)।
369. व्यासाय तु वसुन्धराम् (महाआश्वमेधिक॰ 89.7)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हुई भूमि ग्रहण करके उस भूमिको युधिष्ठिरको ही सौंप दी और यह कहा कि तुम मुझे इसका मूल्य दे दो क्योंकि ब्राह्मण धनके इच्छुक होते हैं।[370] युधिष्ठिरने जो सुवर्ण भगवान् व्यासको दिया, वह भी उन्होंने ब्राह्मणोंको लौटा दिया।[371] ब्राह्मणोंके द्वारा जो भाग व्यासका था, उसे ब्राह्मणोंने व्यासको लौटाया। व्यासने वह सुवर्ण भी कुन्तीको दे दिया।[372] इस प्रकार व्यासके निर्देशनमें युधिष्ठिरका यह अश्वमेधयज्ञ साङ्गोपाङ्ग सम्पन्न हुआ।

[व्यासकी अनुमतिसे धृतराष्ट्रका वनगमन]

अश्वमेध यज्ञके उपरान्त युधिष्ठिरने सभीके साथ नगरमें प्रवेश किया और धृतराष्ट्र एवं गान्धारीकी सेवामें लग गए। इस अवसरपर महाभारतमें कहा गया है कि विदुर, संजय और युयुत्सु - ये तीनों भी सदा धृतराष्ट्रकी सेवामें रहते थे। द्रोणाचार्यके साले कृपाचार्य उन दिनों धृतराष्ट्रके पास ही रहते थे। ऋषि व्यास भी प्रतिदिन उनके पास आकर बैठते और उन्हें देवर्षि, पितर तथा राक्षसोंकी कथा सुनाया करते थे।[373] वृद्धावस्थाको देखते हुए धृतराष्ट्रने वनमें जानेकी अपनी इच्छा व्यक्त की। इसी समय भगवान् व्यास वहाँ आ पहुँचे और कहने लगे -

370. वसुधा भवतस्त्वेषा संन्यस्ता राजसत्तम। निष्क्रयो दीयतां मह्यं ब्राह्मणा हि धनार्थिनः (महाआश्वमेधिक० 89.9)।
371. प्रतिगृह्य तु तद् रत्नं कृष्णद्वैपायनो मुनिः। ऋत्विग्भ्यः प्रददौ (महाआश्वमेधिक० 89.21)।
372. स्वमंशं भगवान् व्यासः कुन्त्यै साक्षाद्धि मानतः (महाआश्वमेधिक० 89.28)।
373. व्यासश्च भगवान् नित्यमासाँचक्रे नृपेण ह। कथाः कुर्वन् पुराणर्षिदेवर्षि-पितृरक्षसाम् (महाआश्रमवासिक० 1.14)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

युधिष्ठिर! धृतराष्ट्र जैसा कह रहे हैं, उसे बिना विचारे पूरा करो।[374] एक तो बूढ़े हो गए हैं, दूसरे पुत्र नष्ट हो चुके हैं। मेरा ऐसा विश्वास है, अब धृतराष्ट्र इस कष्टको अधिक दिनों तक नहीं सह पायेंगे। तुम्हारी ओरसे इन्हें अनुमति मिलनी ही चाहिए, नहीं तो इनकी व्यर्थ मृत्यु होगी। ये राजर्षि हैं। समस्त राजिर्षियोंने जीवनके अन्तिम समयमें वनका ही आश्रय लिया है।[375] राजर्षियोंका यही परम धर्म है कि युद्धमें अथवा वनमें उनकी शास्त्रोक्त विधिपूर्वक मृत्यु हो।[376]

युधिष्ठिर! अपने पिताको वनमें जानेकी अनुमति दे दो, क्योंकि अब तुम्हारे ऊपर इनका अणुमात्र भी रोष नहीं है।[377] इस प्रकार व्यासने युधिष्ठिरको राजी कर लिया और "बहुत अच्छा" कहकर जब युधिष्ठिरने उनकी आज्ञा स्वीकार कर ली, तब वे वनमें तपस्या करनेके लिए चले गए।[378]

[धृतराष्ट्रके द्वारा व्यास आश्रममें पहुँचकर वनवासकी दीक्षा]

प्रजासे माफी माँगते हुए धृतराष्ट्रने वन जानेकी अनुमति लेनी चाही। प्रजाकी ओरसे साम्ब नामक ब्राह्मणकी अनुमति मिलनेपर धृतराष्ट्र वनगमनके लिए राजभवनसे निकले। अग्निहोत्रको आगे करके वे घरसे

---

374. तत् कुरुष्वाविचारयन् (महाआश्रमवासिक॰ 4.1)।
375. राजर्षीणां हि सर्वेषामन्ते वनमुपाश्रयः (महाआश्रमवासिक॰ 4.5)।
376. एष एव परो धर्मो राजर्षीणां युधिष्ठिर। समरे वा भवेन्मृत्युर्वने वा विधिपूर्वकम् (महाआश्रमवासिक॰ 4.12)।
377. अनुजानीहि पितरं समयोऽस्य तपोविधौ। न मन्युर्विद्यते चास्य सुसूक्ष्मोऽपि युधिष्ठिर (महाआश्रमवासिक॰ 4.17)।
378. एतावदुक्त्वा वचनमनुमान्य च पार्थिवम्। तथास्त्विति च तेनोक्तः कौन्तेयेन ययौ वनम् (महाआश्रमवासिक॰ 4.18)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

निकले। मार्गमें पहले गंगातटपर निवास किया, फिर वहाँसे कुरुक्षेत्र गए तथा शतयूप ऋषिके आश्रममें पहुँचे। तदनन्तर शतयूपको साथमें लेकर धृतराष्ट्र व्यासके आश्रमपर पहुँचे। वहाँ धृतराष्ट्रने अपने पिता व्यासका पूजन किया।[379] यहींपर धृतराष्ट्रने व्याससे वनवासकी दीक्षा प्राप्त की।[380]

[कुरुक्षेत्रमें धृतराष्ट्रके आश्रममें व्यासका पधारना]

धृतराष्ट्रको तप करते हुए कुछ दिन व्यतीत हो गए। इधर युधिष्ठिर आदि ने धृतराष्ट्रसे मिलनेका निश्चय किया और कुरुक्षेत्र स्थित धृतराष्ट्रके आश्रममें पहुँचे तथा धृतराष्ट्रके पास रहे। इस बीच शिष्योंके सहित व्यास भी आ गए और धृतराष्ट्रका कुशल-क्षेम पूछा और अपने आनेका प्रयोजन स्पष्ट करते हुए कहा - बेटा धृतराष्ट्र! मैं तुम्हारे संशयोंका निराकरण करनेके लिए ही यहाँ आया हूँ।[381] इस अवसरपर व्यासने कहा - जो चमत्कार किसी ऋषिने आज तक नहीं किया, वह भी मैं आज करके दिखलाऊँगा।[382] राजन्! तुम मुझसे कौन सी अभीष्ट वस्तु पाना चाहते हो ? किसको देखने, सुनने तथा स्पर्श करनेकी

379. तेनासौ सहितो राजा ययौ व्यासाश्रमं प्रति। तत्रैनं विधिवद् राजा प्रत्यगृह्णात् कुरूद्वहः (महाआश्रमवासिक॰ 21.11)।

380. स दीक्षां तत्र सम्प्राप्य राजा कौरवनन्दनः (महाआश्रमवासिक॰ 21.12)।

381. संशयच्छेदनार्थाय प्राप्तं मां विद्धि पुत्रक (महाआश्रमवासिक॰ 28.23)।

382. न कृतं यैः पुरा कैश्चित् कर्म लोके महर्षिभिः। आश्चर्यभूतं तपसः फलं तद् दर्शयामि वः (महाआश्रमवासिक॰ 28.24)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तुम्हारी इच्छा है ? मैं उसे पूर्ण करूँगा।[383] गान्धारीसे व्यासने कहा - आज रातमें तुम अपने पुत्रों, भाइयों और उनके मित्रोंको देखोगी।[384]

[व्यास द्वारा तपके दिव्य बलसे कौरव-पाण्डव सेना इत्यादि को दिखलाना]

इसके बाद व्यासने सभीको गंगातटपर चलनेका आदेश दिया। रात होनेपर व्यासने भागीरथीके पवित्र जलमें प्रवेश करके पाण्डव और कौरव पक्षके सभी लोगोंका आवाहन किया।[385] जैसे ही आवाहन किया, तत्क्षण कौरवों-पाण्डवोंकी सेनाओंका पहले जैसा ही भयङ्कर शब्द प्रकट होने लगा। सभी जलसे प्रकट होने लगे। जिस वीरका जैसा वेष, जैसी ध्वजा और जैसा वाहन था, वह उसीसे युक्त दिखाई देने लगा। अपने तपोबलसे व्यासने धृतराष्ट्रको दिव्य नेत्र प्रदान किए। गान्धारी भी दिव्य ज्ञानबलसे सम्पन्न हो गई। उन दोनोंने युद्धमें मारे गए अपने पुत्रों तथा अन्य सम्बन्धियोंको देखा। सभी एक दूसरेके साथ प्रेमपूर्वक मिले। वहाँ आई हुई स्त्रियोंने अपने पिताओं, भाइयों, पतियों तथा पुत्रोंको देखा तथा उनसे मिलकर प्रसन्न हुई। रातमें वीरोंने अपनी तरुणी स्त्रियोंके साथ विहार किया। परस्पर एक दूसरेके गले मिले और मिलकर जैसे आए थे, उसी प्रकार जानेको उद्यत हुए। तब व्यासने उन सब लोगोंका विसर्जन कर दिया। एक ही क्षणमें सबके देखते-देखते उन सभीने गंगाजीमें गोता

---

383. किमिच्छसि महीपाल मत्तः प्राप्तुमभीप्सितम्। द्रष्टुं स्प्रष्टुमथ श्रोतुं तत्कर्त्ताऽस्मि तवानघ (महाआश्रमवासिक० 28.25)।

384. भद्रे द्रक्ष्यसि गान्धारी पुत्रान् भ्रातॄन् सखींस्तथा। वधूश्च पतिभिः सार्द्धं निशि सुप्तोत्थिता इव (महाआश्रमवासिक० 31.1)।

385. ततो व्यासो महातेजाः पुण्यं भागीरथीजलम्। अवगाह्याजुहावाथ सर्वान् लोकान् महामुनिः (महाआश्रमवासिक० 32.4)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

लगाया और अदृश्य हो गए। रथों और ध्वजाओं सहित सभी अपने-अपने लोकोंमें चले गए।[386]

व्यासके कहनेसे स्त्रियोंने पतिलोकमें पतिसे मिलनेके लिए गंगा जी में गोता लगाया और जलमें समा गई। इस प्रकार सभी साध्वी स्त्रियाँ मनुष्य शरीरसे छुटकारा पाकर अपने-अपने पतिके साथ जा मिली।[387] इस प्रकार व्यासने अपने तपोबलसे जिसकी जो-जो कामना थी, वह सब पूरी कर दिखाई।[388]

[व्यासकी कृपासे जनमेजयको भी अपने पिताका दर्शन]

वैशम्पायन जब जनमेजयको यह प्रसंग सुना रहे थे, तब जनमेजयने कहा कि मुझे विश्वास नहीं होता है। क्या व्यास मेरे पिताके दर्शन करा सकते हैं। ऐसा सुननेके बाद व्यासने जनमेजयपर भी कृपा की और यज्ञमें ही उनके पिता परीक्षितको बुला लिया। जनमेजयने अपने पिता परीक्षितका दर्शन किया। पिता परीक्षितके साथ महात्मा शमीक और उनके पुत्र शृङ्गी ऋषि भी थे। इसके बाद जनमेजयने यज्ञके अवभृथस्थानके समय पहले अपने पिताको नहलाया और फिर स्वयं स्नान किया। इसके तुरन्त बाद परीक्षित वहीं अन्तर्धान हो गए।[389]

---

386. महाआश्रमवासिक० (32.4-16)।
387. विमुक्ता मानुषैर्देहैस्ततस्ता भर्तृभिः सह। समाजग्मुस्तदा साध्व्यः सर्वा एव विशाम्पते (महाआश्रमवासिक० 33.21)।
388. यस्य यस्य तु यः कामस्तस्मिन् काले बभूव ह। तं तं विसृष्टवान् व्यासो वरदो धर्मवत्सलः (महाआश्रमवासिक० 33.25)।
389. पितरं स्नापयामास स्वयं सस्नौ च पार्थिवः। परीक्षिदपि तत्रैव बभूव स तिरोहितः (महाआश्रमवासिक० 35.9)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

[व्यासका धृतराष्ट्रसे युधिष्ठिर आदिको विदा करनेके लिए कहना]

युधिष्ठिरको धृतराष्ट्रके आश्रममें आए हुए एक महीनेसे भी अधिक समय हो गया। व्यासने कृपा की और उन सबका शोक दूर किया। अब वे धृतराष्ट्रसे कहते हैं कि इन्हें विदा कर दो। ये जाएँ और अपने राज्यका काम सँभाले।[390] व्यासके ऐसा कहनेपर धृतराष्ट्रने उन्हें यह कहकर जानेकी अनुमति दी कि युधिष्ठिर! आजसे पितरोंके पिण्डका, सुयशका और इस कुलका भार तुम्हारे ही ऊपर है। आज या कल अवश्य चले जाना। विलम्ब न करना।[391]

[द्वारकासे लौटनेपर अर्जुनका व्यासके आश्रममें पहुँचना]

व्यासके आश्रममें अर्जुनने उस समय प्रवेश किया, जब बलरामके साथ कृष्ण देहत्याग कर चुके थे। ब्राह्मणोंके शापसे प्रभासक्षेत्रमें पाँच लाखकी संख्यामें भोज, वृष्णि तथा अन्धकवंशके वीरोंका विनाश हो चुका था। सबसे हृदयविदारक घटना पंजाबमें अहीरोंके द्वारा वृष्णिवंशकी हजारों स्त्रियोंका अपहरण था, जिसे सोचकर अर्जुन कुछ समझ नहीं पा रहे थे। अब अर्जुन अपने शरीरमें पहले जैसा बल भी महसूस नहीं कर रहे थे।[392]

390. विसर्जयैनं यात्वेष स्वराज्यमनुशासताम्। मासः समधिकस्तेषामतीतो वसतां वने (महाआश्रमवासिक॰ 36.11)।
391. त्वय्यद्य पिण्डः कीर्तिश्च कुलं चेदं प्रतिष्ठितम्। श्वो वाऽद्य वा महाबाहो गम्यतां पुत्र मा चिरम् (महाआश्रमवासिक॰ 36.21)।
392. महामौसल॰ (8.7-24)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इन्हीं सब घटनाओंका उल्लेख अर्जुनने व्यासके सामने किया। अन्तमें अर्जुनने कहा – वासुदेव वीर जनार्दनके बिना मैं जीवित नहीं रहना चाहता। महर्षे! आप कृपा करके यह उपदेश दें कि मेरा कल्याण कैसे होगा।[393]

अर्जुनके ऐसा कहनेपर पाँचों पाण्डवोंके कल्याणकी कामनासे व्यासने अर्जुनके प्रति इस प्रकारका उपदेश दिया – जिन यदुवंशियोंका विनाश हुआ, वे देवताओंके अंश थे। कृष्णके साथ ही वे यहाँ आए थे और कृष्णके साथ ही वे यहाँसे चले गए। यदि वे जीवित रहते तो धर्मकी मर्यादाके भङ्ग होनेका डर था, इसीलिए कृष्णने मरते हुए उन यादवोंकी उपेक्षा की।[394] ब्राह्मणोंके शापसे वृष्णि और अन्धकवंशके जो वीर नष्ट हुए हैं, तुम उनके लिए शोक मत करो। उन वीरोंकी भवितव्यता ही ऐसी थी। उनका प्रारब्ध ही वैसा बन गया था।[395] अष्टावक्र मुनिके रूपका उपहास करनेके कारण जो अप्सराएँ उनके शापसे मानवी स्त्रियोंके रूपमें उत्पन्न हुई, उन्हींका अहीरों द्वारा अपहरण हुआ। इस तरह उनके शापका उद्धार हुआ। अर्जुन! इस घटनाके घटित होनेपर तुम्हें शोक नहीं करना चाहिए।[396]

---

393. विना जनार्दनं वीरं नाहं जीवितुमुत्सहे। उपदेष्टुं मम श्रेयो भवानर्हति सत्तम (महामौसल॰ 8.23, 24)।
394. देवांशा देवदेवेन सम्मतास्ते गताः सह। धर्मव्यवस्थारक्षार्थं देवेन समुपेक्षिताः (महामौसल॰ 8.24)।
395. विनष्टाः कुरुशार्दूल न ताञ्शोचितुमर्हसि। भवितव्यं तथा तच्च दिष्टमेतन्महात्मनाम् (महामौसल॰ 8.26)।
396. स्त्रियश्च ताः पुरा शप्ताः प्रहासकुपितेन वै। अष्टावक्रेण मुनिना तदर्थं त्वद्बलक्षयः (महामौसल॰ 8.27)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अन्तमें व्यासने अर्जुनसे कहा – मैं समझता हूँ, अब तुम लोगोंने अपना कर्त्तव्य पूरा कर लिया है, तुम्हें सब प्रकारसे सफलता प्राप्त हो चुकी है। अब तुम्हारे परलोकगमनका समय उपस्थित हो रहा है। इसीमें तुम लोगोंका परम कल्याण मुझे जान पड़ता है।[397]

अर्जुनने व्यासके कथनका तात्पर्य समझ लिया और उनकी आज्ञा लेकर हस्तिनापुरको चले गए। हस्तिनापुरमें युधिष्ठिरने कृष्ण, बलरामादिके लिए जलाञ्जलि दी तथा विधिपूर्वक श्राद्ध किया। इस अवसरपर युधिष्ठिरने भगवान् व्यासके सहित नारद, मार्कण्डेय, भरद्वाज तथा याज्ञवल्क्यको सुस्वादु भोजन कराया।[398]

व्यासके साथ युधिष्ठिरका यह अन्तिम मिलन था। अथवा यह कहना अधिक उचित होगा, श्राद्धके अवसरपर भगवान् व्यासको बुलाकर भोजन करानेकी घटना, अन्तिम घटना थी। इसके पश्चात् तो युधिष्ठिरने अपने भाइयों एवं द्रौपदीके साथ स्वर्गारोहणकी तैयारी प्रारम्भ की। महाभारतमें भगवान् व्यासकी भूमिकाका दिग्दर्शन करानेके उद्देश्यसे लिखा गया यह लेख भी अब अपनी सम्पूर्णताको प्राप्त कर रहा है, क्योंकि महाभारतमें इसके बाद भगवान् वेदव्यासकी किसी भी प्रकारकी भूमिकाका कोई उल्लेख नहीं मिलता।

---

397. कृतकृत्यांश्च वो मन्ये संसिद्धान् कुरुपुङ्गव। गमनं प्राप्तकालं व इदं श्रेयस्करं विभो (महामौसल० 8.31)।

398. द्वैपायनं नारदं च मार्कण्डेयं तपोधनम्। भारद्वाजं याज्ञवल्क्यं हरिमुद्दिश्य यत्नवान्। अभोजयत् स्वादु भोज्यं कीर्तयित्वा च शार्ङ्गिणम् (महामहाप्रस्थानिक० 1.12)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

महाभारत : भगवान् व्यासकी अनुपम कृति

यद्यपि भगवान् वेदव्यासने विपुल वाङ्मयकी रचना की, जिसमें पुराण, श्रीमद्भागवत आदि ग्रन्थोंका समावेश है, तथापि उनके द्वारा रचित महाभारत अनेक अर्थोंमें विलक्षण है।

[घटित हुए कृत्योंके आधारपर व्यास द्वारा महाभारतकी रचना]

महाभारत नामक ग्रन्थकी रचना करनेके मूलमें एक विशेष कारण यह है कि जब युद्धमें पाण्डवोंकी जीत होती गई और दुर्योधन, कर्ण तथा शकुनि अपने दुराग्रहपूर्ण विचारोंपर अडिग रहे तब धृतराष्ट्रको चिन्ता हुई तो सञ्जयको बुलाते हैं और अपने हृदयके उद्‌गार प्रकट करते हैं। इस अवसरपर धृतराष्ट्र सञ्जयको बोलते हैं – सञ्जय! इस युद्धमें मेरी सम्मति बिल्कुल नहीं थी, हमारे कुलका नाश होनेसे मुझे तनिक भी प्रसन्नता नहीं हुई है।[1] मैंने अपने पुत्रों और पाण्डवोंमें कोई भेद नहीं माना, किन्तु क्या करूँ, क्रोधके वशीभूत होकर मेरे पुत्र मुझपर ही दोष मढ़ते थे तथा मेरी एक नहीं सुनते थे।[2] एक तो अन्धा हूँ फिर दीनताके कारण तथा पुत्रोंके प्रति आसक्तिके होनेसे वह सब अन्याय सहन करता आ रहा हूँ। मन्दबुद्धि दुर्योधन जब मोहवश दुखी होता था तब मैं भी उसके साथ दुखी हो जाता था।[3]

---

1. न विग्रहे मम मतिर्न च प्रीये कुलक्षये (महाआदि॰ 1.143)।
2. न मे विशेषः पुत्रेषु स्वेषु पाण्डुसुतेषु वा। वृद्धं मामभ्यसूयन्ति पुत्रा मन्युपरायणाः (महाआदि॰ 1.144)।
3. अहं त्वचक्षुः कार्पण्यात् पुत्रप्रीत्या सहामि तत्। मुह्यन्तं चानुमुह्यामि दुर्योधनमचेतनम् (महाआदि॰ 1.145)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

धृतराष्ट्रने उन सब घटनाओंका भी स्मरण किया, जिससे उन्हें लगने लगा था कि इस युद्धमें हमें जीतकी आशा नहीं रखनी चाहिए।[1] सञ्जयके सम्मुख उन्होंने इन घटनाओंका स्मरण किया – लक्ष्य वेधकर अर्जुनके द्वारा द्रौपदीको लाया जाना, कृष्णकी बहिन सुभद्राका हरण करके लाना, लाक्षाभवनसे पाँचों पाण्डवोंका बच निकलना, जरासन्धको उसीकी राजधानीमें पहुँचकर भीमसेनके द्वारा हाथोंसे चीर देना, धूर्त दुःशासनके द्वारा रजस्वला अवस्थामें एक वस्त्र पहिने हुए द्रौपदीको भरी सभामें घसीट लाना तथा वस्त्रोंका इतना ढेर लग जाना कि उसका पार नहीं पाना, अर्जुनके द्वारा किरातवेषधारी शिवसे पाशुपतास्त्रकी प्राप्ति तथा देवराज इन्द्रसे दिव्य अस्त्र-शस्त्रकी शिक्षा प्राप्त करना, विराटके यहाँ द्रौपदी सहित पाण्डवोंके गुप्त रूपमें रहनेको दुर्योधनके द्वारा पता न लगा पाना, कृष्णकी पाण्डवोंके प्रति हितबुद्धि होना, कौरवसभामें तथा युद्धभूमिमें अर्जुनके समक्ष कृष्णके द्वारा विश्वरूपका दिखाया जाना, भीष्मके द्वारा स्वयं पाण्डवोंको अपनी मृत्युके उपायका कथन, कर्णके द्वारा घटोत्कचपर अर्जुनको मारने वाली शक्तिका छोड़ना, अश्वत्थामाके द्वारा नारायणास्त्रके छोड़े जानेपर भी पाण्डवोंका नाश न होना, भीमसेनके द्वारा दुःशासनका रक्तपान करना, अर्जुनके द्वारा कर्णका वध, युधिष्ठिरके द्वारा शल्यका वध किया जाना, सहदेवके द्वारा शकुनिका वध किया जाना, भीमसेनके द्वारा दुर्योधनकी जांघपर गदा मारकर उसको मार डालना, अश्वत्थामाके द्वारा द्रौपदीके होनहार पुत्रोंको मार दिया जाना। इसी प्रकारकी और भी अनेक घटनाओंको धृतराष्ट्रने स्मरण किया और अपना यह मत प्रकट किया कि इस युद्धमें जीत पाना सरल नहीं होगा। अन्तमें धृतराष्ट्रने कहा – सञ्जय! इस भयंकर युद्धमें केवल 10 व्यक्ति

1. महाआदि० (1.150-216)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

बचे हैं, मेरे पक्षके तीन - कृपाचार्य, अश्वत्थामा और कृतवर्मा तथा पाण्डव पक्षके सात - श्रीकृष्ण, सात्यकि तथा पाँचों पाण्डव।[2] ऐसा कहकर धृतराष्ट्र विलाप करने लगे और अत्यन्त दुःखके कारण धृतराष्ट्र मूर्च्छित हो गए। इस अवसरपर सञ्जयने धृतराष्ट्रको भलीप्रकार समझा-बुझाकर उनके शोकको शान्त किया। सञ्जयने धृतराष्ट्रके शोकको दूर करनेके उद्देश्यसे कहा - जिनके दिव्य कर्म, पराक्रम, त्याग, माहात्म्य, आस्तिकता, सत्य, पवित्रता, दया और सरलता और सद्गुणोंका वर्णन बड़े-बड़े विद्वान् एवं श्रेष्ठतम कवि प्राचीन ग्रन्थोंमें तथा लोकमें भी करते रहते हैं, वे समस्त सम्पत्ति और सद्गुणोंसे सम्पन्न महापुरुष भी मृत्युको प्राप्त हो गए हैं।[3] आपके पुत्र दुर्योधन आदि तो दुरात्मा, क्रोधसे जले-भुने, लोभी एवं अत्यन्त दुराचारी थे। उनकी मृत्युपर आपको शोक नहीं करना चाहिए।[4] जिनकी बुद्धि शास्त्रके अनुसार सोचती है, वे कभी भी शोक-मोहसे मोहित नहीं होते।[5]

आपने पाण्डवोंके साथ निदर्यताका तथा अपने पुत्रोंके प्रति पक्षपातका जो व्यवहार किया है, उसे आप जानते ही हैं इसलिए आपके पुत्रोंका जो हाल हुआ है, उससे आपको अत्यन्त व्याकुल नहीं होना

---

2. कष्टं युद्धे दश शेषाः श्रुता मे त्रयोऽस्माकं पाण्डवानां च सप्त (महाआदि॰ 1.217)।
3. येषां दिव्यानि कर्माणि विक्रमस्त्याग एव च। माहात्म्यमपि चास्तिक्यं सत्यं शौचं दयार्जवम्।। विद्वद्भिः कथ्यते लोके पुराणे कविसत्तमैः। सर्वर्द्धिगुणसम्पन्नास्ते चापि निधनं गताः (महाआदि॰ 1.241-242)।
4. तव पुत्रा दुरात्मानः प्रतप्ताश्चैव मन्युना। लुब्धा दुर्वृत्तभूयिष्ठा न ताञ्छोचितुमर्हसि (महाआदि॰ 1.243)।
5. येषां शास्त्रानुगा बुद्धिर्न ते मुह्यन्ति भारत (महाआदि॰ 1.244)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चाहिए।[6] अपने कर्मोंका फल अवश्य ही भोगना पड़ता है, इसे कोई नहीं टाल सकता।[7] ऐसा समझकर आपको अपने विवेकका परित्याग नहीं करना चाहिए।[8]

धृतराष्ट्रने सञ्जयके सम्मुख क्रमशः जिन घटनाओंका उल्लेख किया उन्हींको व्यासने क्रमबद्ध रीतिसे निरूपण किया जो महाभारत कहलाया। महाभारतकी रचना करनेके मूलमें यही विशेष कारण था। इसी बातको सौति (उग्रश्रवा) ने स्पष्ट रूपसे कहा कि इतिहासके आधारपर कृष्णद्वैपायनने परम पुण्यमयी उपनिषद् रूप महाभारतका निरूपण किया[9]।

[महाभारतके अनेक संस्करण, तदनुसार उसके अनेक नाम]

पुराणोंमें तथा स्वयं महाभारतमें भारत, महाभारत, शतसाहस्री संहिता आदि नामोंका उल्लेख मिलता है। महाभारतके अनुसार नैमिषारण्यमें ऋषियोंके कहनेपर जब लोमहर्षणके पुत्र सौति (उग्रश्रवा) महाभारतकी कथा सुनानेका उपक्रम करने लगे, उस अवसरपर उन्होंने दो बातें कहीं –

1. भगवान् व्यासने महाभारतकी रचनाके पूर्व ही ध्यानयोगमें स्थित होकर धर्मपूर्वक महाभारत इतिहासके स्वरूपका विचार करके ज्ञानदृष्टि

---

6. निग्रहानुग्रहौ चापि विदितौ ते नराधिप। नात्यन्तमेवानुवृत्तिः कार्या ते पुत्ररक्षणे (महाआदि॰ 1.245)।
7. विधातृविहितं मार्गं न कश्चिदतिवर्तते (महाआदि॰ 1.247)।
8. न संज्ञां हातुमर्हसि (महाआदि॰ 1.251)।
9. अत्रोपनिषदं पुण्यां कृष्णद्वैपायनोऽब्रवीत् (महाआदि॰ 1.253)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

द्वारा आदिसे अन्त तक सब कुछ प्रत्यक्षकी भाँति देख लिया।[10] इसका तात्पर्य यह है कि व्यासने रचनाके पूर्व इतिहास रूपी महाभारतको लिखनेके लिए उसकी रूपरेखा अपने मनमें बना ली।

2. माता सत्यवती तथा गंगापुत्र भीष्मकी आज्ञासे अम्बिका-अम्बालिका आदिसे धृतराष्ट्र, पाण्डु और विदुरको उत्पन्न करके व्यास अपने आश्रम चले गए और जब वे तीनों परम गतिको प्राप्त हो गए, तब मनुष्य लोकमें उन्होंने महाभारतका प्रवचन किया।[11]

उग्रश्रवाके अनुसार पुण्यकर्मा मानवोंके उपाख्यानों सहित एक लाख श्लोकोंमें निबद्ध यह ग्रन्थ आद्यभारत (महाभारत) कहलाया।[12] इसके अनन्तर व्यासने उपाख्यानोंको छोड़कर 24 हजार श्लोकोंमें भारतसंहिता बनाई। इसीको 'भारत' भी कहते हैं। इसके पश्चात् महर्षिने 150 श्लोकोंमें वृत्तान्तोंकी एक अनुक्रमणिकाका अध्याय बनाया जो पर्व सहित है।[13]

10. भारतस्येतिहासस्य धर्मेणान्वीक्ष्य तां गतिम्। प्रविश्य योगं ज्ञानेन सोऽपश्यत् सर्वमन्ततः (महाआदि० 1.28)।
11. तेषु जातेषु वृद्धेषु गतेषु परमां गतिम्। अब्रवीद् भारतं लोके मानुषेऽस्मिन् महानृषिः (महाआदि० 1.96-96½)।
12. इदं शतसहस्रं तु लोकानां पुण्यकर्मणाम्। उपाख्यानैः सह ज्ञेयमाद्यं भारतमुत्तमम् (महाआदि० 1.101)।
13. चतुर्विंशतिसाहस्रीं चक्रे भारतसंहिता। उपाख्यानैर्विना तावद् भारतं प्रोच्यते बुधैः। ततोऽप्यर्द्धशतं भूयः संक्षेपं कृतवानृषिः। अनुक्रमणिकाध्यायं वृत्तान्तं सर्वपर्वणाम् (महाआदि० 1.102-103)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उग्रश्रवाके माध्यमसे हमें यह भी जानकारी प्राप्त होती है कि भगवान् व्यासने साठ लाख श्लोकोंकी एक दूसरी संहिता बनाई।[14]

इस संहिताके तीस लाख श्लोक देवलोकमें समादृत हुए, पितृलोकमें पन्द्रह लाख तथा गन्धर्वलोकमें चौदह लाख श्लोक प्रतिष्ठित हुए। मनुष्यलोकमें एक लाख श्लोकोंका महाभारत प्रतिष्ठित है।[15] जनमेजयके प्रश्न करनेपर व्यासने वैशम्पायनको महाभारतकी कथा कहनेके लिए आदेश दिया।

इस अवसरपर वैशम्पायनने स्वयं अपने मुखसे कहा कि व्यासने पुण्यात्मा पाण्डवोंकी कथा एक लाख श्लोकोंमें कही है।[16] तात्पर्य यह है कि एक लाख श्लोकमें निबद्ध उपाख्यानोंके सहित जिस ग्रन्थमें पाण्डवों और कौरवोंके बीच हुए युद्धका वृत्तान्त भगवान् व्यासने वर्णित किया, वही आज हमारे सम्मुख महाभारतके रूपमें विद्यमान है। 24 हजार श्लोकोंमें निबद्ध, उपाख्यानोंसे रहित जिस संस्करणको महाभारतमें 'भारत' की संज्ञा दी गई, उसकी सत्ताके प्रमाण अन्य प्राचीन ग्रन्थोंमें भी प्राप्त होते हैं। आश्वलायनश्रौतसूत्रमें भारत तथा महाभारत ये दोनों शब्द

---

14. षष्टिं शतसहस्राणि चकारान्यां स संहिताम् (महाआदि॰ 1.105, महास्वर्गारोहण 5.54)।
15. त्रिंशच्छतसहस्रं च देवलोके प्रतिष्ठितम्। पित्र्ये पञ्चदश प्रोक्तं गन्धर्वेषु चतुर्दश। एकं शतसहस्रं तु मानुषेषु प्रतिष्ठितम् (महाआदि॰ 1.107, महास्वर्गारोहण 5. 55)।
16. इदं शतसहस्रं हि श्लोकानां पुण्यकर्मणाम्। सत्यवत्यात्मजेनेह व्याख्या-तममितौजसा (महाआदि॰ 62.14)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

एक साथ आए हैं।[17] इसीप्रकार पाणिनिकी अष्टाध्यायीसे भी भारत नामक संस्करणके संकेत प्राप्त होते हैं।[18]

गरुड़पुराणमें महाभारत युद्धका संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत किया गया है, वहाँ भी 'भारत' शब्दका ही प्रयोग किया गया।[19]

[महाभारत एक इतिहास]

आदिपर्वमें इस ग्रन्थको इतिहासकी संज्ञा देते हुए कहा गया है कि जैसे दहीमें नवनीत, मनुष्योंमें ब्राह्मण, वेदोंमें उपनिषद्, औषधियोंमें अमृत, सरोवरोंमें समुद्र तथा चौपायोंमें गाय सबसे श्रेष्ठ है, उसी प्रकार उन्हींके समान इतिहासोंमें यह महाभारत संज्ञक इतिहास है।[20] महाभारतमें स्वयं उग्रश्रवाने इसे इतिहासकी संज्ञा दी और कहा कि जनमेजयके सर्पयज्ञमें वैशम्पायनने जिसका वर्णन किया, उसी उत्तम इतिहासको मैं आपको सुनाने जा रहा हूँ।[21] जैसे जानने योग्य पदार्थोंमें आत्मा, प्रिय

---

17. सुमन्तुजैमिनिवैशम्पायनपैलसूत्रभाष्यभारतमहाभारतधर्माचार्याः (आश्वगृसू॰ 3.3.5, देखिए - स्मृतिचन्द्रिका भाग 1, आह्निककाण्डः पृष्ठसं॰ 519, चतुर्वर्गचिन्ता-मणिः भाग 3 खण्ड 2, पृष्ठसं॰ 934)।
18. व्रीह्यपराह्णगृष्टीष्वासजाबालभारभारतहैलिहिलरौरवप्रवृद्धेषु (पासू॰ 6.2.38)।
19. भारतं सम्प्रवक्ष्यामि भारावतरणं भुवः। चक्रे कृष्णो युध्यमानः पाण्डवादिनिमित्ततः (गरुडपु॰ 1.145.1)। अग्निपुराणमें भी इसी प्रकारका संक्षिप्त विवरण प्राप्त होता है तथा वहाँपर भी 'भारत' शब्दका ही प्रयोग किया गया (अग्निपु॰ 13वाँ अध्याय)।
20. नवनीतं यथा दध्नो द्विपदां ब्राह्मणो यथा। ह्रदानामुदधिः श्रेष्ठो गौर्वरिष्ठा चतुष्पदाम्।। यथैतानीतिहासानां तथा भारतमुच्यते (महाआदि॰ 1.264-265)।
21. यत्तु शौनक सत्रे ते भारताख्यानमुत्तमम्। जनमेजयस्य तत् सत्रे व्यासशिष्येण धीमता (महाआदि॰ 2.33)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पदार्थोंमें अपना जीवन सर्वश्रेष्ठ है, वैसे ही सम्पूर्ण शास्त्रोंमें परमात्माकी प्राप्ति रूप प्रयोजनको पूर्ण करने वाला यह इतिहास श्रेष्ठ है।[22] महाभारतके अन्तमें सौतिने इसे पुण्यमय इतिहास ही बताया, जो सत्यवादी मुनि व्यास द्वारा विरचित है।[23]

महाभारतके स्वरूपके विषयमें पर्याप्त जानकारी हमें पुराणोंमें प्राप्त होती है। कुछ पुराणोंमें महाभारतको आख्यान तथा भारत कहा गया।[24] देवीभागवतमें इसीको इतिहास कहा गया है।[25]

श्रद्धाके साथ विद्वानोंने महाभारतको शतसाहस्री संहिता नाम दिया।[26] पुराणोंमें कहीं-कहीं महाभारतको 'संहिता' नामसे व्यवहृत किया गया है।[27]

22. आत्मेन वेदितव्येषु प्रियेष्विव हि जीवितम्। इतिहासः प्रधानार्थः श्रेष्ठः सर्वागमेष्वयम् (महाआदि॰ 2.36)।
23. पुण्योऽयमितिहासाख्यः पवित्रं चेदमुत्तमम्। कृष्णेन मुनिना विप्र निर्मितं सत्यवादिना (महास्वर्गारोहण॰ 5.36)। इतिहासमिमं पुण्यं महार्थं वेदसम्मितम् (महास्वर्गारोहण॰ 5.57)।
24. भारताख्यानमखिलं चक्रे तदुपबृंहितम् (मत्स्यपु॰ 53.69)। भारतव्यपदेशेन ह्याम्नायार्थश्च दर्शितः (श्रीमद्भागवत 1.4.29)।
25. सपादलक्षं च तथा भारतं मुनिना कृतम्। इतिहास इति प्रोक्तं पञ्चमं वेदसम्मतम् (देवीभागवत 1.2.26)।
26. श्रीरामशंकर भट्टाचार्यने इस पक्षमें अपनी सहमति व्यक्त की है। उनका कहना है कि अनेक पृथक् विषयोंका संहनन (सज्जीकरण) इस ग्रन्थमें किया गया है, अतः संहिता पद सार्थक है (इतिहास-पुराणका अनुशीलन, पृष्ठसं॰ 20)।
27. भविष्यपु॰ (6.3.8)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इतिहास तथा पुराणोंकी अपनी महत्ता है। इसीलिए कहा गया है कि इतिहास तथा पुराणोंकी सहायतासे ही वेदोंके अर्थका विस्तार एवं समर्थन करना चाहिए।[28] बिना इतिहास एवं पुराणको जाने वेदोंके अर्थकी जानकारी ठीक ढंगसे नहीं हो सकती। इसीलिए कहा गया है कि जिन्हें इतिहास एवं पुराणका ज्ञान नहीं है, उससे वेद भी डरते रहते हैं कि कहीं यह मुझपर प्रहार न कर दे।[29]

[वेद एवं पुराणोंके बाद व्यास द्वारा महाभारतका प्रणयन]

परम्परासे विद्वानोंकी यही मान्यता है कि पुराणोंकी रचना करनेके उपरान्त व्यासने महाभारतकी रचना की। मत्स्यपुराणके अनुसार 18 पुराणोंकी रचनाके बाद व्यासने महाभारतकी रचना की।[30] किन्तु इतना तो निश्चित है कि व्यासने सर्वप्रथम वेदका विस्तार किया उसीके बाद महाभारतका प्रणयन किया। स्वयं महाभारतमें उग्रश्रवाने यह बात स्पष्ट की कि व्यासने तपस्या एवं ब्रह्मचर्यकी शक्तिसे सनातन वेदका विस्तार करके लोकपावन इतिहास रूपी महाभारतका निर्माण किया।[31] अध्ययनके प्रकारका उल्लेख करते हुए उग्रश्रवाने तो यहाँ तक इस विषयका स्पष्टीकरण किया कि कोई-कोई विद्वान् इस ग्रन्थका प्रारम्भ ''नारायणं नमस्कृत्य'' से मानते हैं, कोई-कोई विद्वान् आस्तीकपर्वसे इस ग्रन्थका

---

28. इतिहासपुराणाभ्यां वेदं समुपबृंहयेत् (महाआदि॰ 1.267)।
29. बिभेत्यल्पश्रुताद् वेदो मामयं प्रहरिष्यति (महाआदि॰ 1.267½)।
30. अष्टादशपुराणानि कृत्वा सत्यवतीसुतः। भारताख्यानमखिलं चक्रे तदुपबृंहितम्। लक्षेणैकेन यत् प्रोक्तं वेदार्थपरिबृंहितम् (मत्स्यपु॰ 53.69)।
31. तपसा ब्रह्मचर्येण व्यस्य वेदं सनातनम्। इतिहासमिमं चक्रे पुण्यं सत्यवतीसुतः (महाआदि॰ 1.54)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्रारम्भ मानते हैं तथा किन्हीं विद्वानोंके मतमें इसका सम्यक् अध्ययन उपरिचर वसुकी कथासे किया जाता है।[32]

[महाभारतकी अध्ययनपरम्परा]

कौन महाभारत लिखेगा, इस कार्यकी सिद्धिके लिए ब्रह्माने उपाय बताया और भगवान् गणेशके द्वारा महाभारत लिखित रूपमें आ गया लेकिन भविष्यमें इस ग्रन्थकी सत्ता बनी रहनी चाहिए, इसके लिए भी व्यासको उद्योग करना पड़ा। उन्होंने स्वनिर्मित ग्रन्थके अध्यापनका क्रम प्रारम्भ किया। व्यासने सर्वप्रथम अपने पुत्र शुकदेवको महाभारतका अध्ययन कराया।[33] तदनन्तर उन्होंने दूसरे-दूसरे सुयोग्य शिष्योंको इसका उपदेश किया।[34] देवर्षि नारदने देवताओंको और असित-देवलने पितरोंको महाभारतका श्रवण कराया।[35] शुकदेवजीने गन्धर्व, यक्ष तथा राक्षसोंको महाभारतकी कथा सुनाई।[36] मनुष्यलोकमें वैशम्पायनने इसका प्रवचन जनमेजयके सर्पयज्ञके समय किया।[37] वस्तुतः व्यासके आदेशसे वैशम्पायनने कौरव-पाण्डवोंमें जिस प्रकार फूट पड़ी और उनका सर्वनाश

---

32. मन्वादि भारतं केचिदास्तीकादि तथा परे। तथोपरिचराद्यन्ये विप्राः सम्यगधीयते (महाआदि॰ 1.52)।
33. इदं द्वैपायनः पूर्वं पुत्रमध्यापयच्छुकम् (महाआदि॰ 1.104)।
34. ततोऽन्येभ्योऽनुरूपेभ्यः शिष्येभ्यः प्रददौ विभुः (महाआदि॰ 1.105)।
35. नारदोऽश्रावयद् देवानसितो देवलः पितॄन् (महाआदि॰ 1.107, महास्वर्गारोहण 5.56)।
36. गन्धर्वयक्षरक्षांसि श्रावयामास वै शुकः (महाआदि॰ 1.108)। रक्षोयक्षाञ्शुकः (महास्वर्गारोहण 5.56)।
37. अस्मिंस्तु मानुषे लोके वैशम्पायन उक्तवान् (महाआदि॰ 1.108)। मर्त्यान् वैशम्पायन एव तु (महास्वर्गारोहण 5.56)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हुआ, वह सब पुरातन इतिहास जनमेजयको सुनाया।[38] जिस समय परीक्षितके पुत्र जनमेजयके सर्पयज्ञमें व्यासकी आज्ञासे वैशम्पायन महाभारतकी कथा सुना रहे थे, वहीं उग्रश्रवा भी उसे सुन रहे थे।[39] इसके पश्चात् उग्रश्रवा तीर्थों एवं धामोंकी यात्रा करते हुए समन्तपञ्चक पहुँचे और फिर नैमिषारण्य पहुँचे। नैमिषारण्यमें ही ऋषियोंके द्वारा निवेदन करनेपर उग्रश्रवाने श्रीहरिको नमस्कार करके महर्षि व्यासदेवके मतका वर्णन किया।[40]

इस अवसरपर उग्रश्रवाका यह वक्तव्य ध्यान देने योग्य है कि पृथिवीपर अनेकों कवियोंने इस इतिहासका वर्णन किया है और इस समय भी बहुतसे कवि इसका वर्णन कर रहे हैं तथा भविष्यमें आगे भी इसका वर्णन करते रहेंगे।[41]

[महाभारतमें विषय निरूपण]

इतिहासके निरूपणके साथ-साथ व्यासने अपने इस महाकाव्यमें सम्पूर्ण वेदोंका गुप्ततम रहस्य प्रकट किया है। अन्य सभी शास्त्रोंका सार संकलित करके उसे स्थापित किया है। वेदोंके साथ-साथ उसके अङ्ग

38. गुरोर्वचनमाज्ञाय स तु विप्रर्षभस्तदा। आचचक्षे ततः सर्वमितिहासं पुरातनम्।। राज्ञे तस्मै सदस्येभ्यः पार्थिवेभ्यश्च सर्वशः। भेदं सर्वविनाशं च कुरुपाण्डवयोस्तदा (महाआदि॰ 60.23-24)।
39. कथिताश्चापि विधिवद् या वैशम्पायनेन वै। श्रुत्वाहं ता विचित्रार्था महाभारतसंश्रिताः (महाआदि॰ 1.11)।
40. नमस्कृत्य हृषीकेशं चराचरगुरुं हरिम्। महर्षेः पूजितस्येह सर्वलोकैर्महात्मनः। प्रवक्ष्यामि मतं पुण्यं व्यासस्याद्भुतकर्मणः (महाआदि॰ 1.24-25)।
41. आचख्युः कवयः केचित् सम्प्रत्याचक्षते परे। आख्यास्यन्ति तथैवान्ये इतिहासमिमं भुवि (महाआदि॰ 1.26)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तथा उपनिषदोंका भी विस्तारसे निरूपण किया।[42] इतिहास-पुराणका मन्थन करके उसका प्रशस्त रूप प्रकट किया।[43] बुढ़ापा, मृत्यु, भय, रोग और पदार्थोंके सत्यत्व तथा मिथ्यात्वका निश्चय किया। अधिकारी भेदसे भिन्न-भिन्न प्रकारके धर्मों और आश्रमोंका लक्षण बताया।[44] ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र-इन चारों वर्णोंके कर्त्तव्योंका विधान, पुराणोंका सम्पूर्ण मूलतत्त्व भी प्रकट किया। तपस्या और ब्रह्मचर्यके स्वरूप, अनुष्ठान एवं उसके फलोंका विवरण प्रस्तुत किया। पृथिवी, चन्द्रमा, सूर्य, ग्रह, नक्षत्र, सत्ययुग, त्रेता, द्वापर और कलियुग - इन सबका परिमाण और प्रमाण स्पष्ट किया। ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और इनके आध्यात्मिक अभिप्रायको बताया गया तथा अध्यात्मशास्त्रका इस ग्रन्थमें विस्तारसे वर्णन किया।[45] न्याय, शिक्षा, चिकित्सा, दान तथा पाशुपतका भी इसमें विशद रूपसे निरूपण किया है। साथ ही यह भी बतलाया कि देवता, मनुष्य आदि भिन्न-भिन्न योनियोंमें जन्मका कारण क्या है।[46] लोकको पवित्र करने वाले तीर्थों, देशों, नदियों, पर्वतों, वनों और

42. ब्रह्मन् वेदरहस्यं च यच्चान्यत् स्थापितं मया। साङ्गोपनिषदां चैव वेदानां विस्तरक्रिया (महाआदि॰ 1.62)।
43. इतिहासपुराणानामुन्मेषं निर्मितं च यत् (महाआदि॰ 1.63)।
44. जरामृत्युभयव्याधिभावाभावविनिश्चयः। विविधस्य च धर्मस्य ह्याश्रमाणां च लक्षणम् (महाआदि॰ 1.64)।
45. चातुर्वर्ण्यविधानं च पुराणानां च कृत्स्नशः। तपसो ब्रह्मचर्यस्य पृथिव्याश्चन्द्रसूर्ययोः।। ग्रहनक्षत्रताराणां प्रमाणं च युगैः सह। ऋचो यजूँषि सामानि वेदाध्यात्मं तथैव च (महाआदि॰ 1.65-66)।
46. न्यायशिक्षाचिकित्सा च दानं पाशुपतं तथा। हेतुनैव समं जन्म दिव्यमानुषसंज्ञितम् (महाआदि॰ 1.67)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

समुद्रका इसमें वर्णन किया।[47] दिव्य नगर एवं दुर्गोंके निर्माणका कौशल तथा युद्धकी निपुणताका वर्णन किया। भिन्न-भिन्न भाषाओं और जातियोंकी जो विशेषताएँ हैं, उनका वर्ण किया तथा लोकव्यवहारकी सिद्धिके लिए जो कुछ आवश्यक है एवं और भी जितने लोकोपयोगी पदार्थ हो सकते हैं, उन सबका इस ग्रन्थमें प्रतिपादन किया।[48]

उग्रश्रवाने आदिपर्वमें अन्य विषयोंको स्पष्ट करते हुए कहा कि इस ग्रन्थरत्नमें शुभकर्म करने वाले देवताओंका, देवर्षियोंका, ब्रह्मर्षियोंका, यक्षोंका एवं नागोंका वर्णन किया गया है।[49] मुख्य प्रतिपाद्य विषयके रूपमें सनातन परब्रह्मस्वरूप वासुदेव श्रीकृष्णका वर्णन इस ग्रन्थमें किया गया है।[50] इसके अतिरिक्त जीवात्माका स्वरूप, सत्त्व-रज-तमके कार्यरूप पञ्चमहाभूत तथा अव्यक्त प्रकृतिके मूल कारण परब्रह्म परमात्माका निरूपण इस महाभारतमें किया गया है।[51] आदिपर्वमें कहा गया कि भगवान् व्यासने इस ग्रन्थमें कुरुवंशके विस्तारका, गान्धारीकी धर्मशीलताका, विदुरकी उत्तम प्रज्ञाका, कुन्तीदेवीके धैर्यका, श्रीकृष्णके

47. तीर्थानां चैव पुण्यानां देशानां चैव कीर्तनम्। नदीनां पर्वतानां च वनानां सागरस्य च (महाआदि॰ 1.68)।
48. पुराणां चैव दिव्यानां कल्पानां युद्धकौशलम्। वाक्यजातिविशेषाश्च लोकयात्राक्रमश्च यः।। यच्चापि सर्वगं वस्तु तच्चैव प्रतिपादितम् (महाआदि॰ 1. 69-70)।
49. देवा देवर्षयो ह्यत्र तथा ब्रह्मर्षयोऽमलाः। कीर्त्यन्ते शुभकर्माणस्तथा यक्षा महोरगाः (आदिपर्व॰ 1.255)।
50. भगवान् वासुदेवश्च कीर्त्यतेऽत्र सनातनः (महाआदि॰ 1.256)।
51. अध्यात्मं श्रूयते यच्च पञ्चभूतगुणात्मकम्। अव्यक्तादि परं यच्च स एव परिगीयते (महाआदि॰ 1.259)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

माहात्म्यका, पाण्डवोंकी सत्यपरायणताका तथा दुर्योधनके दुर्व्यवहारोंका भलीभाँति वर्णन किया।[52]

[महाभारतके लेखनमें गणेशका अमूल्य योगदान]

इन सब विषयोंका वर्णन करनेके लिए पृथिवीपर ऐसा कोई उन्हें नहीं मिला जो इसे लिख सके।[53] कौन इस काव्यको लिख सकेगा, ऐसी चिन्ता जब व्यासने भगवान् ब्रह्माके सम्मुख व्यक्त की, तभी ब्रह्माने व्यासको गणेश जी का स्मरण करनेके लिए कहा, जो उनके काव्यको लिखनेमें समर्थ हैं।[54]

स्मरण करते ही गणेश जी आए और उनसे कहा कि आप मेरे द्वारा निर्मित इस महाभारत ग्रन्थके लेखक बन जाइए, मैं बोलकर लिखाता जाऊँगा। मैंने मन ही मन इसकी रचना कर ली है।[55] भगवान् वेदव्यास द्वारा महाभारतके लेखक बननेके इस प्रस्तावको सुनकर गणेशने एक शर्त रक्खी कि यदि लिखते समय क्षणभरके लिए भी मेरी लेखनी न रुके तो मैं इस ग्रन्थका लेखक बन सकता हूँ।[56] व्यासने भी कहा कि

---

52. विस्तरं कुरुवंशस्य गान्धार्या धर्मशीलताम्। क्षत्तुः प्रज्ञां धृतिं कुन्त्याः सम्यग् द्वैपायनोऽब्रवीत्।। वासुदेवस्य माहात्म्यं पाण्डवानां च सत्यताम्। दुर्वृत्तं धार्तराष्ट्राणामुक्तवान् भगवानृषिः (महाआदि॰ 1.99-100)।
53. परं न लेखकः कश्चिदेतस्य भुवि विद्यते (महाआदि॰ 1.70)।
54. काव्यस्य लेखनार्थाय गणेशः स्मर्यतां मुने (महाआदि॰ 1.74)।
55. लेखको भारतस्यास्य भव त्वं गणनायक। मयैव प्रोच्यमानस्य मनसा कल्पितस्य च (महाआदि॰ 1.77)।
56. श्रुत्वैतत् प्राह विघ्नेशो यदि मे लेखनी क्षणम्। लिखतो नावतिष्ठेत तदा स्यां लेखको ह्यहम् (महाआदि॰ 1.78)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

किसी भी प्रसंगमें बिना समझे एक भी अक्षर न लिखियेगा। गणेशने ॐ कहकर स्वीकार किया और लेखक बनना स्वीकार किया।"[57]

ये दोनों – भगवान् वेदव्यास एवं श्रीगणेश अपने-अपने वचनोंमें बँध गए और इस तरह महाभारत ग्रन्थरूपमें लोगोंके सम्मुख आया। यहाँ यह कहना उचित होगा कि इस वचनबद्धताके बीच व्यास बीच-बीचमें ऐसे श्लोक बोलते जाते थे, जिनका अर्थ बाहरसे तो दूसरा मालूम पड़ता था लेकिन भीतर कुछ और ही होता, अर्थात् गम्भीर अर्थ होता।[58] स्वयं उग्रश्रवाने और भी एक रहस्योद्घाटन किया कि इस ग्रन्थमें 8800 श्लोक ऐसे हैं, जिनका अर्थ या तो कृष्णद्वैपायन व्यास समझते हैं अथवा शुकदेव जी समझते हैं। सञ्जय समझते हैं या नहीं, इस विषयमें सन्देह है। ये कूट श्लोक इतने गुँथे हुए हैं और गम्भीरार्थक हैं कि आजतक भी उनका रहस्यभेदन नहीं किया जा सका है।"[59]

[महाभारतका नामकरण]

आदिपर्वमें कहा गया कि प्राचीन कालमें सब देवताओंने इकट्ठे होकर तराजूके एक पलड़ेपर चारों वेदोंको रखा और दूसरे पलड़ेपर महाभारतको रखा। परन्तु जब यह चारों वेदोंकी अपेक्षा अधिक भारी निकला तभीसे संसारमें यह महाभारतके नामसे कहा जाने लगा। सत्यकी

---

57. व्यासोऽप्युवाच तं देवमबुद्ध्वा मा लिख क्वचित्। ओमित्युक्त्वा गणेशोऽपि बभूव किल लेखकः (महाआदि॰ 1.79)।
58. ग्रन्थग्रन्थिं तदा चक्रे मुनिर्गूढं कुतूहलात्। यस्मिन् प्रतिज्ञया प्राह मुनिर्द्वैपायनस्त्विदम् (महाआदि॰ 1.80)।
59. अष्टौ श्लोकसहस्राणि अष्टौ श्लोकशतानि च। अहं वेद्मि शुको वेत्ति सञ्जयो वेत्ति वा न वा।। तच्छ्लोककूटमद्यापि ग्रथितं सुदृढं मुने। भेत्तुं न शक्यतेऽर्थस्य गूढत्वात् प्रश्रितस्य च (महाआदि॰ 1.81-82)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तराजूपर तौलनेसे यह ग्रन्थ महत्त्व, गौरव अथवा गम्भीरतामें वेदोंसे भी अधिक सिद्ध हुआ।[60] अत: महत्ता, भार अथवा गौरवकी विशेषतासे ही इसको महाभारत कहते हैं।[61] एक अन्य निरुक्तिके अनुसार भरतवंशियोंके महान् जन्म-वृत्तान्तका वर्णन होनेसे इस ग्रन्थको महाभारत कहा गया।[62] स्वर्गारोहण पर्वमें रोमहर्षणके पुत्र उग्रश्रवा (सौति) ने अन्यत्र इसे जय नामसे सम्बोधित किया।[63]

कृष्णद्वैपायन व्यासके द्वारा प्रकट होनेके कारण "कृष्णादागत: कार्ष्ण:" इस व्युत्पत्तिके अनुसार यह महाभारत रूपी इतिहास कार्ष्णवेदके नामसे भी प्रसिद्ध हुआ।[64]

[महाभारतका प्रयोजन]

महाभारतमें हमें उग्रश्रवाके मुखसे यह जानकारी मिलती है, क्यों भगवान् व्यासको महाभारत लिखनेकी आवश्यकता हुई। स्वर्गारोहणपर्वमें उग्रश्रवाने स्पष्ट किया कि मुनिवर व्यासने दिव्य दृष्टिसे देखकर महात्मा

---

60. एकतश्चतुरो वेदान् भारतं चैतदेकत:।। पुरा किल सुरै: सर्वै: समेत्य तुलया धृतम्। चतुर्भ्य: सरहस्येभ्यो वेदेभ्यो ह्यधिकं यदा।। तदा प्रभृति लोकेऽस्मिन् महाभारतमुच्यते। महत्त्वे च गुरुत्वे च ध्रियमाणं यतोऽधिकम् (महाआदि॰ 1. 271-273)।
61. महत्त्वाद् भारवत्त्वाच्च महाभारतमुच्यते। निरुक्तमस्य यो वेद सर्वपापै: प्रमुच्यते (महाआदि॰ 1.274, महास्वर्गारोहण॰ 5.45)।
62. भरतानां महज्जन्म महाभारतमुच्यते (महाआदि॰ 62.39, महास्वर्गारोहण॰ 5.44)।
63. जयाख्यं भारतं महत् (महास्वर्गारोहण॰ 5.49)। जयो नामेतिहासोऽयम् (महास्वर्गारोहण॰ 5.51)।
64. कार्ष्णवेदमिमं सर्वम् (महास्वर्गारोहण॰ 5.41)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पाण्डवों तथा अन्य प्रचुर धनसम्पन्न राजाओंकी कीर्तिका प्रसार करनेके लिए इस इतिहासकी रचना की।[65]

[महाभारतकी विशेषताएँ]

महाभारत एवं पुराणोंमें जब भी महाभारतके बारमें ऋषियोंके बीच आपसमें संवाद होता है तथा किसी विषयका उपक्रम किया जाता है, उस समय ऋषियोंने व्यास द्वारा विरचित महाभारतकी विशेषताओंका भावविभोर होकर वर्णन किया है।

महाभारतके प्रारम्भमें ही पुराणोंके जानकार एवं कथावाचक लोमहर्षणके पुत्र उग्रश्रवा सौति नैमिषारण्यमें आते हैं। ऋषियोंके द्वारा यह पूछनेपर कि आपका शुभागमन कहाँसे हो रहा है, इस प्रश्नके उत्तरमें उग्रश्रवा परीक्षितके पुत्र जनमेजयके सर्पसत्रकी चर्चा करते हैं और बताते हैं कि यज्ञके समय अवकाश मिलनेपर वैशम्पायनने जनमेजयको जो कथाएँ सुनाई, उसे ही सुनकर मैं आपके पास आ रहा हूँ। इस अवसरपर उग्रश्रवाने महाभारतकी कथाओंको परमपुण्यमयी चित्र-विचित्र अर्थसे युक्त कहा।[66]

इसके पश्चात् उग्रश्रवाके द्वारा यह कहे जानेपर कि यहाँ नैमिषारण्यमें चल रहे यज्ञसत्रमें मैं आपको क्या सुनाऊँ, ऋषियोंने

65. नैकतन्त्रविबुद्धेन दृष्ट्वा दिव्येन चक्षुषा। कीर्तिं प्रथयता लोके प्रथतया लोके पाण्डवानां महात्मनाम्। अन्येषां क्षत्रियाणां च भूरिद्रविणतेजसाम् (महास्वर्गारोहण॰ 5.38-39)।

66. कृष्णद्वैपायनप्रोक्ताः सुपुण्याः विविधाः कथाः।। कथिताश्चापि विधिवद् या वैशम्पायनेन वै। श्रुत्वाऽहं ता विचित्रार्था महाभारतसंश्रिताः (महाआदि॰ 1. 10-11)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अद्भुतकर्मा व्यासकी संहिता (महाभारत) को सुननेकी इच्छा व्यक्त की और नैमिषारण्यमें स्थित उन ऋषियोंने उस संहिताकी अनेक विशेषताओंका वर्णन किया। उन्होंने उसे प्राचीन इतिहासरूप पुराण कहा और यह कहा कि देवताओं और ऋषियोंने अपने-अपने लोकमें सुनकर जिसकी भूरि-भूरि प्रशंसा की, जो आख्यानोंमें सर्वश्रेष्ठ है, जिसका एक-एक पद, वाक्य और पर्व विचित्र शब्दविन्यास और रमणीय अर्थसे परिपूर्ण है, जिसमें आत्मा-परमात्माके सूक्ष्म स्वरूपका निर्णय किया गया है एवं उनके अनुभवके लिए अनुकूल युक्तियाँ भरी हुई हैं और जो सम्पूर्ण वेदोंके तात्पर्यानुकूल अर्थसे अलंकृत है, जो शास्त्रोंके अभिप्रायके अनुकूल तथा उनसे समर्थित है, जिसमें पदों एवं वाक्योंकी व्युत्पत्तियाँ हैं, जो चारों वेदोंके अर्थोंसे भरी हुई है, जो पुण्यस्वरूपा है, जो पाप और भयका नाश करने वाली है और जिसका कथन व्यासकी आज्ञासे वैशम्पायनने जनमेजयके यज्ञमें किया।[67]

ऋषियोंके द्वारा इस रूपमें महाभारतकी विशेषताओंका कथन करनेपर उग्रश्रवा भी उससे सहमत दिखाई पड़ते हैं और कहते हैं – इस महाभारतकी तीनों लोकोंमें एक महान् ज्ञानके रूपमें प्रतिष्ठा है। ब्राह्मणादि द्विजाति संक्षेप और विस्तार दोनों ही रूपोंमें अध्ययन और

---

67. द्वैपायनेन यत् प्रोक्तं पुराणं परमर्षिणा। सुरैर्ब्रह्मर्षिभिश्चैव श्रुत्वा यदभिपूजितम्।। तस्याख्यानवरिष्ठस्य विचित्रपदपर्वणः। सूक्ष्मार्थन्याययुक्तस्य वेदार्थैर्भूषितस्य।। भारतस्येतिहासस्य पुण्यां ग्रन्थार्थसंयुताम्। संस्कारोपगतां ब्राह्मीं नानाशास्त्रोपबृंहिताम्।। जनमेजयस्य यां राज्ञो वैशम्पायन उक्तवान्। यथावत् स ऋषिस्तुष्ट्या सत्रे द्वैपायनाज्ञया।। वेदैश्चतुर्भिः संयुक्तां व्यासस्याद्भुतकर्मणः। संहितां श्रोतुमिच्छामः पुण्यां पापभयापहाम् (महाआदि॰ 1.17-21)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अध्यापनकी परम्पराके द्वारा इसे अपने हृदयमें धारण करते हैं।[68] यह शुभ शब्दविन्याससे अलंकृत है तथा वैदिक-लौकिक या संस्कृत-प्राकृत संकेतोंसे सुशोभित है। नाना प्रकारके छन्दोंसे युक्त है तथा विद्वानोंको प्रिय है।[69] इसी प्रकार मार्कण्डेयपुराणके प्रारम्भमें ही जैमिनि महाभारतसे सम्बन्धित पाँच प्रश्नोंको मार्कण्डेय मुनिके समक्ष रखते हुए उसकी विशेषताओंके बारेमें इस प्रकार निरूपण करते हैं - यह महाभारत साधु शब्दोंसे सुशोभित, पूर्वपक्ष तथा उत्तरपक्षसे समन्वित तथा पञ्चमवेदस्वरूप तालाब, मधुरशब्दरूप महाहंस, महाआख्यानरूपी कमलोंसे शोभायमान तथा विस्तीर्ण कथारूपी जलसे परिपूर्ण है।[70]

महाभारतके आदिपर्वमें यह प्रसंग आता है कि जब वेदव्यास महाभारतकी रचनाके बारेमें सोच ही रहे थे, उसी समय अचानक ब्रह्मा व्यासके समीप पहुँचते हैं और व्यास उन्हें महाभारतके बारेमें जानकारी देते हैं। उस समय ब्रह्माने व्याससे महाभारतरूपी महाकाव्यके बारेमें जानकर अपने उद्‌गार उनके सम्मुख इस प्रकार व्यक्त किए कि जिस प्रकार ब्रह्मचर्य, वानप्रस्थ तथा संन्यास ये तीनों आश्रम गृहस्थाश्रमसे आगे नहीं बढ़ सकते, उसी प्रकार संसारके बड़े-से-बड़े कवि भी इस काव्यसे बढ़कर कोई रचना नहीं कर सकेंगे।[71] निश्चित ही स्वयं ब्रह्मा जिसके

---

68. इदं तु त्रिषु लोकेषु महज्ज्ञानं प्रतिष्ठितम्। विस्तरैश्च समासैश्च धार्यते यद् द्विजातिभिः (महाआदि॰ 1.27)।
69. अलंकृतं शुभैः शब्दैः समयैर्दिव्यमानुषैः। छन्दोवृत्तैश्च विविधैरन्वितं विदुषां प्रियम् (महाआदि॰ 1.28)।
70. मार्कण्डेयपु॰ (1.2-11)।
71. अस्य काव्यस्य कवयो न समर्था विशेषणे। विशेषणे गृहस्थस्य शेषास्त्रय इवाश्रमाः (महाआदि॰ 1.73)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

बारेमें ऐसा कह रहे हैं, उसकी विशेषताओंको बताते हुए यदि ऋषि समुदाय भाव-विभोर हो उठता हो तो यह आश्चर्यकी बात नहीं है। व्यासरचित महाभारत सचमुच इन्हीं विशेषताओंसे मण्डित है, इसमें जरा भी अतिशयोक्ति नहीं।

[महाभारतकी महिमा]

महामुनि व्यासने जिस महाभारतको तीन वर्षमें पूरा किया[72], उसकी महिमाको यदि संक्षेपमें, साररूपमें कहा जाए तो यह गम्भीर अर्थसे परिपूर्ण तथा वेदकी समानता करने वाला ग्रन्थ है।[73] सौतिके मुखसे निकले दो श्लोकोंमें महाभारतकी सम्पूर्ण महिमाका दिग्दर्शन हो जाता है, एक तो यह है कि अठारह पुराण, सम्पूर्ण धर्मशास्त्र तथा छहों अंगों सहित चारों वेद एक ओर तथा केवल महाभारत दूसरी ओर, यह अकेला ही उन सबके बराबर है।[74] दूसरा यह है कि धर्म, अर्थ, काम और मोक्षके विषयमें जो कुछ महाभारतमें कहा गया है, वही अन्यत्र भी कहा गया है। जो इसमें नहीं है, वह कहीं भी नहीं है।[75]

[महाभारतका सारतत्त्व]

जिस प्रकार वाल्मीकिरामायणका सार "रामादिवर्तितव्यं न रावणादिवत्" अर्थात् हमें राम आदिके समान आचरण करना चाहिए,

---

72. त्रिभिर्वर्षैरिदं पूर्णं कृष्णद्वैपायनः प्रभुः (महास्वर्गारोहण॰ 5.48)।
73. इतिहासमिमं पुण्यं महार्थं वेदसम्मितम् (महास्वर्गारोहण॰ 5.57)।
74. अष्टादशपुराणानि धर्मशास्त्राणि सर्वशः। वेदाः साङ्गास्तथैकत्र भारतं चैकतः स्थितम् (महास्वर्गारोहण॰ 5.46)।
75. धर्मे चार्थे च कामे च मोक्षे च भरतर्षभ। यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न कुत्रचित् (महास्वर्गारोहण॰ 5.50)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रावण आदिकी तरह नहीं, इसी प्रकार भगवान् व्यासने महाभारतका जो सारतत्त्व अपने मुखसे कहा, उसीको स्वर्गारोहणपर्वमें सौतिने इस रूपमें प्रस्तुत किया है - मनुष्य इस जगत् में हजारों माता-पिताओं तथा सैकड़ों स्त्री-पुत्रोंके संयोग-वियोगका अनुभव कर चुके हैं, करते हैं तथा करते रहेंगे।[76] अज्ञानी पुरुषको प्रतिदिन हर्षके हजारों अवसर और भयके सैकड़ों अवसर प्राप्त होते रहते हैं, किन्तु विद्वान् पुरुषके मनपर उनका कोई प्रभाव नहीं पड़ता है।[77] मैं अपने दोनों हाथ ऊपर उठाकर पुकार-पुकारकर कह रहा हूँ, किन्तु मेरी बात कोई सुनता ही नहीं। (मेरी बात यह है कि) धर्मसे मोक्ष तो सिद्ध होता ही है, अर्थ और काम भी सिद्ध होते हैं, तो भी लोग उसका सेवन क्यों नहीं करते।[78] कामनासे, भयसे, लोभसे अथवा प्राण बचानेके लिए भी धर्मका त्याग न करे। धर्म नित्य है और सुख-दुःख अनित्य। इसी प्रकार जीवात्मा नित्य है और उसके बन्धनका हेतु अनित्य।[79]

वस्तुतः व्यासकी दृष्टिमें महाभारतका सारतत्त्व धर्म ही है। धर्मको लेकर ही तो धर्मक्षेत्रमें धर्मयुद्ध लड़ा गया।

---

76. मातापितृसहस्राणि पुत्रदारशतानि च। संसारेष्वनुभूतानि यान्ति यास्यन्ति चापरे (महास्वर्गारोहण॰ 5.60)।
77. हर्षस्थानसहस्राणि भयस्थानशतानि च। दिवसे दिवसे मूढमाविशन्ति न पण्डितम् (महास्वर्गारोहण॰ 5.61)।
78. ऊर्ध्वबाहुर्विरौम्येष न च कश्चित् शृणोति मे। धर्मादर्थश्च कामश्च स किमर्थं न सेव्यते (महास्वर्गारोहण॰ 5.62)।
79. न जातु कामान्न भयान्न लोभाद् धर्मं त्यजेज्जीवितस्यापि हेतोः। नित्यो धर्मः सुखदुःखे त्वनित्ये जीवो नित्यो हेतुरस्य त्वनित्यः (महास्वर्गारोहण॰ 5.63)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

महाभारतमें धृतराष्ट्र, स्वयं भगवान् व्यास और अर्जुनने यह स्वीकार किया कि जिस पक्षमें धर्म होता है उसी पक्षकी जीत होती है, इसीलिए महाभारतमें चार स्थानोंपर "यतो धर्मस्ततो जयः" का उल्लेख होता है।[80]

धर्मकी अधिकता अर्थात् उसका बल[81] अनुभव करना हो तो हमें महाभारत जैसे परम पवित्र ग्रन्थका अध्ययन-मनन करना ही होगा।

---

80. महाउद्योग० (39.9), महाभीष्म० (2.14 तथा 21.11), महाद्रोण० (183.66)।
81. नूनं धर्मस्ततोऽधिकः (महास्त्री० 14.11)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

विष्णुके अंशावतार वेदव्यासकी गुरुरूपमें प्रतिष्ठा

जिनके जन्म और कर्म दोनोंही दिव्य हों, तप करना ही जिनके जीवनका प्रधान लक्ष्य हो, उस कोटिमें यदि सर्वप्रथम हमें किन्हींका स्मरण होता है तो वे भगवान् वेदव्यास ही हैं।

केवल वेदव्यास ही नहीं, उनके पूर्वजोंमें महर्षि पराशर, शक्ति, वशिष्ठ और प्रजापति ब्रह्मा तथा व्यासके बाद अवधूत शिरोमणि शुकदेव इत्यादिके दिव्य जन्म एवं कर्मपर दृष्टिपात करें तो भगवान् वेदव्यास और भी अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाते हैं।

भगवान् वेदव्यासका जन्म उन पराशर मुनिसे हुआ, जिनके मुखकमलसे गर्भमें ही वैदिक ऋचा निकली थी, जिसको सुनकर महर्षि वशिष्ठ आश्चर्यचकित हो गए थे। पराशरकी पत्नी सत्यवती स्वयं वसुकी पुत्री थी, पतिकी अनुकम्पासे उन्हें नवयौवन, सुन्दर रूप तथा शरीरमें दिव्य सुगन्धिकी प्राप्ति हुई थी। इन्हीं दिव्य गुणोंसे आकर्षित होकर सत्यवती बादमें शान्तनुकी राजमहिषी बनी। अतः दिव्य जन्म-कर्मसे विभूषित माता-पिताकी सन्तान वेदव्यास भी अनेकानेक दिव्य कर्मोंसे विभूषित हुए।

वेदोंका विभाजन, पुराण एवं महाभारत जैसे ग्रन्थोंका प्रणयन करनेके कारण वेदव्यासकी ऐसी प्रसिद्धि हुई कि वे सदा-सदाके लिए अमर हो गए। महत्तर कार्योंको निष्पन्न करनेके कारण वेदव्यास भगवान् विष्णुके अंशावतारके रूपमें उद्घोषित हुए। पुराणोंमें अनेक प्रसंगोंमें उन्हें भगवान् विष्णुका अंशावतार कहा गया।

श्रीमद्भागवतमें भगवान्के सत्रहवें अवतारके रूपमें व्यासके आविर्भावका वर्णन आया है और कहा गया कि लोगोंकी समझ एवं

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

धारणा शक्ति कम होनेके कारण वेदव्यासने वेदरूपी वृक्षकी अनेक शाखाएँ बनायी।[1]

भगवान्‌का यह अंशावतार इस कलियुगसे पहले द्वापर युगमें ही हुआ, ऐसा नहीं है। व्यासके रूपमें भगवान्‌का यह अवतार प्रत्येक कल्पके प्रत्येक द्वापरमें होता है। इसका उल्लेख श्रीमद्‌भागवतमें ही किया गया है कि सत्यवतीसे व्यासके रूपमें भगवान् प्रत्येक कल्पमें अवतरित होते हैं और वेदरूपी वृक्षका विभिन्न शाखाओंके रूपमें विभाजन करते हैं।[2] श्रीमद्‌भागवतके द्वादश स्कन्धमें इसी विषयको पुनः पुष्ट करते हुए कहा गया कि ब्रह्मा-शङ्कर और लोकपालोंकी प्रार्थनापर इस वैवस्वत मन्वतरमें धर्मकी रक्षाके लिए भगवान् ने पराशर द्वारा सत्यवतीके गर्भसे अपने अंशांश कलास्वरूप व्यासके रूपमें अवतार लिया।[3] स्कन्दपुराणके मानसखण्डमें सूतने व्यासको विष्णुका अंशरूप बताया तथा वेदोंके चार भाग करके उन्हें अपने शिष्योंको पढ़ानेकी बात की।[4] शिवपुराणके अनुसार महर्षि पराशरने सत्यवतीको पहले ही बता दिया था कि होने वाला पुत्र विष्णुका अंशावतार है।[5] शिवपुराणमें ही

1. ततः सप्तदशे जातः सत्यवत्यां पराशरात्। चक्रे वेदतरोः शाखा दृष्ट्वा पुंसोल्पमेधसः (श्रीमद्‌भागवत॰ 1.3.21)।
2. कालेन मीलितधियामवमृश्य नृणां स्तोकायुषां स्वनिगमो बत दूरपारः। आविर्हितस्त्वनुयुगं स हि सत्यवत्यां वेदद्रुमं विटपशो विभजिष्यति स्म (श्रीमद्‌भागवत॰ 2.7.36)।
3. पराशरात् सत्यवत्यामंशांशकलया विभुः। अवतीर्णो महाभाग वेदं चक्रे चतुर्विधम् (श्रीमद्‌भागवत॰ 12.6.49)।
4. विष्णोरंशोमुनिर्जातः सत्यवत्यां पराशरात्। विभज्य वेदांश्चतुरः शिष्यानध्यापयत् पुरा (देवीमाहात्म्य॰ 1.14)।
5. विष्ण्वंशसम्भवः पुत्रो भविता ते मयायशाः (शिवपुउमा॰ 44.33)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अन्यत्र सूतने द्वापरके अन्तमें विष्णु ही व्यासके रूपमें अवतार लेते हैं, यह विषय स्पष्ट किया।[6] व्यासही साक्षात् नारायण हैं यह बात मत्स्यपुराणमें भगवान् शिवने पार्वतीको बताई।[7]

विष्णुपुराणमें मुनि पराशरने एक स्थानपर स्पष्ट किया कि विष्णु ही द्वापरमें वेदव्यासका रूप धारण करके वेदके चार भाग करते हैं तथा वेदको सैकड़ों शाखाओंमें बाँटकर उसका अत्यन्त विस्तार करते हैं।[8] अन्यत्र दूसरे स्थानपर वेदविभाजनका प्रयोजन बताते हुए कहते हैं कि वेदव्यास विष्णुके अवतारके रूपमें अवतरित होकर संसारके कल्याणके लिए एक वेदके अनेक भेद करते हैं। मनुष्योंके बल, वीर्य और तेजको अल्प जानकर समस्त प्राणियोंके हितके लिए वेदोंका विभाग करते हैं। पराशर मुनि इस अवसरपर व्यासको मधुसूदनकी साक्षात् मूर्त्ति बतलाते हैं।[9] गर्गसंहितामें तो प्रारम्भमें ही व्यासको "शार्ङ्गधन्वावतारः" कहकर मंगलाचरण किया गया है।[10] इस प्रकार एकस्वरसे चाहे सूत हों, चाहें

6. द्वापरान्तेषु विश्वात्मा विष्णुर्विश्वम्भरः प्रभुः। व्यासनाम्ना चरत्यस्मिन्नवतीर्य महीतले (शिवपुवायवीय॰ 1.34)।
7. कृष्णद्वैपायनं व्यासं विद्धि नारायणं प्रिये (मत्स्यपु॰ 185.30)।
8. वेदमेकं चतुर्भेदं कृत्वा शाखाशतैर्विभुः। करोति बहुलं भूयो वेदव्यासस्वरूपधृक् (विष्णुपु॰ 3.2.58)।
9. द्वापरे द्वापरे विष्णुर्व्यासरूपी महामुने। वेदमेकं सुबहुधा कुरुते जगतो हितः। वीर्यं तेजो बलं चाल्पं मनुष्याणामवेक्ष्य च। हिताय सर्वभूतानां वेदभेदान् करोति सः। ययासौ कुरुते तन्वा वेदमेकं पृथक् प्रभुः। वेदव्यासाभिधाना तु सा च मूर्त्तिर्मधुद्विषः (विष्णुपु॰ 3.3.5-7)।
10. वदनकमलनिर्यद् यस्य पीयूषमाद्यं पिबति जनवरोऽयं पातु सोऽयं गिरं मे। बदरवनविहारः सत्यवत्याः कुमारः प्रणतदुरितहारः शार्ङ्गधन्वावतारः (गर्गसंहिता प्रथमोऽध्यायः, मङ्गलाचरण)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पराशर हों तथा चाहें भगवान् शिव हों अथवा अन्य दूसरे भी कोई हों, व्यास विष्णुके अवतारके रूपमें सर्वमान्य सिद्ध होते हैं।

जिन वेदव्यासकी इस रूपमें मान्यता हो, प्रणम्य व वन्दनीय होनेके साथ-साथ उनकी गुरु रूपमें प्रतिष्ठा होना स्वाभाविक ही है। यह बात कहने की नहीं है कि समस्त भारतीय वाङ्मयमें गुरुका कितना गौरवमय स्थान है तथा उनकी कितनी महिमा है। संक्षेपमें कहा जाए तो ज्ञानप्राप्तिके लिए गुरुकी आवश्यकता होती ही है। बिना गुरुके ज्ञान होना सम्भव नहीं है।[11]

भगवान् वेदव्यासकी गुरु रूपमें प्रतिष्ठा इसलिए है, क्योंकि उन्होंने न केवल वेदका विभाजन किया, अपितु स्वयं योग्य शिष्योंको उन वेदोंका अध्यापन भी कराया। वैशम्पायन, जैमिनि, सुमन्तु, पैल, शुकदेव आदि उनके योग्य शिष्य थे। वेदव्यासने पैलको ऋग्वेद, वैशम्पायनको यजुर्वेद, जैमिनिको सामवेद तथा सुमन्तुको अथर्ववेद पढ़ाया।[12] लोमहर्षणको पुराणसंहिता तथा शुकदेवको श्रीमद्भागवतका अध्यापन किया। इसीलिए शुकदेव, लोमहर्षण, सूत आदि शिष्य व्यासको प्रणाम करते हुए तथा गुरु रूपमें स्मरण करते हुए दृष्टिगोचर होते हैं।

व्यासके परम प्रिय शिष्य वैशम्पायन वेदव्यासको स्मरण करते हुए अपने आपको उनकी महिमाके कारण सर्वज्ञसे कम नहीं समझते, ऐसा जनमेजयने महसूस किया, जब वे उनसे प्रश्न पूछते हैं।[13] वैशम्पायनने

---

11. न विना गुरुसम्बन्धं ज्ञानस्याधिगमः स्मृतः (महाशान्ति॰ 326.22)।
12. वेदानध्यापयामास महाभारतपञ्चमान् (महाशान्ति॰ 340.21)।
13. एतदिच्छाम्यहं श्रोतुं सर्वविच्चासि मे मतः। महर्षिणाभ्यनुज्ञातो व्यासेनाद्भुतकर्मणा (महास्वर्गारोहण॰ 1.2)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वेदव्यासके लिए गुरु एवं उपाध्याय दोनों शब्दोंका प्रयोग किया।[14] शान्तिपर्वमें भीष्मने युधिष्ठिरके प्रश्नके उत्तरके रूपमें व्यास-शुकदेव संवाद प्रस्तुत किया, जिसमें भगवान् व्यासने धर्मशास्त्रीय तथा अनेक दार्शनिक विचारोंको शुकदेवके सामने रखा। अन्तमें शुकदेव अपने पिताकी वाणीसे प्रभावित होकर कहते हैं - मैं आप जैसे गुरुके उपदेशसे पवित्र हो गया हूँ तथा मुझे जगत् के वृत्तान्तका भी ज्ञान हो गया है। अर्थात् लौकिक नीति-रीति समझने लगा हूँ। अब मैं धर्माचरणके द्वारा बुद्धिका संस्कार करके परमात्माका दर्शन करूँगा।[15]

गणेशपुराणमें भगवान् वेदव्यास बारह वर्षों तक गणेशके एकाक्षर मन्त्रकी साधना करनेके उपरान्त गणेशके वरदानसे अट्ठारह पुराणोंकी रचना करनेकी सामर्थ्य प्राप्त करते हैं। इस प्रसंगमें गणेशने उन्हें गुरुओंका गुरु होनेका वरदान दिया।[16] जब धृतराष्ट्र वनमें जाने लगते हैं, उस समय प्रजाके प्रतिनिधिके रूपमें साम्बने व्यासको परम गुरुके रूपमें बताकर उनकी आज्ञाका पालन करनेके लिए कहा।[17] युद्धके पहले धृतराष्ट्रने व्यासको कहा था - आप ही हम भरतवंशियोंकी धर्म-प्रवृत्ति,

---

14. एवं मेऽकथयद् राजन् पुरा द्वैपायनो गुरुः (महाशान्ति॰ 340.112)। स चास्माकमुपाध्यायः (महाशान्ति॰ 340.111)
15. लोकवृत्तान्ततत्त्वज्ञः पूतोऽहं गुरुशासनात्। कृत्वा बुद्धिं विमुक्तात्मा द्रक्ष्याम्यात्मानमव्ययम् (महाशान्ति॰ 242.4)।
16. सर्वमान्यो व्यास नामा सर्वपावनपावनः। अपरोक्षज्ञानवांश्च भविष्यसि गुरोर्गुरुः। नारायणसमः ख्यात्या गुणैः कीर्त्या श्रियाऽपि च। अष्टादशपुराणानां कर्त्ता त्वं हि भविष्यसि (गणेशपु॰ 2.150.13-14)।
17. यथा ब्रवीति धर्मात्मा मुनिः सत्यवतीसुतः। तथा कुरु महाराज स हि नः परमो गुरुः (महाआश्रमवासिक॰ 10.17)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

यश और कीर्त्तिके हेतु हैं। आप कौरवों-पाण्डवों, दोनोंके माननीय पितामह हैं।[18]

युधिष्ठिर युद्धके बाद यह सोचकर शोकसन्तप्त हो उठते हैं कि तुच्छ पृथिवीके लिए इतना बड़ा नरसंहार हुआ तथा हम लोग बन्धु-बान्धवोंसे हीन हो गए। अन्तमें युधिष्ठिर इतने शोक संतप्त हो जाते हैं कि राज्य ग्रहण करनेके बदले संन्यासके पश्चात् वनमें जानेकी बात करने लगते हैं। इस अवसरपर जब अर्जुन, युधिष्ठिर, भीमसेन, नकुल, सहदेव, द्रौपदी, मुनिवर देवस्थान तथा व्यासके समझानेका भी कुछ प्रभाव युधिष्ठिरपर नहीं पड़ता, तब अन्तमें कृष्ण कड़े शब्दोंका प्रयोग करते हुए कहते हैं - युधिष्ठिर! अब आप अत्यन्त हठपूर्वक शोकको ही न पकड़े रहें। भगवान् व्यास जो आज्ञा देते हैं, वही करें।[19] अमित तेजस्वी गुरु व्यासकी आज्ञासे हम सुहृदोंका तथा द्रौपदीका प्रिय कीजिए तथा सम्पूर्ण जगत् के हितसाधनमें लग जाइए।[20] भगवान् कृष्ण स्वयं अपने मुखसे व्यासको गुरु रूपमें सम्बोधित कर रहे हैं।

धृतराष्ट्रको युद्धका वृत्तान्त सुनानेसे पहले सञ्जय सर्वप्रथम व्यासका ही स्मरण करते हैं और उनकी कृपासे जो दिव्य ज्ञान मिला, इन्द्रियातीत विषयको भी प्रत्यक्ष देखने वाली दृष्टि मिली, दूरसे भी सब कुछ सुननेकी शक्ति, दूसरेके मनकी बातोंको समझ लेनेकी सामर्थ्य,

18. त्वं हि धर्मप्रवृत्तिश्च यशः कीर्त्तिश्च भारती। कुरूणां पाण्डवानां च मान्यश्चापि पितामहः (महाभीष्म॰ 3.62)।

19. नेदानीमतिनिर्बन्धं शोके त्वं कर्तुमर्हसि। यदाह भगवान् व्यासस्तत् कुरुष्व नरोत्तम (महाशान्ति॰ 37.21)।

20. नियोगादस्य च गुरोर्व्यासस्यामिततेजसः। सुहृदामस्मदादीनां द्रौपद्याश्च परंतप। कुरु प्रियममित्रघ्न लोकस्य च हितं कुरु (महाशान्ति॰ 37.24-25)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भूत-भविष्यका ज्ञान, शास्त्रके विपरीत चलने वाले मनुष्योंकी उत्पत्तिका ज्ञान, आकाशमें चलने-फिरनेकी उत्तम शक्ति, युद्धके समय अस्त्रोंसे अपने शरीरके अछूते रहनेका अद्‌भुत चमत्कार आदि शक्तियाँ मिलीं, उन सबका स्मरण करते हैं तथा व्यासको नमस्कार करते हैं।[21]

महाभारतके शान्तिपर्वमें जनमेजयने लोकमें प्रचलित चार प्रकारके ज्ञान (सांख्य, योग, पाञ्चरात्र तथा वेदोंके आरण्यक भाग) का उल्लेख करके यह प्रश्न किया कि क्या ये सब एक ही लक्ष्यका बोध कराते हैं अथवा पृथक्-पृथक् लक्ष्यके प्रतिपादक हैं[22]? इस प्रश्नका उत्तर देनेके पूर्व वैशम्पायनने अज्ञानरूपी अन्धकारको दूर करने वाले ज्ञानसूर्यस्वरूप अपने गुरुदेव व्यासको नमस्कार किया तथा उन्हें पूर्वपुरुष नारायणसे छठी पीढ़ीमें उत्पन्न[23], ऋषियोंके सम्पूर्ण ऐश्वर्यसे सम्पन्न, नारायणके अंशसे समुत्पन्न, अपने पिता पराशरके एक मात्र पुत्र तथा वेदोंके महान् भण्डारके रूपमें बताया।[24]

---

21. नमस्कृत्वा पितुस्तेऽहं पाराशर्याय धीमते। यस्य प्रसादाद् दिव्यं तत् प्राप्तं ज्ञानमनुत्तमम्। दृष्टिश्चातीन्द्रिया राजन् दूराच्छ्रवणमेव च। परचित्तस्य विज्ञानमतीतानागतस्य च। व्युत्थितोत्पत्तिविज्ञानमाकाशे च गतिः शुभा। अस्त्रैरसङ्गो युद्धेषु वरदानान्ममहात्मनः (महाभीष्म॰ 15.7-9)।
22. किमेतान्येकतिष्ठानि पृथङ्निष्ठानि वा मुने। प्रब्रूहि वै मया पृष्टः प्रवृत्तिं च यथाक्रमम् (महाशान्ति॰ 349.2)।
23. नारायण, ब्रह्मा, वशिष्ठ, शक्ति, पराशर और व्यास। इस प्रकार व्यास जी छठी पीढ़ीमें उत्पन्न हुए।
24. जज्ञे बहुज्ञं परमत्युदारं यं द्वीपमध्ये सुतमात्मयोगात्। पराशरात् सत्यवती महर्षिं तस्मै नमोऽज्ञानतमोनुदाय।। पितामहाद् यं प्रवदन्ति षष्ठं महर्षिमार्षेयविभूति-युक्तम्। नारायणस्यांशजमेकपुत्रं द्वैपायनं वेद महानिधानम् (महाशान्ति॰ 349. 3-4)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

शान्तिपर्वमें वैशम्पायन जनमेजयके भाग्यकी सराहना करते हैं और कहते हैं – ये जो हम लोगोंके गुरु तथा गन्धवती (सत्यवती) के पुत्र महर्षि व्यास बैठे हैं, इन्हींसे मैंने यह सब सुना है तथा मेरे द्वारा तुम्हें यह (नारायणकी महिमासे सम्बन्धित) उपाख्यान कहा गया।[25] महाभारतकी रचना करने जैसे गुरुतर कार्यका स्मरण करते हुए वैशम्पायनने इसके उपरान्त कहा – तुम्हें कृष्णद्वैपायन व्यासको इस भूतलपर नारायणका ही स्वरूप समझना चाहिए, भला भगवान् के सिवा दूसरा कौन महाभारतका कर्त्ता हो सकता है।[26]

---

25. य एष गुरुरस्माकमृषिर्गन्धवतीसुतः। तेनैतत् कथितं तात माहात्म्यं परमव्ययम्। तस्माच्छ्रुतं मया चेदं कथितं च तवानघ (महाशान्ति० 346.8-9)।
26. कृष्णद्वैपायनं व्यासं विद्धि नारायणं भुवि। को ह्यन्यः पुरुषव्याघ्र महाभारतकृद् भवेत् (महाशान्ति० 346.12)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

व्यासपूर्णिमा एवं गुरुपरम्परा

सम्पूर्ण भारतवर्षमें आषाढ शुक्ल पूर्णिमा भगवान् व्यासके प्राकट्य दिवसके रूपमें मनाई जाती है। आर्ष ग्रन्थोंके आधारपर आषाढ शुक्ल पूर्णिमाके दिन भगवान् व्यासका जन्म हुआ, ऐसा मानकर इस दिन विधि–विधानके साथ व्यासकी पूजा की जाती है।

राम–कृष्णादिके जन्मका उल्लेख जितना विस्तारसे हमें आर्षग्रन्थोंमें मिलता है, व्यासके जन्मकी चर्चा उतने विस्तारमें नहीं मिलती। शुकनिधिने अपने स्वधर्मामृतसिन्धु नामक ग्रन्थमें वेदनिधि नामक ब्राह्मणकी कथाका वर्णन किया है।[1] कथाके अनुसार ब्राह्मणने भगवान् व्यासको श्राद्धमें भोजन कराया और उनसे दस पुत्र होनेका वरदान प्राप्त किया और अन्तमें वेदनिधि नामक ब्राह्मणने पूछा कि आपका दर्शन पुनः कैसे प्राप्त कर सकूँगा। इसपर व्यासने कहा कि यदि मेरा दर्शन प्राप्त करना चाहते हो तो तुम्हें कथावाचककी पूजा करनी चाहिए। वह मेरा ही स्वरूप है।[2] कब पूजा करनी चाहिए, यह पूछनेपर व्यासने अपने जन्मदिन आषाढ शुक्ल पूर्णिमाके दिन पूजन करनेके लिए कहा।[3]

भगवान् व्यासके रूपमें कथावाचकके पूजनकी परम्परा आज भी जाग्रत है। आज भी किसी कथाके प्रारम्भ होनेके पहले कथावाचककी

---

1. पं० उमाशंकर दीक्षितने अपनी पुस्तक ''महर्षि वेदव्यास'' के पृष्ठ 43 पर इस कथाका उल्लेख किया है।
2. शृणु विप्र तवेच्छा चेद् दर्शनार्थं तदा त्वया। पूजनीयो विशेषेण कथावाचयिता स्वयम्।।
3. मम जन्मदिने सम्यक् पूजनीयः प्रयत्नतः। आषाढशुक्लपक्षे तु पूर्णिमायां गुरौ तथा।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पूजा की जाती है तथा जिस आसनपर विराजमान होकर कथावाचक कथा कहते हैं, उसे व्यासपीठ नामसे पुकारा जाता है। व्यासपूर्णिमाके दिन आज भी सभी संन्यासी तथा आध्यात्मिक सन्त जहाँ चातुर्मास्य करते हैं, वहाँ अपने गुरुका और कथावाचकका व्यासके रूपमें पूजन करते हैं तथा व्यासपीठकी स्थापना करते हैं।

आषाढ़ शुक्ल पूर्णिमाके दिन भविष्यपुराणने कोकिला रूप पार्वतीके व्रतका उल्लेख किया तथा वामनपुराणने शिवके शयनोत्सवका उल्लेख किया। इसीके आधारपर निर्णयसिन्धुकारने कोकिलाव्रत तथा शिवशयनोत्सवका विस्तृत रूपमें उल्लेख किया, किन्तु व्यासपूजाके बारेमें केवल ''अत्रैव व्यासपूजोक्ता'' इतना ही कहा है।[1]

धर्मसिन्धु नामक ग्रन्थमें संन्यासियोंके लिए चातुर्मास्यवाससंकल्पका विधान वर्णित है तथा अङ्गके रूपमें व्यासपूजा संन्यासियोंको करनी चाहिए, ऐसा उल्लेख किया।[2]

व्यासपूजाके विधानके सम्बन्धमें कहा गया कि संकल्पके अनन्तर बीचमें कृष्ण और उनके पूर्वकी ओर प्रदक्षिणाक्रमसे वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न और अनिरुद्धका आवाहन करके फिर व्यास तथा उनके पूर्वमें प्रदक्षिणाक्रमसे सुमन्तु, जैमिनि, वैशम्पायन और पैलका आवाहन करे।

इसी क्रममें धर्मसिन्धुकारने भगवान् शङ्कराचार्य तथा पद्मपाद, विश्वरूप, त्रोटक और हस्तामलकके आवाहनका उल्लेख करके उसके

1. निर्णयसिन्धुः (द्वितीय परिच्छेद, पृष्ठसं॰ 219)।
2. धर्मसिन्धुः (द्वितीय परिच्छेद, पृष्ठसं॰ 111)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पश्चात् गुरु, परमगुरु, परात्परगुरु, परमेष्ठिगुरुकी पूजाका विधान तथा अन्तमें देवताओंकी पूजाका विधान किया।[3]

सम्भवतः धर्मशास्त्रोंके प्रभावसे व्यासपूर्णिमाके दिन शंकराचार्यकी चारों पीठोंमें व्यासपूजा तथा शंकराचार्यकी पूजाकी परिपाटी प्रारम्भ हुई और कालान्तरमें पीठमें अभिषिक्त आचार्योंकी पूजाका प्रचलन हुआ। धीरे-धीरे सभी मठों और आश्रमोंमें अपने-अपने आचार्योंकी पूजाका प्रचार हुआ और व्यासपूर्णिमाके स्थानपर गुरुपूर्णिमा कहनेकी परम्परा प्रारम्भ हुई। वर्तमानमें व्यक्तिगत रूपसे तथा सामूहिक रूपसे सभी अपने-अपने आश्रमोंमें, मठोंमें, गुरुकुलोंमें साधक अपने गुरुकी पूजा करके गुरुपूर्णिमाको बड़े धूमधामसे मनाते हैं।

निःसन्देह आध्यात्मिक जगत्में जितना महिमापूर्ण एवं गौरवशाली स्थान गुरुका है, उतना उच्चतर स्थान देवताका भी नहीं। यहाँ गुरुमहिमाका विस्तारपूर्वक वर्णन करना प्रासंगिक नहीं तथापि संक्षिप्तमें इतना कहना अनौचित्यपूर्ण नहीं होगा कि जो गुरुभक्तिविहीन हैं उनके लिए तप, विद्या, व्रत इत्यादि निष्फल ही हैं।[4]

शास्त्रकारोंने गुरुकी भक्तिको कम नहीं आँका, इसीलिए कहा गया है कि नारायणमें, शिवमें, माता-पितामें तथा राजामें जैसी भक्ति की जाती है, वैसी ही भक्ति अपने गुरुदेवमें करनी चाहिए। गुरुमें मनुष्यबुद्धि रखनेसे, मन्त्रको अक्षर समझनेसे तथा यन्त्र तथा मूर्त्तिको केवल पत्थरका टुकड़ा माननेसे साधकका अधोपतन हो जाता है। गुरुकी महिमाका वर्णन

---

3. धर्मसिन्धुः (द्वितीय परिच्छेद, पृष्ठसं॰ 112)।
4. गुरुभक्तिविहीनाय तपो विद्या व्रतं कुलम्। निष्फलं हि महेशानि केवलं लोकरञ्जनम् (द्र॰ चिदम्बररहस्यम्)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

करते हुए कहा गया कि गुरु ही पिता, गुरु ही माता, गुरु ही देवता, गुरु ही गति हैं। शिव रुष्ट हो जाएँ तो गुरु संकटसे उबार सकते हैं लेकिन गुरु रुष्ट हो जाएँ तो कोई बचाने वाला नहीं।[5]

वस्तुतः गुरुका महत्त्व ऐसे ही साधकवृन्द समझ पाते हैं जिन्हें आध्यात्मिक साधनामें गुरुका निर्देशन प्राप्त हुआ है और गुरुसे निर्देशन प्राप्त करके जो साधनामें अग्रसर होते जाते हैं तथा अन्तमें परम सिद्धिको प्राप्त करते हैं।

---

5. नारायणे महादेवे मातापित्रोश्च राजनि। यथा भक्तिर्भवेद् देवि तथा कार्या निजे गुरौ। गुरौ मनुष्यबुद्धिं तु मन्त्रे चाक्षरबुद्धिताम्। यन्त्रे मूर्त्यां शिलाबुद्धिं कुर्वाणो नरकं व्रजेत्। गुरुः पिता गुरुर्माता गुरुर्देवो गुरुर्गतिः। शिवे रुष्टे गुरुस्त्राता गुरौ रुष्टे न कश्चन (द्र० चिदम्बररहस्यम्)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सन्दर्भग्रन्थ सूची

अष्टाध्यायी प्रकाशक - रामलाल कपूर ट्रस्ट, बहालगढ़ (सोनीपत, हरियाणा) जनवरी, 1989

अग्निपुराण प्रकाशक - गीताप्रेस गोरखपुर, संवत् 2068

नारायणकृतवृत्तिसमेतम् **आश्वलायनगृह्यसूत्रम्** प्रकाशक - आनन्दाश्रम, पुणें, 1978

इतिहास-पुराण का अनुशीलन प्रणेता - श्री रामशंकर भट्टाचार्य, प्रकाशक - इण्डोलाजिकल बुक हाउस, वाराणसी, 1963

श्रीकूर्ममहापुराणम् प्रकाशक - नाग पब्लिशर्स, दिल्ली - 7, 1983

गणेशपुराणम् सम्पादक एवं व्याख्याकार - आचार्य डॉ० महेशचन्द्र जोशी, प्रकाशक - चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी, 2014

श्रीगरुडपुराणम् सम्पादक - डॉ० रामशंकर भट्टोपाध्याय, प्रकाशक - चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी, 1964

श्रीगरुडपुराणम् प्रकाशक - नाग पब्लिशर्स, दिल्ली - 7, 1984

श्रीगर्गसंहिता अनुवादक - पं० श्री रामनारायण दत्त शास्त्री पाण्डेय 'राम', प्रकाशक - गीताप्रेस गोरखपुर, संवत् 2071

हेमाद्रिविरचित **चतुर्वर्गचिन्तामणि** प्रकाशक - चौखम्बा संस्कृत संस्थान, वाराणसी, 1985

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

॥ सन्दर्भग्रन्थ सूची ॥

श्रीमद्देवीभागवतमहापुराण प्रकाशक – गीताप्रेस गोरखपुर, संवत् 2068

धर्मसिन्धुः प्रकाशक – चौखम्बा संस्कृत सीरीज, वाराणसी

निर्णयसिन्धुः सम्पादक – श्रीदौलतराम गौड़, प्रकाशक – ठाकुरप्रसाद एण्ड सन्स बुक्सेलर, वाराणसी, संवत् 2027

श्रीमत्प्रपञ्चसारसारसङ्ग्रहः उत्तरो भागः, गीर्वाणेन्द्रसरस्वतीपादविरचितः, क्षे० शं० सुब्रह्मण्यशास्त्रिणा संशोध्य प्रकाशितः, तञ्जौर सरस्वती महल लाइब्रेरि, तञ्जौर, 1963

ब्रह्मपुराणम् भाषानुवाद – एस०एन० खण्डेलवाल, प्रकाशक – चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी

ब्रह्मवैवर्तपुराणम् सम्पादक – आचार्य जगदीशलालशास्त्री, प्रकाशक – मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 2004

ब्रह्माण्डपुराण के०वी० शर्मणा संशोधितम्, प्रकाशक – कृष्णदास अकादमी, वाराणसी, 1983

श्रीभविष्यमहापुराणम् प्रकाशक – नाग पब्लिशर्स, दिल्ली–7, 1984

भविष्य महापुराण प्रकाशक – खेमराज श्रीकृष्णदास, बम्बई, 1959

श्रीमद्भागवतमहापुराण प्रकाशक – गीताप्रेस गोरखपुर, संवत् 2068

मत्स्यपुराण प्रकाशक – गीताप्रेस गोरखपुर, संवत् 2068

महर्षि वेदव्यास लेखक – पं० उमाशंकर दीक्षित, प्रकाशक – चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

॥ सन्दर्भग्रन्थ सूची ॥

महाभारत प्रकाशक – गीताप्रेस गोरखपुर, संवत् 2067

श्रीःमहाभारतम् नीलकण्ठविरचितभारतभावदीयाख्यटीकया समेतम्, सम्पादक – पण्डित रामचन्द्रशास्त्री किंजवडेकर, प्रकाशक – ओरियण्टल बुक्स रीप्रिण्ट कारपोरेशन, नई दिल्ली, 1979

श्रीमन्महाभारतलक्षालङ्कारः प्रकाशक – महाभारतसंशोधन प्रतिष्ठान, बेङ्गलूरु, 2005

श्रीमार्कण्डेय महापुराणम् प्रकाशक – नाग पब्लिशर्स, दिल्ली – 7

श्रीमार्कण्डेय पुराण रहस्योद्घाटिनी टीका सहित, सम्पादक – गोविन्द शास्त्री दुगवेकर, प्रकाशक–आर्यमहिलाहितकारिणीमहापरिषद्, बनारस, 1931

श्रीवामनपुराण प्रकाशक – गीताप्रेस गोरखपुर, संवत् 2068

श्रीविष्णुपुराण अनुवादक – श्रीमुनिलाल गुप्त, प्रकाशक – गीताप्रेस गोरखपुर, संवत् 1990

श्रीशिवमहापुराणम् टीकाकार – श्रीब्रह्मानन्द त्रिपाठी, प्रकाशक – चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, दिल्ली

स्कन्दमहापुराणम् भाषानुवाद – एस॰एन॰ खण्डेलवाल, प्रकाशक – चौखम्बा संस्कृत सीरीज ऑफिस, वाराणसी

याज्ञिक देवण भट्टोपाध्याय विरचिता **स्मृतिचन्द्रिका** नाग प्रकाशक, दिल्ली – 7, संस्करण 1988

श्रीहरिवंशपुराण प्रकाशक – गीताप्रेस गोरखपुर, संवत् 2068

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

॥ व्यासमन्त्रः ॥

[ऋष्यादयः]

ब्रह्मानुष्टुप्व्यासा ऋष्यादयः। व्यां बीजम्। नमः शक्तिः। बीजेन दीर्घस्वरयुक्तेनाङ्गानि।

[मन्त्रः]

व्यां वेदव्यासाय नमः इति मन्त्रः।

[ध्यानम्]

मुनिव्रातावीतं मुदितधियमम्भोजरुचिर-
द्युतिं व्याख्यामुद्राकलितविलसद् दक्षिणकरम्।
परं जानौ कृत्वा दृढकलितकक्ष्यं कविवरं
समासीनं व्यासं स्मरत निरतं पुण्यचरितम्॥

[जपसंख्या]

अष्टसहस्रं जपेत्।

[पुरश्चरणहोमः]

आज्यसिक्तेन पायसेन दशांशं पुरश्चरणहोमः।

[प्रयोजनम्]

कविताप्रज्ञाव्याख्याश्रीप्रदानप्रधानोऽयं मन्त्रः।

(प्रपञ्चसारसङ्ग्रहे उत्तरो भागः, पृष्ठसं॰ 914)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सन् 1987 में इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय कला केन्द्र, नई दिल्ली की स्थापना भारत सरकार के संस्कृति मन्त्रालय के अन्तर्गत भारतीय मूर्त्त एवं अमूर्त्त कलाओं के अध्ययन, शोध और प्रचार-प्रसार करने वाली एक स्वायत्त संस्थान के रूप में की गयी। संस्था के द्वारा किए जा रहे शोधकार्यों का मुख्य प्रयोजन जीवन के भौतिक एवं आध्यात्मिक पक्ष को समग्र रूप से समझना है। कला से तात्पर्य साहित्य (मौखिक एवं लिखित), दृश्यकला (वास्तुकला, शिल्पकला, चित्रकला, ललितकला, फोटोग्राफी और फिल्म), प्रदर्शन कला (सङ्गीत, नृत्य और नाट्य) के साथ-साथ मेलों, उत्सवों और जीवनशैली के वे सभी घटक हैं, जिनमें कलात्मक आयाम विद्यमान हैं।

भारत के पड़ोसी देशों के साथ-साथ दक्षिण एवं दक्षिणपूर्व एशिया के देशों में भारतीय संस्कृति के प्रभाव का अध्ययन भी इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय कला केन्द्र की गतिविधियों का प्रमुख अङ्ग है। यह संस्था अनुसन्धान, प्रकाशन, प्रशिक्षण, प्रदर्शन और रचनात्मक गतिविधियों के द्वारा सभी सभ्यताओं और संस्कृतियों तक अपने क्षितिज का विस्तार करती है। बहु-विषयक और अन्तरविषयक दोनों प्रकार के मौलिक दृष्टिकोण संस्था के सभी कार्यों में दृष्टिगोचर होते हैं।

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय कला केन्द्र
INDIRA GANDHI NATIONAL CENTRE FOR THE ARTS
11, Mansingh Road, New Delhi-110001
website: www.ignca.gov.in, Facebook: @IGNCA,
Twitter: @igncakd, Instagram: @ignca_delhi

Design by Shriwal Advertising & Designing

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi